प्राविधिक शिक्षा परिषद् उत्तर प्रदेश द्वारा स्वीकृत संशोधित 2019 के नवीनतम् पाठ्यक्रमानुसार

सार्थक

पर्यावरण अध्ययन

(Environmental Studies)

(द्वितीय वर्ष/3rd सेमेस्टर डिप्लोमा इंजी० के सभी ब्रान्चों के छात्रों के लिए एवं मैकेनिकल द्वितीय वर्ष/4th सेमेस्टर के छात्रों के लिए अनिवार्य)

लेखक :
रमा कान्त
प्रवक्ता
डी० एन० पॉलीटेक्निक
मेरठ

प्रकाशक :
जयप्रकाश नाथ पब्लिकेशन्स
गाँधी आश्रम चौराहा
नौचन्दी रोड, मेरठ-251 002 (उ०प्र०)

Scanned by CamScanner

विषय सूची

1. परिचय
(Introduction) 1-36

2. वायु प्रदूषण
(Air Pollution) 37-56

3. जल-प्रदूषण
(Water-Pollution) 57-69

4. ठोस अपशिष्ट प्रबन्ध
(Solid Waste Management) 70-90

5. ध्वनि-प्रदूषण
(Noise Pollution) 91-106

6. पर्यावरणीय कानून
(Environmental Legislation) 107-128

7. ऊर्जा के उपयोग का पर्यावरण पर प्रभाव
(Impact of Energy Usage on Environment) 129-183

● प्रयोगात्मक भाग
(Practicals) 184-216

Scanned by CamScanner

अध्याय

1

परिचय (Introduction)

पारिस्थितिकी (Ecology)—विज्ञान की वह शाखा, जिसके अन्तर्गत पर्यावरण एवं जीवों के परस्पर सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है, पारिस्थितिकी (Ecology) कहलाती है। Ecology शब्द दो ग्रीक शब्दों Oikos तथा logos से मिलकर बना है, जिसमें Oikos का अर्थ है 'रहने का स्थान' तथा logos का अर्थ है 'विज्ञान'। इन दोनों शब्दों को मिलाकर Ecology नामक नया शब्द बनाया गया, जिसका अर्थ है वह आवास, जहाँ जीव बसता है।

थीयोफ्रेस्टस को विज्ञान (पारिस्थितिकी विज्ञान) का जन्मदाता माना जाता है। Ecology के अन्तर्गत समुद्र, मरुस्थल, जंगल आदि सभी क्षेत्र आते हैं, जिसमें मानव-जाति, पेड़-पौधे, जीव-जन्तु आदि एक-दूसरे पर निर्भर होकर भोजन, आवास तथा अन्य कार्यों के लिए पर्यावरणीय सम्बन्ध बनाते हैं।

पारिस्थितिकी को मुख्यत: दो भागों में बांटा गया है—

(i) स्वपारिस्थितिकी (Autoecology) (ii) संपारिस्थितिकी (Synecology)

स्वपारिस्थितिकी (Autoecology)—इसके अन्तर्गत किसी वातावरण विशेष में एक ही प्रजाति के जीवों का पोषण, वृद्धि, जनन, परिवर्धन एवं जीवन-चक्र आदि का अध्ययन किया जाता है।

अत: यह एक जाति के लिए ही उपयुक्त होता है।

संपारिस्थितिकी (Synecology)—इसके अन्तर्गत किसी एक विशेष वातावरण में रहने वाले विभिन्न जीव समुदायों, समष्टियों एवं पारितन्त्र (Ecosystem) में सजीवों के आपसी सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है।

मानव भी पारितन्त्र (Ecosystem) का ही एक भाग है क्योंकि यह भी किसी न किसी प्रकार से पर्यावरण में उपस्थित सभी जीव-जन्तुओं, पेड़-पौधों आदि पर निर्भर करता है।

पारिस्थितिकी तन्त्र (Ecosystem)—Ecosystem, English भाषा के दो शब्दों से मिलकर बना है।

Ecosystem = Eco (परि या चारों ओर)
+ System (तंत्र या व्यवस्था)

अत: पारिस्थितिक तन्त्र एक अन्त:क्रियात्मक एवं आत्मनिर्भर प्राकृतिक व्यवस्था है।

Ecosystem के अन्तर्गत Biotic तथा Abiotic दोनों वातावरण सम्मिलित हैं और ये दोनों एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। इनमें पारस्परिक सम्बन्ध इतना है कि एक के बिना दूसरे का कोई महत्त्व नहीं है।

Components of Ecosystem —

(1) अजैव घटक (ABIOTIC) (2) जैव घटक (BIOTIC)

(1) अजैव घटक (ABIOTIC)

(a) **अकार्बनिक पदार्थ** (Inorganic Matter)—इसके अन्तर्गत N_2, O_2, P, S, H_2 व H_2O हैं। वातावरण में इनका चक्रण होता रहता है, जो जीवन के लिए आवश्यक है।

(i) **जलीय चक्र**—भूमण्डल पर पानी लगभग 73% है। इसका 97% समुद्र में है तथा शेष भाग पृथ्वी के अन्य भागों में निहित है।

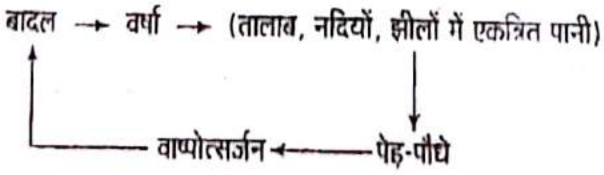

Scanned by CamScanner

(ii) **नाइट्रोजन चक्र**—शरीर में नाइट्रोजन, प्रोटीन के रूप में जीवन दायक है। पेड़-पौधों तथा जानवरों द्वारा इसका अनुपयोगी भाग पृथ्वी पर आता है, जिसका एक चक्र बनता है।

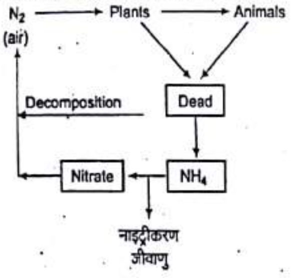

(iii) **कार्बन चक्र (C चक्र)**—वायुमण्डल में C, CO_2 के रूप में लगभग 0·039% है। यह मानवीय क्रियाओं, औद्योगीकरण (Industrialisation), जंगलों के कटाव, ज्वालामुखी आदि से निकलकर वायुमण्डल में मिल जाता है।

जैविक अपघटन से ही लगभग 95% CO_2 gas प्राप्त होती है।

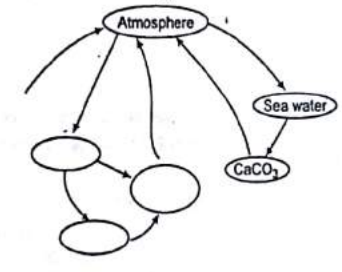

(b) **कार्बनिक घटक** (Organic Matter)—इनमें Carbohydrate व Protein आदि पदार्थ सम्मिलित है। विभिन्न कार्बनिक पदार्थ चक्रण द्वारा जीवीय घटक में प्रवेश कर सरल कार्बनिक पदार्थों में बदल जाते है तथा जीव की मृत्यु के पश्चात् पुन: कार्बनिक पदार्थ वातावरण में मिल जाता है।

(c) **जलवायुवीय तथा भौतिक घटक** (Climatic Components)—इनमें ताप, जल, प्रकाश, वायु, आर्द्रता व मृदा आदि शामिल होते है।

2. **जैव घटक** (BIOTIC)

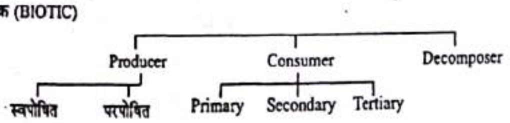

(a) **उत्पादक** (Producer)

(i) **स्वपोषित**—ये हरे पादप एवं बैक्टीरिया है, जो सूर्य के प्रकाश में अकार्बनिक पदार्थों द्वारा जटिल कार्बनिक पदार्थ बनाते है ...

(ii) **परपोषित**—जंतु परपोषित होते हैं और पौधों द्वारा निर्मित कार्बनिक पदार्थों को अपना भोजन बनाते है। अत: इन्हें परपोषित कहते है।

(b) **उपभोक्ता** (Consumer)

(i) **प्राथमिक उपभोक्ता** (Primary Consumer)—वनस्पति का सेवन करने वाले जन्तुओं को शाकाहारी प्राणी कहते है। ये Ecosystem के Primary Consumer है।

Examples—मृग, शावक, चूहा व कीट।

(ii) **द्वितीयक उपभोक्ता** (Secondary Consumer)—ये माँसभक्षी जन्तु होते हैं जो शाकाहारी प्राणियों का भक्षण करते है।

Examples—साँप, लोमड़ी, बिल्ली।

(iii) **तृतीयक उपभोक्ता** (Tertiary Consumer)—ये दूसरे मांसभक्षी प्राणी होते है, जो द्वितीय उपभोक्ताओं या प्राथमिक उपभोक्ताओं का भक्षण करते है।

Examples—शेर, गिद्ध व उल्लू।

(c) **अपघटक** (Decomposer)—ये Ecosystem के सूक्ष्म जीव है, जैसे—मृतजीवी कवक व बैक्टीरिया, जो मृत व क्षय होते हुए उत्पादकों व उपभोक्ता का संक्रमण करके जटिल कार्बनिक पदार्थों को सरल यौगिक में अपघटित कर देते है।

पारिस्थितिक तन्त्र के कार्य (Functions of Ecosystem)

पारिस्थितिक तन्त्र में जैविक व अजैविक घटक आपस में सम्बन्धित होते है। पारिस्थितिक तन्त्र में एक ही समय में मुख्य रूप से दो प्रक्रियाएँ चल रही होती है—

1. ऊर्जा का प्रवाह (Energy Flow)
2. जैव-भू-रासायनिक चक्र (Bio-Geo-Chemical Cycle)

ऊर्जा का प्रवाह एक दिशा मे और जैव भू-रासायनिक प्रवाह चक्र के रूप में होता है।

1. **ऊर्जा का प्रवाह**—ऊर्जा को अनन्त काल तक बारम्बार उपयोग नहीं किया जा सकता क्योंकि हर स्तर पर ऊर्जा का ह्रास व उपयोग होता है। जैसे—सौर ऊर्जा (Solar Energy) को हरे पादप (इन्हें Producers यानि उत्पादक कहेंगे) प्रकाश संश्लेषण द्वारा रासायनिक ऊर्जा (Chemical Energy) में बदल देते है (पादप कार्बोहाइड्रेट्स के रूप में)।

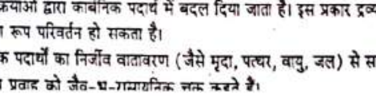

अब शाकाहारी जीव (Herbivores) इन पादप कार्बो० का उपभोग करते है जिससे रासायनिक ऊर्जा उन तक चली जाती है। शाकाहारी को माँसाहारी (Carnivores) उपभोग करते हैं, जिससे ऊर्जा का प्रवाह अगले स्तर तक हो जाता है। इस बीच में ऊर्जा का ऊष्मा के रूप में या कार्य करने में यान्त्रिक ऊर्जा के रूप में उपयोग/ह्रास हो जाता है। सामान्यतया कुल ऊर्जा का 90% हर स्तर पर उपयोग हो जाता है और 10% अगले स्तर तक स्थानान्तरित होता है।

2. **जैव भू-रासायनिक चक्र** (Bio Geo-chemical Cycle)—जो कार्बनिक (Organic) पदार्थ उत्पादकों द्वारा संश्लेषित किये जाते है, वे उपभोक्ता द्वारा खा लिये जाते है। अब पृथक करने वाले (Decomposers) द्वारा उपभोक्ता के शरीर में सारा कार्बनिक पदार्थ अकार्बनिक (Inorganic) में तोड़ दिया जाता है जो फिर से उपभोक्ता की संश्लेषण क्रियाओं द्वारा कार्बनिक पदार्थ में बदल दिया जाता है। इस प्रकार द्रव्य (Matter) प्रकृति में घूमता रहता है। इसका रूप परिवर्तन हो सकता है।

इस प्रकार पोषक पदार्थों का निर्जीव वातावरण (जैसे मृदा, पत्थर, वायु, जल) से सजीव (Living Organisms) के बीच चक्रीय प्रवाह को जैव-भू-रासायनिक चक्र कहते है।

Scanned by CamScanner

पारिस्थितिक तन्त्र की प्रकृति (Nature of Ecosystem)

किसी भी जीव समूह को निरन्तर अस्तित्व में रहने के लिये ऊर्जा की निरन्तर पूर्ति और आवश्यक रासायनिक तत्त्वों का चक्रीय प्रवाह आवश्यक होता है। इस प्रकार जैविक व अजैविक वातावरण आपस में निरन्तर प्रतिक्रिया करते हैं। इन सबको ही पारिस्थितिक तन्त्र की प्रकृति कहा जाता है। किसी भी Ecosystem की प्रकृति में निम्न तत्त्व होते हैं—

1. जैव समूह।
2. जन्तु व वनस्पति समुदाय।
3. जैव समूह का समाप्त होना और नये जैव समूह द्वारा उसका स्थान ग्रहण करना।
4. ऊर्जा का निरन्तर प्रवाह।
5. रासायनिक तत्त्वों का निरन्तर चक्रीय प्रवाह।

पारिस्थितिकी और पारिस्थितिक तन्त्र में अन्तर
(Difference between Ecology & Ecosystem)

	पारिस्थितिक तन्त्र (Ecosystem)	पारिस्थितिकी (Ecology)
1.	किसी समुदाय और उसके वातावरण के अध्ययन को Ecosystem कहते हैं।	जीवों के आपसी व भौतिक वातावरण के सम्बन्धों के वैज्ञानिक अध्ययन को Ecology कहते हैं।
2.	जैविक व अजैविक तत्त्वों की आपसी निर्भरता को देखा जाता है।	जीवों व पर्यावरण के आपसी सम्बन्धों व प्रभावों का विश्लेषण किया जाता है।
3.	Ecosystem मे जीव पर्यावरण व ऊर्जा का प्रवाह होते हैं।	इसमें जीव व पर्यावरण होते है।

पारिस्थितिक तन्त्र में ऊर्जा—Ecosystem में हर स्तर पर ऊर्जा का ह्रास व उपयोग होता है। हरे पौधे सौर ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में बदलते हैं। इस ऊर्जा का लगभग 90% भाग विभिन्न कार्यों (जैसे—श्वसन, गति आदि) में उपयोग कर लिया जाता है, कुछ ऊष्मा के रूप में व्यय हो जाता है। यह उपयोग/व्यय प्रत्येक स्तर पर होता है। शेष लगभग 10% ऊर्जा अगले स्तर तक पहुंचती है।

पारिस्थितिक तन्त्र में खाद्य शृंखला (Food Chain in Ecosystem)

एक जीव का दूसरे जीव द्वारा उपभोग करना एक क्रमबद्धता से होता है, जिसे खाद्य शृंखला कहते है, जैसे—हरे पौधे (उत्पादक) सौर ऊर्जा द्वारा प्रकाश संश्लेषण करते हैं और भोजन का निर्माण करते हैं। हरे पौधों को शाकाहारी जन्तु (प्राथमिक उपभोक्ता) भोजन के रूप में खा लेते हैं। अब शाकाहारी जन्तुओं को मांसाहारी जन्तु (द्वितीय उपभोक्ता) खा लेते हैं। कुछ मांसाहारी जन्तु (तृतीयक उपभोक्ता) इन (द्वितीयक उपभोक्ता) को खा लेते है। इस प्रकार यह खाने (उपभोग) की प्रक्रिया एक शृंखला (Chain) के रूप में होती है, जिसे खाद्य शृंखला कहते हैं। इनमें विभिन्न स्तरों (उत्पादक, प्रा०उप०, द्वि०उप०, तृ०उप०) को पोषण स्तर (Trophic Level) कहते हैं।

उदाहरण—

घास (उत्पादक)
↓
टिड्डा (प्रा० उपभोक्ता)
↓
मेढ़क (द्वि० उपभोक्ता)
↓
साँप (तृतीय उपभोक्ता)
↓
मोर (सर्वोच्च उपभोक्ता)

खाद्य शृंखलाओं के प्रकार (Types of Food Chains)

(A) ये मुख्यत: तीन प्रकार की (चरणो के आधार पर) होती है—
- (i) तीन चरण वाली खाद्य शृंखला (3 Steps Food Chain)
- (ii) चार चरण वाली खाद्य शृखला (4 Steps Food Chain)
- (iii) पाँच चरण वाली खाद्य शृंखला (5 Steps Food Chain)

उदाहरण—
- (i) 3 Steps
  शाकीय पौधे → हिरन → शेर
- (ii) 4 Steps
  घास → टिड्डा → मेढ़क → पक्षी
- (iii) 5 Steps
  घास → टिड्डा → मेढ़क → साँप → मोर

(B) उत्पादक—उपभोक्ता की प्रकृति के आधार पर खाद्य शृंखला दो प्रकार की होती है—
- (i) शिकार-शिकारी/शाकवर्ती खाद्य शृंखला (Prey-Predator/Grazing Food Chain)
- (ii) मृत-जीवी/अपरदी खाद्य शृखला (Saprophytic/Detritus Food Chain)
- (i) **Prey-Predator/Grazing Food Chain**—इस प्रकार की खाद्य शृखला हरे पौधो (Producers) से आरम्भ होती है। इन्हें चरने वाले शाकाहारी जन्तु उपभोग करते हैं और ये स्वयं (शाकाहारी जन्तु) मांसाहारी जन्तुओं का शिकार बनाते हैं। इस प्रकार की Food Chain सौर ऊर्जा पर निर्भर होती है।
- (ii) **Saprophytic/Detritus Food Chain**—इस प्रकार की Food Chain मृत कार्बनिक पदार्थ (मृत जीव) से आरम्भ होती है और सूक्ष्म जीव (Micro-Organisms) द्वारा पूर्ण होती है। इस प्रकार की Food Chain सौर ऊर्जा पर निर्भर नहीं होती।

खाद्य जाल (Food Web)

किसी खाद्य शृंखला में प्राथमिक या द्वितीयक उपभोक्ता एक से अधिक के लिये खाद्य बन सकता है, जिससे अलग-अलग खाद्य शृखलाये बीच-बीच में आपस में जुड़ जाती है, जिससे एक जाल बन जाता है और इसे ही खाद्य जाल (Food Web) कहा जाता है, जैसे—

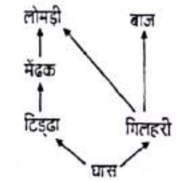

खाद्य-शृंखला और खाद्य जाल में अन्तर

	खाद्य-शृंखला	खाद्य-जाल
1.	यह उत्पादक व उपभोक्ताओ के बीच एक शृंखला के रूप मे होती है।	यह जाल-नुमा संरचना बनाती है।
2.	इसमें जीव सीमित संख्या मे होते हैं।	इसमें जीवों की संख्या असीमित भी हो सकती है।
3.	इसमें पाये जाने वाले Trophic Level एक प्रकार के जीवों से जुड़े होते हैं।	इसमें यह एक से अधिक प्रकार के जीवों से जुड़ा होता है।

Scanned by CamScanner

पर्यावरण (Environment)

पर्यावरण शब्द दो शब्दों (परि + आवरण) से बना है अर्थात् दूसरी वस्तुएँ जो हमें प्रभावित करती हैं तथा जो चारों ओर वितरित हैं, पर्यावरण कहलाता है।

या जीवों को सामूहिक रूप से प्रभावित करने वाले सभी कारक पर्यावरण कहलाता है। कारक, वह बल, पदार्थ या दशा है, जिससे किसी आवास में रहने वाले सभी जीव प्रभावित होते हैं।

पर्यावरण मुख्यत: दो भागों में बांटा गया है—

1. **भौतिक पर्यावरण (Physical Environment)**—इसके अन्तर्गत जल, सूर्य, ऊर्जा, प्रकाश, खनिज, लवण, आर्द्रता, पृथ्वी और वायु आदि भी सम्मिलित हैं। इसकी अनिरंतरता से ही मृदा कटाव, अपघटन, अवसादीकरण, भूकम्प और अन्य आपदाएं जन्म लेती है।
2. **जैव पर्यावरण (Biotic Environment)**—इस वातावरण का सम्बन्ध जीवों के आपसी सम्बन्ध से है। जीवों का आपसी सम्बन्ध उनकी संस्कृति, व्यवहार, आचार-विचार, प्रतिस्पर्धा, दृष्टिकोण, धर्म, जाति और व्यक्तिगत आवश्यकता आदि के आधार पर सम्भव है।

पर्यावरण की आवश्यकता (Necessity of Environment)

स्वच्छ एवं शुद्ध वातावरण सम्पूर्ण मानव एवं जीव-जंतु हेतु अति आवश्यक है। कई दशकों पूर्व जब भारतीय संस्कृति पूर्ण विकसित नहीं थी तो अपव्यय कम होने के कारण हमारा पर्यावरण स्वच्छ था लेकिन जनसंख्या विस्फोट ने अपव्यय में कई गुना वृद्धि कर दी है। इसे दूर करने के लिए नये-2 उपाय सोचे जा रहे हैं। वातावरण को शुद्ध बनाने के लिए पूरे विश्व के वैज्ञानिकों को नये शोध करने होंगे जो हमारे वातावरण को शुद्ध करने में उपयोगी साबित होने चाहिएँ।

जैवमण्डल (Biosphere)

सम्पूर्ण पृथ्वी पर पाये जाने वाले जीव समुदाय व अजैव घटकों के साम्राज्य को जीवमण्डल कहते हैं। जीव पृथ्वी तल से केवल 6 km ऊँचाई तक तथा समुद्र में 8 km गहराई तक ही मिलते हैं। कुल 19 km का यह क्षेत्र ही जीवमण्डल या जैवमण्डल कहलाता है। यह तीन भागों में बांटा गया है—

1. **स्थलमण्डल (Lithosphere)**—पृथ्वी की ऊपरी पर्त को, जिसमें खनिज पदार्थ एवं मृदा पायी जाती है, Lithosphere कहते हैं। इस मृदा पर ही पेड़-पौधे आते हैं जिसके उपभोग से जीवधारी जीवित रहते है।
2. **जलमण्डल (Hydrosphere)**—इसके अन्तर्गत सभी प्रकार के जलस्रोत आते हैं, जैसे—समुद्र, नदी, झील, तालाब, हिमनद एवं भौमजल आदि। सम्पूर्ण पृथ्वी का 97% भाग, समुद्र भाग 2% भाग, हिमनदी व ध्रुव पर मिलते हैं जिसमें 1% भाग ही जीवधारियों के काम में आता है। यह जल भी पर्यावरण प्रदूषण के कारण दूषित एवं जहरीला हो जाता है, जिसका प्रयोग जल उपचार व परीक्षण के बाद ही किया जाता है।
3. **वायुमण्डल (Atmosphere)**—यह जलमण्डल एवं स्थलमण्डल के चारों ओर लगभग 6000 m ऊपर तक फैला हुआ है जिसमें N_2, O_2, CO_2, O_3 एवं Water vapours उपस्थित हैं।

   वायुमण्डल पृथ्वी की ऊष्मा को संतुलित रखता है। जीवन के लिए आवश्यक ऑक्सीजन तथा पेड़-पौधों के लिए CO_2 व N_2 उपलब्ध कराता है। यह समुद्री जल वाष्प को स्थल की ओर ले जाने में सहायक होता है।

वायुमण्डल संरचना (Atmospheric Structure)

वायुमण्डल समुद्र तल से 500 km. ऊँचाई तक पाया जाता है। इसे चार भागों में बांटा गया है—

	Height	Temp.	Mainge
1.	Troposphere → पृथ्वी तल से 11 km	15 to –56°C	N_2, O_2, CO_2, H_2O
2.	Stratosphere → 11 km to 60 km	–56 to –2°C	O_2
3.	Mesosphere → 60 km to 95 km	–2 to –92°C	O_2, NO
4.	Thermosphere → 95 km to 500 km	–90–1200°C	O_2^+, O^+, NO^+

पारिस्थितिक तन्त्र के प्रकार
(Types of Ecosystem)

1. स्थलीय पारितन्त्र   2. जलीय पारितन्त्र   3. आकाशीय पारितन्त्र

1. स्थलीय पारितन्त्र (Terrestrial Ecosystem)

स्थलीय पारितन्त्र के अन्तर्गत स्थल पर पाये जाने वाले पारितन्त्र आते हैं, जैसे—रेगिस्तान, मरुस्थल, घास का मैदान, टुण्ड्रा प्रदेश तथा वन आदि। इन क्षेत्रों को मुख्यत: तीन प्रकार से विभाजित कर सकते है—

(i) वायु (Air)—स्थलीय जीवों के लिए O_2 व CO_2 का स्रोत वायु है। O_2 को जीव तथा CO_2 को पेड़-पौधे ग्रहण करते हैं तथा CO_2 जीव व O_2 पेड़-पौधे उत्सर्जित करते हैं।

(ii) जलवायु (Climate)—इसके तीन भाग है—

(a) **तापमान (Temperature)**—पृथ्वी की सतह एवं वायु की निम्न विशिष्ट ऊष्मा के कारण भिन्न-भिन्न जगहों पर भिन्न-भिन्न ऊष्मा उत्पन्न होती है।

(b) **नमी (Moisture)**—अलग-अलग स्थानों पर यह अलग-अलग होती है।

(c) **प्रकाश (Light)**—सूर्य का प्रकाश जो पृथ्वी पर आता है, उसमें विभिन्न तरंगदैर्ध्य वाली किरणें होती हैं। पर्यावरण प्रदूषण के कारण कहीं पर सूर्य की रोशनी कम तथा कहीं पर अधिक आती है।

(iii) मृदा (Soil)—पृथ्वी की ऊपरी सतह, जिसमें कार्बनिक पदार्थ, खनिज पदार्थ उत्पन्न होते हैं या मिलते हैं, मृदा कहलाती है।

2. जलीय पारितन्त्र (Aquatic Ecosystem)

इसे मुख्यत: दो भागों में बांटा जा सकता है—

(i) स्वच्छ जल पारितन्त्र (Fresh water ecosystem)

(ii) समुद्री पारितन्त्र (Marine ecosystem)

स्वच्छ जल पारितन्त्र (Fresh Water Ecosystem)—इसके अन्तर्गत, प्रवाहित स्वच्छ जल पारितंत्र और स्थिर स्वच्छ जल पारितंत्र होते हैं, जैसे झरना, जलधारायें, नदियाँ, झीलें, पोखरें आदि।

समुद्री पारितन्त्र (Marine Ecosystem)—यह एक विशाल पारितन्त्र है जो, पृथ्वी के तीन चौथाई भाग पर फैला हुआ है। इसमें सैंकड़ों जीव व वनस्पतियाँ पायी जाती हैं। पर्यावरण की क्रियाएं इसी के द्वारा नियंत्रित होती हैं। इसके अन्तर्गत महासागर, मुहाने, खाड़ी आदि आते हैं।

Scanned by CamScanner

इसकी मुख्यत: तीन चीजें मनुष्य को प्रभावित करती है—

(a) **लवणता (Salinity)**—समुद्र जल की लवणता मुख्यत: समुद्र की गहराई, पानी के वाष्पन की दर, हिनखण्डों के पिघलने, नदियों की संख्या, जो समुद्र में आकर मिलती है, पर निर्भर करती है।

ऐसा अनुमान है कि 80% Na, 20% Cl के लवण सागर के पानी में घुले होते हैं। अन्य तत्त्वों में Na, Ca. K, S तथा Mg आदि होते हैं।

(b) **तरंग (Waves)**—समुद्री तरंग से बड़े-2 पत्थर उलट-पलट जाते है, जिससे इन पत्थरों से अनेक जीव-जंतु मर जाते है। इससे केवल नुकसान नहीं होते हैं। इसके द्वारा Oxygen पानी में मिल जाती है, जो जलीय जीवों के लिए महत्वपूर्ण है।

(c) **ज्वार (Tides)**—समुद्र में जब भी ज्वार-भाटा आता है तो इसके द्वारा ऊँची-ऊँची लहरें उठती है। ज्वार-भाटा के आने का मुख्य कारण चंद्रमा तथा सूर्य का गुरुत्वाकर्षण है। इससे मुख्यत: दो लाभ होते है।

इसके कारण जीव पानी की अधिकता महसूस करते है, जो उनके लिए लाभदायक है तथा इसके द्वारा मानव बिजली का उत्पादन भी कर सकता है।

3. आकाशीय पारितन्त्र (Skyral Ecosystem)—स्थलीय व जलीय पारितन्त्र के अतिरिक्त आकाश में भी कई प्रकार के पारितंत्र होते हैं। वायुमण्डल भी एक ऐसा ही पारितन्त्र है, जिसका पीछे वर्णन किया जा चुका है।\

\ सम्पूर्ण अंतरिक्ष भी एक पारितन्त्र है, यह वायुमण्डल के आस-पास फैला हुआ है जहाँ वायु नहीं है। इसमें पृथ्वी के अलावा अन्य ग्रह भी सम्मिलित है जिनका प्रभाव हमारे ऊपर नही पड़ता है या आकाशीय पारितन्त्र जिससे प्रभावित होता है। ये सभी पारितन्त्र, आकाशीय पारितन्त्र कहलाते है।

पर्यावरण के अवयव (Elements of Environment)—पर्यावरण का क्षेत्र बहुत विस्तृत है। इसके अध्ययन के लिए पर्यावरण को मुख्यत: निम्न भागों में विभाजित कर सकते हैं—

(i) पृथ्वी (ii) जल

(iii) हवा (iv) ऊर्जा

(v) स्थान

(i) पृथ्वी (Earth)—मनुष्य पृथ्वी का ही उत्पाद है, पृथ्वी ने ही उसे माँ की तरह पाला-पोसा है। मनुष्य की सारी क्रियाएं पृथ्वी पर ही सम्पन्न होती है। पृथ्वी पर ही जीवनदायिनी जल मिलता है। इस पर अनेक खनिज पदार्थ, तेल, कोयला, प्राकृतिक गैस, खनिज आदि दिये हुए हैं। इस प्रकार हमारे पर्यावरण का एक महत्वपूर्ण भाग (तत्त्व) पृथ्वी है क्योंकि जल तथा वायु इसी पर स्थित है। अन्य जीव-जंतु, कीड़े-मकोड़े, पेड़-पौधे आदि यहीं पर मिलते है। इस प्रकार पर्यावरण के परिवर्तन द्वारा ही पृथ्वी प्रभावित हो रही है।

(ii) जल (Water)—पर्यावरण का दूसरा महत्वपूर्ण तत्व जल है। पृथ्वी के लगभग तीन चौथाई भाग पर समुद्री पानी है जिसका उपयोग मनुष्य नहीं करता है क्योंकि यह बहुत खारा है। पृथ्वी पर उपस्थित सतही जल ही इसके काम आता है परन्तु प्रदूषण के कारण यह भी प्रदूषित हो गया है।

जल सूर्य के वाष्पीकरण द्वारा वाष्पित हो जाता है तथा पुन: जब वह पृथ्वी पर गिरता है, तो वायुमण्डल में उपस्थित धूल, धुआं तथा अन्य हानिकारक गैसें इसमें घुल जाती है, जो मनुष्य के लिए हानिकारक होती है। इस वर्षा का जल अम्लीय हो जाता है। यह वर्षा पेड़-पौधों, जलधारी जीवों आदि को नष्ट कर देती है।

(iii) हवा (Air)—पृथ्वी के चारों ओर वायुमण्डल की एक परत है जिसके distribution का वर्णन पीछे किया जा चुका है। हमारे वायुमण्डल में ही हमारी प्राण वायु आक्सीजन उपस्थित है जिसके बिना हम जी नही सकते है परन्तु बढ़ती जनसंख्या, पेड़-पौधों की अंधाधुंध कटाई, औद्योगिक क्रांति आदि से वायुमण्डल इतना प्रदूषित हो गया है कि सांस लेना भी दूभर हो गया है।

प्रतिवर्ष प्रदूषण के कारण बहुत सारे रुपयो की बर्बादी हो रही है। वायुमण्डल मे कई प्रदूषक गैस मौजूद हैं। नीदरलैण्ड मे CO, N_2O, फार्मेल्डिहाइड, धुएं की मात्रा निर्धारित सीमा से अधिक है। कुवैत और इराक के युद्ध मे खनिज तेल के जलने से इतना अधिक धुआँ उत्पन्न हुआ कि भारतवर्ष के पहाड़ी क्षेत्रों मे काली बर्फ के रूप मे गिरा।

अत: हमें वायु को शुद्ध करने के लिए प्रदूषण कम करना होगा।

(iv) ऊर्जा (Energy)—हम जानते हैं कि ऊर्जा न तो उत्पन्न होती है न ही समाप्त बल्कि केवल इसे एक रूप से दूसरे रूप में परिवर्तित किया जा सकता है।

आज इस प्रतिस्पर्धी युग में ऊर्जा पैदा करने से बहुत ही अधिक मात्रा में पर्यावरण प्रदूषित करने वाले कारक उत्पन्न होते है। ऊर्जा के कुछ स्रोत निम्न है—

(i) ईंधन के रूप में Coal, Wood एवं Mineral oil आदि।

(ii) Electric production के लिए Water energy, thermal energy and nuclear energy आदि।

(iii) मानव और पशुओ की शक्ति का उपयोग।

(iv) सौर ऊर्जा का उपयोग।

इनमें से Coal, wood, mineral oil प्रदूषण के कारण माने जाते है लेकिन अब सबसे अधिक उपयोग होने वाली Nuclear energy प्रदूषण का महत्वपूर्ण कारक है क्योंकि इसमें से खतरनाक किरण निकलती है जो भारत के लिए घातक है।

अत: हमे इसे प्रयोग न करने की कोशिश करनी होगी तथा Pollution रहित सौर ऊर्जा (Solar energy), वायु ऊर्जा (Wind energy) तथा जल ऊर्जा (Water energy) का अधिकाधिक प्रयोग करना होगा।

स्थान (Space)

रंक से लेकर राजा तक, चींटी से लेकर हाथी तक एवं सूक्ष्म जीवाणुओ से लेकर विशालकाय प्राणियों तक, सभी के रहने के लिए स्थान की आवश्यकता होती है। लेकिन बढ़ती हुई जनसंख्या तथा औद्योगीकरण के कारण आज जगह की कमी महसूस हो रही है।

एक मंजिला से लेकर बहुमंजिला इमारतें बनती चली जा रही है जिसके कारण जगह (space) समाप्त हो रही है। ऊपर से इस विशालकाय जनसंख्या द्वारा उत्पादित कूड़ा-करकट, गंदगी फैलती जा रही है।

अत: जगह (space) को बचाने के लिए Industrialisation, वनों के कटान तथा सबसे महत्वपूर्ण, जनसंख्या वृद्धि, को रोकना होगा अन्यथा पैर रखने भर का भी स्थान (space) नहीं बचेगा।

पर्यावरणीय सन्तुलन
(Environmental Balance)

पर्यावरण में अनेक पदार्थ एक अवस्था से दूसरी अवस्था में परिवर्तित होते रहते है। इनमे से कोई भी पदार्थ एक ही स्थान पर एकत्रित हो जाने पर किसी न किसी रूप में पर्यावरण को हानि पहुँचाता है। ये पदार्थ प्रदूषणकारी होते है।

प्रकृति ने स्वयं ऐसी व्यवस्था बनाई है कि प्रत्येक हानिकारक पदार्थ स्वत: ही विलुप्त या रूपान्तरित होता रहता है। इनमें से कुछ चक्र निम्न हैं—

(1) Hydrological Cycle (2) Carbon Cycle

(3) Oxygen Cycle (4) Nitrogen Cycle

(5) Calcium Cycle (6) Sulphur Cycle

(7) Phosphorus Cycle (8) Hydrogen Cycle

(1) हाइड्रोलोजिकल चक्र (BIF)—सूर्य तालाब, गड्ढों, झीलों आदि के पानी का वाष्पीकरण तथा वृक्ष से वाष्पोत्सर्जन करता है। इस प्रक्रिया द्वारा बादल का निर्माण होता है और जब दो बादल टकराते है तो वर्षा होती है।

Scanned by CamScanner

इस प्रकार जलीय चक्र पूर्ण होता है।

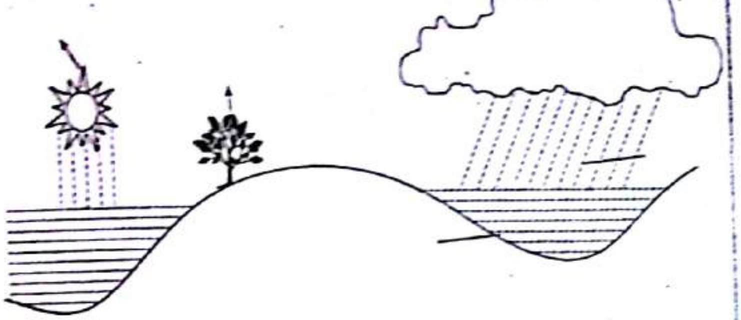

कार्बन चक्र (Carbon Cycle)—पौधे वायुमण्डल से CO_2 प्रकाश संश्लेषण द्वारा ग्रहण करते हैं और जब वे मरते हैं तो इनका अपघटन होता है फिर इन्हें जलाया जाता है जिससे CO_2 मुक्त होती है, जो वायुमण्डल में मिल जाती है।

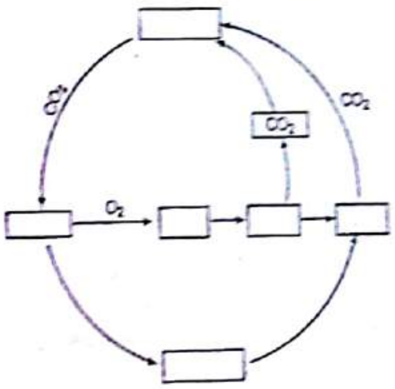

पौधों द्वारा उत्सर्जित O_2 को जीवधारी ग्रहण करते हैं और श्वसन के द्वारा CO_2 निकालते हैं जो वायुमण्डल में मिल जाती है और CO_2 का संतुलन बना रहता है।

ऑक्सीजन चक्र (Oxygen Cycle)—जीव-जंतु वायुमण्डल से O_2 लेते हैं और CO_2 निकालते हैं। इस CO_2 को पेड़-पौधे ग्रहण करके पुनः O_2 को निकालते हैं। इस प्रकार O_2 का संतुलन बना रहता है।

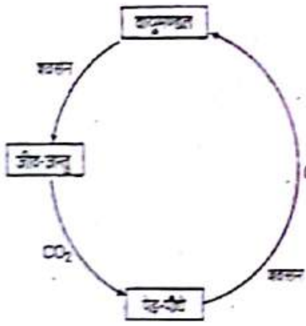

नाइट्रोजन चक्र ([illegible])—वायुमण्डल से N_2 को पेड़-पौधे लेते हैं, पेड़-पौधों के पत्तों तथा फलों द्वारा N_2 का प्रसार animals में होता है। जब जीव-जन्तु (animals) तथा पौधे (plants) मृत होते हैं तो अमोनिया बनता है जिसे जीवाणु नाइट्रेट में परिवर्तित कर देते हैं। नाइट्रेट का Decomposition होता है और N_2 बनता है जो पुनः वायुमण्डल में मिल जाता है। इस प्रकार एक चक्र (Cycle) पूर्ण होता है।

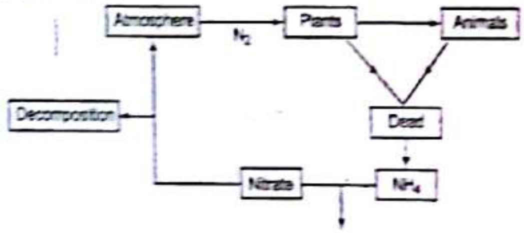

कैल्शियम चक्र (Calcium Cycle)—सर्वप्रथम पृथ्वी पर उपस्थित पत्थर का अपक्षय होता है तो वह Ca के चूर्ण में परिवर्तित होता है, जिसे पेड़-पौधे ग्रहण करते हैं। पेड़-पौधों की पत्तियों व फलों को खाने से यह जीव-जंतु में चले जाते हैं तथा जब मृतोपरांत दहन-दफन होते हैं तो यह पुनः Rock में परिवर्तित हो जाते हैं।

इस प्रकार इसका संतुलन बना रहता है।

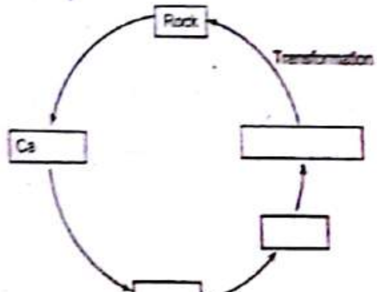

Scanned by CamScanner

सल्फर चक्र (Sulphur Cycle)—वायुमण्डल मे उपस्थित सल्फर को पेड़-पौधे लेते है, जिन्हें बाद में जीव-जंतु लेते है और जब भौगोलिक उथल-पुथल होती है, तो जीवाश्म ईंधन में बदल जाता है जिसके जलने से Sulphur उत्पन्न होता है, जो पुन: वायुमण्डल मे मिल जाता है।

इस प्रकार यह चक्र पूर्ण होता है।

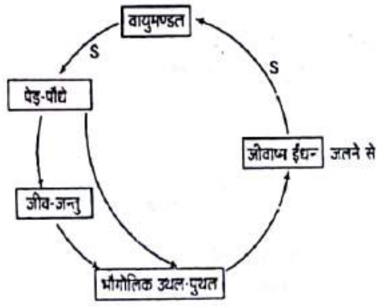

/ **फास्फोरस चक्र (Phosphorus Cycle)**—चट्टान (Rock) का अपक्षय हुआ जो मिट्टी में मिलकर खाद बनी। इसे पेड़-पौधों ने ग्रहण करके जीव के लिए भोजन बनाया, जब जीवों की मृत्यु हुई तो वह जल में बहकर नदियों में मिला, नदियों में वर्षा जल के द्वारा सीधे भी Phosphorus चला आता है जिसके कारण समुद्र मे इसका जमाव होता है और भूगर्भीय उथल-पुथल होने पर पुन: यह Rock के रूप में परिवर्तित हो जाता है।

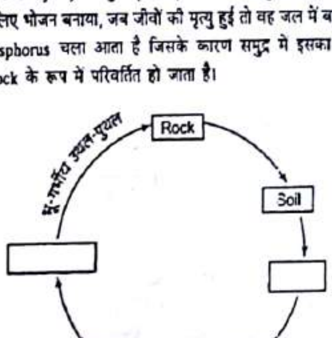

हाइड्रोजन चक्र (Hydrogen Cycle)—जल के अणु के घटक के रूप मे हाइड्रोजन (H_2) का स्रोत जलमण्डल है। प्रकाश-संश्लेषण (Photo-Synthesis) के द्वारा हाइड्रोजन (H_2) सजीव जगत मे आती है, यह क्रिया निम्न प्रकार होती है।

$$2H_2O \longrightarrow 2H_2 + O_2 \uparrow$$

यह हाइड्रोजन (H_2), ग्लूकोज ($C_6H_{12}O_6$) अणु की रचना करती है। यही सीधे ग्लूकोज में सजीव जगत में चली जाती है। श्वसन (Respiration) क्रिया के समय ग्लूकोज के अणु टूट जाते है, जिससे मुक्त हाइड्रोजन का ऑक्सीकरण होता है और यही H_2 जल में बदल जाता है।

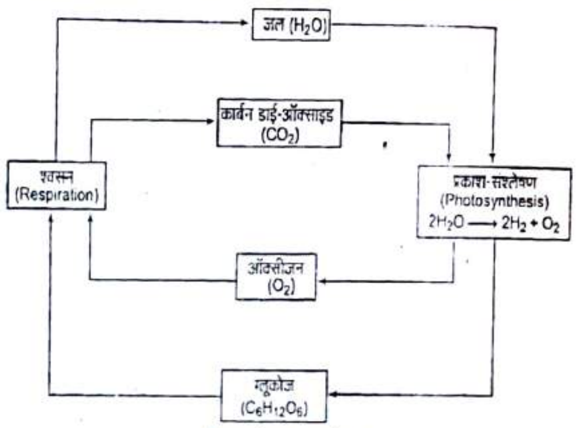

चित्र-हाइड्रोजन चक्र (ऊर्जा चक्र)

मृत जीवों, पेड़-पौधो एवं अपशिष्ट पदार्थों के कार्बनिक यौगिकों में अपघटन क्रिया से हाइड्रोजन (H_2) बनती है, जिसका ऑक्सीकरण होता है और जल प्राप्त हो जाता है। मुक्त हुई ऑक्सीजन (O_2) श्वसन क्रिया से CO_2 में तथा CO_2 प्रकाश संश्लेषण क्रिया द्वारा O_2 का निर्माण करती है। चूंकि कार्बन (C), O_2 एवं H_2 चक्रो का आपस मे घनिष्ठ सम्बन्ध है, अत: इस संयुक्त चक्र को ऊर्जा चक्र की संज्ञा दी जाती है। इसे चित्र में दर्शाया गया है।

पारिस्थितिक तंत्र पर मानवीय क्रियाओं का प्रभाव

1. सिंचाई (Irrigation)— भारतदेश कृषि प्रधान देश है। यहाँ के लोगों का मुख्य व्यवसाय खेती करना है। खेतों के लिए उत्तम बीज, खाद, अच्छी मृदा व सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। अच्छी खाद, अच्छे बीज व उपजाऊ मृदा से ही कृषि उत्पादन बढ़िया नहीं हो सकता है वरन् उचित समय पर पेड़-पौधो को आवश्यक मात्रा मे पानी मिलना जरूरी है। इसके अलावा कृषि उत्पाद को खरपतवार, फगस, व कीटो से बचाना आवश्यक है। कृषि कार्य पानी/सिंचाई पर निर्भर करता है। वर्षा का पानी पूरे खेत में सिंचाई करता है परन्तु वर्षा का समय अनिश्चित है। वर्ष मे मात्र दो माह ही वर्षा के है। इन दो माहों के अलावा खेत में छमाही या तिमाही फसल लेने के लिए खेत में पानी को आवश्यकता की पूर्ति हेतु अपनाये गये कृत्रिम साधन सिंचाई कहलाता है। पहले खेतो में पानी पहुँचाने के लिए टोकरी द्वारा, ढ़ेकली द्वारा, दून, घिरनी बाल्टी, चरखा-बाल्टी, चरम, रहट या आर्कमीडियन स्क्रू की सहायता से कूएँ से पानी निकालकर खेतों तक पहुँचाया जाता था। आज ट्यूबवेल द्वारा जमीन से पानी निकालकर Flood अथवा Sprinkler द्वारा सिंचाई की जाती है। नदियो की चौड़ाई मे बाध बनाकर, हैड बर्क्स बनाकर, नहरों का जाल पूरे क्षेत्र मे फैलाया जाता है तथा इन नहरों का पानी मोघे (out let) द्वारा जल गूलो (water courses) की सहायता से खेत में पानी दिया जाता है जिससे फसलो को सिंचाई की जाती है।

नहरो का निर्माण अंग्रेजी शासन काल मे 19 वीं शताब्दी मे शुरु हुआ। 1817 में पश्चिमी यमुना नहर, 1954 मे ऊपरी गग नहर, पूर्व यमुना नहर, ऊपरी दोआब नहर, 1880 मे निचली गंग नहर, 1884 मे सरहिंद नहर व 1930 मे शारदा नहरें निकाली गई। सन् 1947 के बाद सिचाई एवं पन बिजली परियोजनाएं (Hydroelectric) शुरु हुई। इनमे नागार्जुन सागर (A.P.),कांसी तथा गंडक (बिहार), हीराकुण्ड (ओड़ीसा), तुंगभद्रा (कर्नाटक), रामगंगा (U.P.), व्यास सतलुज लिंक (हिमाचल प्रदेश), भाखड़ानागल (पंजाब), शारदा सहायक (U.P)., दामोदर घाटी (पश्चिमी बंगाल) व कोटा बैराज (राजस्थान) प्रमुख है। इनके अनुरक्षण निर्माण हेतु प्रत्येक राज्य मे, सिंचाई अनुसन्धान केन्द्र स्थापित किये गये। केन्द्रीय स्तर पर केन्द्रीय सिंचाई परिषद व

Scanned by CamScanner

केन्द्रीय जल आयोग (CWC) का गठन किया गया। भारत का भूक्षेत्र 3288 लाख हेक्टेअर है जिसमें 1860 लाख हेक्टेअर भूमि कृषि योग्य है। भारत की नदियो मे लगभग 1780 लाख हेक्टेअर-मीटर पानी प्रतिवर्ष आता है जिसका 105 लाख हेक्टेअर मीटर पानी सिंचाई में प्रयोग में आता है। पंजाब में अन्य राज्यों की तुलना में सिंचाई का प्रतिशत 87% है।

कृषि कार्य हेतु भूमि जल का सर्वाधिक दोहन ट्यूबेल के पानी से सिंचाई किये जाने के कारण हो रहा है। नहर परियोजनाओं से काफी मात्रा मे जमीन का अधिग्रहण (Aquision) हो रहा है जिससे स्थलीय इकोतन्त्र प्रभावित हो रहा है। जंगलों, मरुस्थलो आदि से गुजर रही नहरों से हालाँकि भूमि उपजाऊ हो रही है एवं अधिग्रहण से उसी क्षेत्र का इकोतन्त्र बदल रहा है। नदियों पर बड़े-2 व ऊँचे बांध बनाये जा रहे है जिससे काफी बड़ा भू-भाग जलाशय द्वारा घेर लिया जाता है जिससे जानवर, पशु, पक्षी एवं इंसान भी विस्थापित होकर अलग जगह शरण लेता है जिससे इकोलॉजी Change होना लाजिमी है।

2. शहरीकरण (Urbanisation)—कृषि के प्रति अरुचि, शहरो मे उद्योग-धन्धों की प्रचुरता, यातायात के साधनों की सुलभता, शहरी चकाचौंध, ग्रामीण क्षेत्र में जल प्रदाय का अव्यवस्था व रोजगार के साधन न होने के कारण, ग्रामीण जनता शहरों की ओर पलायन कर रही है। यह पलायन ही शहरीकरण है अर्थात् ग्रामीण क्षेत्र के लोगों का शहर में आकर बस जाना, शहरीकरण है। चूँकि शहरों मे शिक्षा, चिकित्सा, सुरक्षा, मनोरंजन, विद्युत, सड़को, वाहनों, आदि का सुविधाऐं उपलब्ध रहती है। साथ ही नगरीय शैली, विकसित शहरो, राज्यों राजधानियो से जुड़ाव सीधे ही शहरों से आसानी से हो जाता है अत: ग्रामीणो का शहरों में आकार बस जाना सम्भव हो रहा है।

(a) शहरी जनसंख्या का बढ़ना—पहले शहरों में प्रतिवर्ग किलोमीटर मे कम लोगों के रहने से शहरी घनत्व कम था परन्तु वर्तमान में मेरठ, दिल्ली, कानपुर, लखनऊ, मुम्बई, कोलकाता, चेन्नई, मैसूर, हैदराबाद, पुडुचेरी आदि शहरों में जनसंख्या घनत्व अत्यधिक हो गया है जिससे वहां भीड़-भाड़ होने से वाहनों, उद्योगो, आदि का अत्यधिक प्रदूषण हो गया है।

(b) नैतिक मूल्यों में कमी—ग्रामीण क्षेत्रों के मुकाबले शहरों मे महिला/पुरुष करा अनुपात यानि कि लिंगानुपात कम रहने का वजह से शहरों में नैतिक मूल्यों का पतन हुआ है। एकाकी परिवार होना, छोटे-छोटे मकान होना, स्वार्थी होना, आदि सब नैतिक पतन के कारक है।

(c) व्यक्तिवाद में वृद्धि—शहरों में चूँकि एकाकी परिवार होते है जिनमें प्रत्येक व्यक्ति स्वतन्त्र रूप से निर्णय लेने की क्षमता रखता है। जिससे शहरों में Individualism बढ़ रहा है। यहाँ सामूहीकरण (Groupism) समाप्त हो रहा है।

(d) विषमताएँ—शहरी वातावरण मे आलीशान, VIP, क्षेत्र है तो गंदी बस्तियाँ (Slums) भी है। ऊँचे अच्छे-बड़े एवं कोठी युक्त मकान शहरों मे है तो उनके आस-पास झुग्गी-झोपड़ियाँ भी है। आलीशान मकानों मे प्रतिव्यक्ति आय अत्यधिक होती है तथा उनके रहने का तौर-तरीका, फैशन परस्त आदि अवयव होते है जबकि गरीब तबके के लोग उनका छोटा व्यवसाय, खराब रहन-सहन का स्तर आदि गरीबी के अवयव है। अत: अमीरी-गरीबी, उच्च वर्ग-निम्न वर्ग, अधिकारी वर्ग-कर्मचारी, चपरासी व मजदूरी वर्ग, नौकरी पेशा वर्ग-व्यवसाय वर्ग, आदि वर्गों में असमानता के अवयव शहरों मे पनपते है लिहाजा लड़ाई-झगड़े, तोड़-फोड़, लूट-पाट, चोरी-चकारी, आदि बुराइयाँ शहरों में ज्यादा पनपती है। इन सबका कारण आर्थिक विषमताऐं ही है। गाँवों में सभी के आर्थिक पक्ष लगभग एक से ही होते है। अत: वे मिल-जुलकर आपस में सामुदायिक रूप से रहते हैं।

उक्त के अलावा शिक्षा, सामाजिक, राजनैतिक, प्रतिबद्धता, कर्तव्यता आदि प्रभाव शहरों में अलग व ग्रामीण परिवेश में अलग-अलग है।

3. सड़कों का विकास (Road Development)—प्राचीन काल में मनुष्य समूह मे रहता था तथा उसका आना जाना भी सामूहिक होता था। खेतों, खलिहानों, जंगलों आदि से जब मानव शृंखला, लगातार गुजरती (Pass) रहती है तो उनके लगातार चलते रहने से पगडंडियाँ बन जाती है। धीरे-धीरे ये पगडंडियां चौड़ी होती चली जाती है और अच्छी सड़क का रूप ले लेती हैं। धीरे-धीरे जब सभ्यता का विकास हुआ और पहिए का आविष्कार हुआ, तब इन कच्ची सड़कों को कंक्रीट, अथवा तारकोल से बनाया जाने लगा, जिन पर रिक्शा, तांगे, पैदल, स्कूटर, मोटर साइकिल, ट्रक, बस, व कारें आदि वाहन दौड़ने लगे। सड़कों के निर्माण में जमीन का अधिक्रहरण होने लगा, तथा विभिन्न निर्माण पदार्थों को प्राप्त करने की प्रक्रिया की जाने लगी। परिणामस्वरूप बड़े-बड़े खेत एवं जमीन के भूभाग सड़को के लिए अधिगृहीत होते चले गये, जिससे पर्यावरण असंतुलित होने लगा।

भारत में सड़कों के विकास के लिए, भारतीय सड़क कांग्रेस, नागपुर प्लान, केन्द्रीय, सड़क अनुसंधान मुम्बई, प्लान व लखनऊ प्लान बनाकर सड़को को राष्ट्रीय, राजमार्ग, मुख्य जिला सड़के, अन्य जिला सड़के व ग्रामीण सड़कों के रूप में विकसित किया गया। 1947 के बाद भारतीय राष्ट्रीय महामार्ग प्राधिकरण द्वारा सडकों के निर्माण एवं उनके चौड़ीकरण की योजना लागू कर गई। इससे सड़कों के निर्माण एवं उनके चौड़ीकरण का कार्य तेजी से बढ़ रहा है। इसके अन्तर्गत स्वर्णिम सचतुर्भुज परियोजना (Golden Quardrilateral Project) व उत्तर दक्षिण व पूर्व पश्चिम कोरीडोर परियोजना भी सम्मिलित कर ली गई। स्वर्णिम चतुर्भुज परियोजना में दिल्ली-मुम्बई, चेन्नई-कोलकाता को सीधे 4 लेन या 6 लेन वाली अन्तर्राष्ट्रीय मानकों वाली सड़को से जोड़े का प्रस्ताव है। इसमें कुल लगभग 5850 km लम्बी सड़कों (दिल्ली मुम्बई-1419 km, मुम्बई-चेन्नई-1290 km, चेन्नई-कोलकाता 1684 km तथा कोलकाता-दिल्ली 1457 km का संरेखण सुधार (Alignment)/निर्माण/चौड़ीकरण/उद्धार/सुन्दरो/सुन्दरीकरण किया गया है।) 7300 km लम्बे कोरीडोर सड़क योजना के अन्तर्गत श्रीनगर (कश्मीर) को कन्याकुमारी से और सिल्चर को पोरबन्दर (पूर्व-पश्चिम)को विश्वस्तरीय चार छ: लेन की सड़कों से जोड़ा गया है। स्वर्णिम चतुर्भुज व कोरीडोर मार्गों पर आने वाले रेल व नहरो के ऊपर Flyovers का निर्माण किया गया। एक अनुमान के अनुसार इंग्लैण्ड में प्रति 100 वर्ग किमी॰ क्षेत्र में 210 km लम्बी सड़के, फ्रांस मे 1951 km तथा भारत में कुल लगभग 40 km लम्बी मुख्य सड़के है।

भारत में सड़को के निर्माण, विकास मरम्मत आदि के लिए केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, स्थानीय निकायें, (Local Bodies) जिला परिषद (District Boards), नगर पालिकाऐं (Municipalities) व पंचायतों द्वारा प्रशासनिक एवं वित्तीय व्यवस्था संभाली जाती है। केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग (PWD) व राज्य लोक निर्माण विभाग (State PWD) का गठन कर देश ने सड़को के विकास का जिम्मा उक्त दोनों विभागों के हाथ मे होता है। इन विभागो को बजट के लिए केन्द्रीय राज्य सरकारे, अनुदान देती है। इन विभागों को आय, Road, Tax, मोटर तेल कर, यात्री -कर, माल-कर चालन लाइसेंस फीस, मोटर वाहनो के पुर्जे, टायर-ट्यूब व वाहनों के रजिस्ट्रेशन आदि से होती है। भारी पुलों पर टोल टैक्स लगाकर भी इन विभागों को आय होती है। यह आय केन्द्र व राज्य सरकारें राज्य सड़के, जिला परिषद-जिला सड़कों व पंचायत ग्रामीण सड़कों का कार्य देखती है। नगर पालिकायें शहर सीमा में स्थित सड़कों का कार्य देखती है।

निर्माण कार्यों की वित्तीय कठिनाइयो को देखते हुऐ अब सरकार बड़ी-बड़ी परियोजनाओं को सम्पन्न कराने के लिए निजी क्षेत्र के उद्यमियो (Enterpreneurs) की साझेदारी स्वीकार कर रही है। इसे Build operate and Transfer (BOT) का नाम दिया गया है। इसके अन्तर्गत सड़कों एवं पुलों का निर्माण निजी उद्यमियो द्वारा अपने खर्चे पर किया जाता है और इनका संतोषजनक संचालन की भी जिम्मेदारी इन्हीं के हाथ में होती है। ये उद्यमी 20-30 वर्षों: तक इन पुलो/सड़को पर चलने वाले वाहनों से टोल टैक्स वसूल कर अपने खर्चे की भरपाई करते है। ठेका अवधि समाप्त होने पर संतोषजनक स्थिति रहने पर ये कार्य सरकार को हस्तान्तिरित हो जाते है। सड़क निर्माण एवं तत सम्बन्धित गतिविधियों से प्रदूषण होता है जिससे पारिस्थितिकी (Ecology) पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

4. अन्य इंजीनियरिंग गतिविधियाँ—यहां यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि देश में निर्माण सम्बन्धी गतिविधियों बढ़ रही है। आज पूरे विश्व मे विभिन्न क्षेत्रों में निर्माण कार्य सम्पन्न हो रहे है। जिनमे आवश्यक निर्माण सामग्रियो के उत्पादन हेतु बड़े-2 उद्योग स्थापित हो रहे हैं। जिसके कारण सभी क्षेत्रो यथा वायु, जल, भू व ध्वनि, प्रदूषण आदि बढ़ रहा है। साथ-साथ तत्सम्बन्धित क्षेत्रों में ईकोलॉजी प्रभावित हो रही। जल प्रदूषण से जलीय परितन्त्र, वायु प्रदूषण से वायुवीय परितन्त्र, ठोस पदार्थ व्यर्थ से स्थलीय परितन्त्र आदि बुरी तरह प्रभावित हो रहे हैं। भविष्य में विभिन्न निर्माण गतिविधियों ने पर्यावरण के साथ समरसता (Harmony) विकसित करनी होगी, तभी देश की उन्नति होगी एवं देश सही रूप में उन्नत (Advance) होगा।

Scanned by CamScanner

मृदा अपरदन

मिट्टी एक अमूल्य प्राकृतिक संसाधन है, जिस पर सम्पूर्ण प्राणि जगत निर्भर है। भारत जैसे कृषि प्रधान देख मे, जहां मृदा अपरदन को गम्भीर समस्या है मृदा अपरदन की प्रक्रिया में मृदा की ऊपरी सतह टूट जाती है और एक-स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंच जाती है। भूक्षरण या मृदा-अपरदन का अर्थ है मृदा कणों का बाह्य कारकों जैसे वायु, जल या गुरूत्वीय-खिंचाव द्वारा पृथक होकर बह जाना। वायु द्वारा भूक्षरण मुख्यत: रेगिस्तानों क्षेत्रों में होता है, जहां वर्षा की कमी तथा हवा की गति अधिक होती है, परन्तु जल तथा गुरूत्वीय बल द्वारा भूक्षरण पर्वतीय क्षेत्रों में अधिक होता है। जल द्वारा भूक्षरण के दो मुख्य चरण होते हैं। पहले सतहो भूमि से मृदा कणों का पृथक होना, तथा दूसरे इन मृदा कणों का सतहो अपवाह के साथ बहकर दूर चले जाना। मृदा का प्राकृतिक अपरदन जल और वायु के कारण होता है। मृदा का प्राकृतिक अपरदन होने के निम्नलिखित कारण हैं।

1. निर्वनीकरण—वन पानी के बहाव की तीव्रता तथा वायु की गति को कम करता है। वह मिट्टी को जड़ों से जकड़कर रखता है। किन्तु वनों के अविवेकपूर्ण विदोहन तथा कटाई अपरदन की तीव्रता बढ़ाती है।

2. अनियन्त्रित पशुचारण—इससे मिट्टी का गठन ढीला हो जाता है। फलत: जलीय तथा वायु-अपरदन तीव्र होता है।

3. कृषि का अवैज्ञानिक ढंग—अत्यधिक जुताई, गहन कृषि, फसल चक्र की अनुपस्थिति आदि कारणों से मिट्टी अपना प्राकृतिक गुण खो देती है, जिससे उसका विघटन होने लगता है। यह जलीय तथा वायु अपरदन को सुगम बना देती है।

4. भूमि की ढ़ाल—भूमि का तीव्र ढाल गुरुत्वाकर्षणीय प्रभव में मृदा को नीचे लाने में सहायक होता है।

5. अतिवृष्टि तथा अनावृष्टि

6. झूमिंग कृषि प्रणाली—इससे वनों का विनाश होता है तथा मिट्टी के पोषक तत्व बह जाते हैं।

7. नदी बहाव की गति—नदी की गति यदि दोगुनी हो जाए तो अपरदन क्षमता चार गुनी तथा बहन क्षमता 64 गुनी बढ़ जाती है।

8. नदियों द्वारा मार्ग परिवर्त—नदी मार्ग परिवर्तन कर उपजाऊ भूमि को जलमग्न कर देती है।

मृदा अपरदन का प्रभाव (राष्ट्रीय योजना समिति के अनुसार)

1. भूमि की उर्वरशक्ति का नष्ट होना,
2. जोतदार भूमि में कमी,
3. आकस्मिक तथा भयंकर बाढ़ का प्रकोप,
4. शुष्क मरूभूमि का विस्तार,
5. बीहड़ तथा बंजर भूमि में वृद्धि, जो असमाजिक तत्वों का शरणस्थल बनता है।
6. स्थानीय जलवायु पर विपरीत प्रभाव,
7. नदियों को मार्ग परिवर्तन,
8. भू-जलस्तर का नीचे जाना, फलस्वरूप पेयजल तथा सिंचाई के लिए की कमी,
9. खाद्यान्न उत्पादन में कमी, फलस्वरूप आयात में वृद्धि भुगतान सन्तुलन का बिगड़ना आदि।

अभिस्थलीय प्रभाव (On-site Effects)

जब किसी स्थान पर मृदा अपरदन होता है तो इससे फसलों के विकास तथा फसलों के उत्पादन पर प्रभाव पड़ता है। इसका कारण यह है कि मृदा अपरदन के कारण मृदा में कमी हो जाती है जिससे फसलों के लिए पौषिक तत्वों की कमी हो जाती है इसके साथ मृदा में जैविक पदार्थों की भी कमी हो जाती है जिसके कारण फसलें बढ़ नहीं पाती जिसके फलस्वरूप उत्पादन में कमी आती है। मृदा के अपरदन से मृदा संरचना भी प्रभावित होती है।

अपस्थलीय प्रभाव (Off-site Effects)

मृदा के अपरदन के कारण जब मृदा के कण स्थानांतरित होकर किसी एक स्थान पर एकत्र हो जाते हैं तब उस स्थान पर मृदा की ऊपरी परत मोटी हो जाती है इससे बीजो के अंकुरण पर प्रभाव पड़ता है क्योंकि अब अंकुरित होने के लिए बीजों को मृदा की मोटी परत को भेदना पड़ेगा।

पारिस्थितिक सन्तुलन पर पर्यावरणीय प्रदूषण का प्रभाव
(Effect of Environment Pollution on Ecological Balance)

आज मनुष्य ने इतनी प्रगति कर ली है कि वह कुछ भी कर सकता है परन्तु मृत्यु पर उसका नियंत्रण नहीं हो पाया है परन्तु इस प्रगति के लिए उसने प्रकृति का किस हद तक दोहन किया है, इसका कोई उत्तर नहीं है।

विज्ञान एवं तकनीकी प्रगति, उद्योगो की अंधाधुंध वृद्धि एवं जनसंख्या विस्फोट ने पर्यावरण सन्तुलन को अत्यधिक प्रभावित किया है। जीवाश्म ईंधन जलाने से, ज्वालामुखी से, उद्योगों से एवं श्वसन क्रिया से CO_2 का प्रतिशत लगातार बढ़ता जा रहा है। इस क्रिया को Green house effect कहते हैं। इसके कारण समुद्री जल स्तर उठ जायेगा, सागरीय तटीय क्षेत्र जलमग्न हो जायेंगे, ध्रुवीय बर्फ पिघल जायेगी, गर्मी के दिन बड़े तथा सर्दियों के दिन छोटे हो जायेंगे, वर्षा की कमी आयेगी तथा फसलों की पैदावार घट जायेगी।

जैव विविधता (Biodiversity)

जीव मण्डल में विविध प्रकार के जीव पाये जाते हैं। इसी विविधता को जैव विविधता कहा जाता है।

पृथ्वी के किसी भी भाग मे जैसे वन में अनेकों प्रकार के पौधे व जन्तु मिलते हैं, यह सब जैव विविधता है।

जैव वैज्ञानिक दीर्घ काल से विभिन्न जीवों की खोज में लगे है। कुछ जीवो की अनुमानित संख्या तालिका 1.1 में दी गयी है—

तालिका 1.1

समूह	प्रजातियों की संख्या
शैवाल	40,000
कवक	72,000
विषाणु	1,550
जीवाणु	4,000
उच्च पौधे	2,70,000
प्रोटोजोआ	40,000
निमेटोड्स	25,000
मोलस्क	70,000
कीट	10,25,000
उभयचर	4,780
सरीसर्प	7,150
मछलियाँ	26,959
पक्षी	9,700
स्तनधारी	4,650

Scanned by CamScanner

जैव विविधता के स्तर (Levels of Biodiversity)

जैव विविधता को तीन भागों में बाँटा गया है—

1. प्रजाति विविधता (Species Diversity)
2. आनुवंशिक विविधता (Genetic Diversity)
3. समुदाय एवं पारितन्त्र विविधता (Community & Ecosystem Diversity)

1. प्रजाति विविधता—प्रजातियों की भिन्नता को प्रजाति विविधता कहते हैं। इसमें एककोशिकीय जीव से लेकर बहुकोशिकीय जीव तक सभी आते हैं।
2. आनुवंशिक विविधता—सभी प्रजातियों में जीन्स (Genes) पाये जाते हैं। ये प्रत्येक प्रजाति के लिये नियत संख्या में होते हैं, जैसे—मनुष्य में 35,000 – 45,000, Drosophite fly में 13000 आदि।

   यह जीन्स की विवधता निम्न प्रकार मिलती है—

   (A) एलीलों में (Alleles)

   (B) गुण सूत्र की संरचना में (Chromosomes)

   (C) पूर्ण जीन्स में
3. समुदाय एवं पारितन्त्र विविधता—जैव समुदाय में पायी जाने वाली विविधता को समुदाय विविधता कहा जाता है। यह तीन प्रकार की होती है—

   (i) अल्फा विविधता (Alpha diversity)

   (ii) बीटा विविधता (Beta diversity)

   (iii) गामा विविधता (Gamma diversity)

   (i) **Alpha**—एक समुदाय में ही पाई जाने वाली विविधता को अल्फा विविधता कहते हैं।

   (ii) **Beta**—अलग-अलग समुदाय में पाई जाने वाली विविधता को बीटा विविधता कहते हैं।

   (iii) **Gamma**—एक विशेष क्षेत्र की पूरी विविधता को गामा विविधता कहते हैं।

जैव विविधता के लाभ—प्रकृति में जीवों की विविधता अत्यन्त लाभदायक होती है, जैसे—

1. **औषधियों की प्राप्ति**—पौधों से बहुत प्रकार की औषधियाँ प्राप्त होती हैं। विभिन्न प्रकार के पौधे विभिन्न प्रकार की औषधि का स्रोत होते हैं। यह जैव-विविधता के कारण ही सम्भव है।
2. **भोजन की प्राप्ति**—मनुष्य को अनेकों प्रकार के भोजन की प्राप्ति जैव-विविधता के कारण होती है। अन्यथा किसी एक ही प्रकार के भोजन पर मनुष्य को निर्भर रहना पड़ता है।
3. **सौन्दर्यता**—चिड़ियाघरों में विभिन्न प्रकार के जीव, पक्षियों के प्रकार, बागवानी आदि जैव-विविधता के कारण ही सम्भव है।
4. **Ecosystem में सहायक**—जैव विविधता के कारण ही Ecosystem चल पाता है। नहीं तो यदि कोई एक प्रकार के जीव होते तो वे कभी के समाप्त हो चुके होते।
5. **भविष्य में सम्भावनायें**—कुछ जीव आज अनुपयोगी लग सकते हैं परन्तु आने वाले कल में सम्भव है कि उनसे कोई अति उपयोगी चीज बनाई जा सके। यह भी जैव-विविधता के कारण ही सम्भव होगा।

जैव विविधता की आवश्यकता के लिए वैज्ञानिक स्पष्टीकरण (The Scientific Explanation for the need of Biodiversity)

जैव विविधता की आवश्यकता का वैज्ञानिक स्पष्टीकरण निम्नलिखित है—

1. सभी प्रकार के मानव जीवन, पशुओं, जीव-जन्तुओं तथा पौधों का पारस्परिक सम्बन्ध है। इनमें पारस्परिक निर्भरता भी होती है जिससे पारिस्थितिकी सन्तुलन बना रहता है। जैसे-जैसे आन्तरिक सम्बन्ध कम होने लगता है, पारिस्थितिकी में असन्तुलन होने लगता है। पृथ्वी के समस्त जीवों मे आन्तरिक निर्भरता होती है। इन संवेदनशील सम्बन्धों हेतु मनुष्य ही एक महत्वपूर्ण कड़ी है। जब यह कड़ी टूट जाती है, तब मनुष्य के स्वयं के लिए समस्या पैदा होने लगती है।
2. जैव विविधता का विस्तार अधिक व्यापक होता है, जो पर्यावरण के आर्थिक एवं सामाजिक लाभ के दृष्टिकोण से उपयोगी है।
3. जैव विविधता का संरक्षण तथा अनुरक्षण वर्तमान तथा भावी पीढ़ी के लिये अधिक उपयोगी एवं लाभदायक है।
4. जैव विविधता का सीधा सम्बन्ध जीवन की गुणवत्ता से होता है।
5. उच्च कोटि की फसल हेतु उत्तम प्रकार का बीज तथा खाद चाहिए होती है। नवीन फसल के सृजन के लिए आनुवंशिक विषमता (Genetic Diversity) की आवश्यकता होती है। नयी फसल की उत्पादकता तथा उच्च कोटि की फसल का सृजन भी पारिस्थितिक तन्त्र पर निर्भर करता है। उसी के अनुरूप फसल का चयन किया जाना चाहिए।
6. यदि जैव विविधता का अनुरक्षण प्रकृति के अनुरूप किया जाए तो पर्यावरण की भौतिक एवं भौगोलिक परिस्थितियों जैसे वायुमण्डल, भूमण्डल का विकास तथा अनुरक्षण जैविक विषमता या जैव विविधता की सहायता से किया जा सकता है।
7. मानव की विकास की प्रक्रिया तथा जीव विज्ञान के पारिस्थितिक तन्त्र का ज्ञान होना अति आवश्यक है। जैव विविधता अथवा जैविक विषमता का ज्ञान विकास की प्रक्रिया को समझने में बहुत सहायक होता है। जीवमण्डल (Biosphere) तथा मानव जीवन के अनुरक्षण हेतु तथा विकास की प्रक्रिया के लिए इसका ज्ञान अति आवश्यक है।

शहरीकरण (Urbanization)—बढ़ती हुई आबादी गरीबी एवं बेरोजगारी के कारण ग्रामीण जीवन छोड़कर लोग रोजगार, सुविधाओं एवं आराम के लिये शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं जिससे शहरों की आबादी तेजी से बढ़ती जा रही है। शहरों में वाहनों का शोर, उनसे निकला धुआँ, उद्योगों से निकला धुआँ एवं गन्दा बहिस्राव, कूड़े करकट का ढेर एवं अपर्याप्त सीवर तथा जल आपूर्ति व्यवस्था ही परिलक्षित होती है। इन सभी कारणों से शहरीकरण ने भी प्रदूषण को बढ़ाया है। सन् 2000 में भारत के प्रमुख चार शहरों की आबादी निम्न प्रकार थी—

तालिका 1.2

		वर्ष 1975	वर्ष 2000
1.	नई दिल्ली	7·2 मिलियन	17·2 मिलियन
2.	चेन्नई	7·8 मिलियन	12·9 मिलियन
3.	कोलकाता	8·5 मिलियन	16·7 मिलियन
4.	मुम्बई	9·3 मिलियन	17·0 मिलियन

राजमार्ग अथवा सड़क विकास (Highway Development)

भारत में यातायात की सुविधाओं को बढ़ाने, गाँवों को शहरों से जोड़ने तथा अन्य औद्योगिक आवश्यकताओं के लिये सड़कों का विकास अति आवश्यक है। पूरे देश में सड़कों का जाल बिछा हुआ है। परन्तु सड़कों की गुणवत्ता पर विशेष ध्यान

Scanned by CamScanner

नहीं दिया जा सका है। कुछ समय से हॉट मिक्स प्लान्ट द्वारा सड़कों का निर्माण किया जा रहा है। इसके लिए विश्व बैंक आदि से अनेक बार ऋण लिये गये हैं। भारत में फैली मुख्य सड़कों को राष्ट्रीय राजमार्ग का दर्जा दिया गया है। इन सड़कों की गुणवत्ता को विश्व स्तरीय बनाने के लिये दो महत्त्वपूर्ण परियोजनायें तैयार की गयी हैं—

(i) राष्ट्रीय राजमार्ग विकास परियोजना (NHDP) वर्ष 1996

(ii) प्रधानमन्त्री भारत जोड़ो परियोजना (PMBJP) वर्ष 2003–2004

(i) राष्ट्रीय राजमार्ग विकास परियोजना (National Highway Development Project)

(देखें तालिका—1.3) इस परियोजना का निर्माण कार्य सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र की सहभागिता से किया जा रहा है, जिसकी कुल लागत 60,000 करोड़ रुपये की है। इस परियोजना का निर्माण तीन चरणों में किया जा रहा है। प्रथम चरण के अन्तर्गत स्वर्णिम चतुर्भुज के रूप में देश के चार महानगरों दिल्ली, मुम्बई, चेन्नई तथा कोलकाता को जोड़ने वाले राष्ट्रीय राजमार्गों का 4 या 6 लेन वाले विश्वस्तरीय राजमार्गों के रूप में निर्माण किया जा रहा है। दूसरे चरण में कश्मीर से कन्याकुमारी तक उत्तर-दक्षिण गलियारा एवं सिलचर से पोरबन्दर तक पूरब-पश्चिम गलियारा, कुल मिलाकर 14846 किमी० लम्बे राष्ट्रीय राजमार्गों को 4 या 6 लेन का बनाया जा रहा है। इसी तरह तीसरे चरण में दस प्रमुख बन्दरगाहों को प्रथम दो चरणों में निर्माणाधीन राष्ट्रीय राजमार्गों से जोड़ने का कार्य किया जा रहा है। इस परियोजना का विशालकाय निवेश पैट्रोल तथा डीजल पर उपकर लगाकर अव-संरचना (Infrastructure) विकास बॉण्ड जारी करके विश्व बैंक एवं एशियाई विकास बैंक से ऋण लेकर बजटीय सहायता देकर तथा "निर्माण करो–परिचालन करो–हस्तान्तरित करो" (B.O.T.) नीति अपनाकर सम्पन्न किया जा रहा है। इस परियोजना के अन्तर्गत तीनों चरणों में कुल 14846 किमी० लम्बे राष्ट्रीय राजमार्ग का निर्माण किया जा रहा है। यह राजमार्ग देश के 11 राज्यों की राजधानियों को दिल्ली से जोड़ देता है। दिल्ली से जुड़ने वाले ये राज्य हैं—जम्मू कश्मीर, राजस्थान, गुजरात, कर्नाटक, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, असम एवं उत्तर प्रदेश। यह राजमार्ग तन्त्र पंजाब, हरियाणा, बिहार, केरल, मध्य प्रदेश और मेघालय से गुजरते हुए भी इनकी राजधानियों से होकर नहीं गुजरता।

(ii) प्रधानमन्त्री भारत जोड़ो परियोजना (Prime Minister Bharat Joro Pariyojna or PMBJP)

राष्ट्रीय राजमार्ग परियोजना के राजमार्ग तन्त्र में न जुड़ सकने वाले राज्यों की राजधानियों एवं अन्य प्रमुख औद्योगिक शहरों को उक्त राजमार्ग तन्त्र से जोड़ने हेतु वर्ष 2003–2004 में प्रधानमन्त्री भारत जोड़ो परियोजना तैयार की गई। इसके अन्तर्गत प्रथम योजना में शामिल न हो सके लगभग 10000 किमी० लम्बे राष्ट्रीय राजमार्गों का उच्चीकरण किया जायेगा, जिसकी कुल लागत 40000 करोड़ रुपये है। यह परियोजना प्रथम परियोजना की भाँति ही लागू की जा रही है। वर्तमान में इस परियोजना को परिवर्तित करके राष्ट्रीय राजमार्ग विकास परियोजना चरण III (NDHP Phase III) कर दिया गया है।

परियोजना के लाभ—राष्ट्रीय राजमार्ग की लम्बाई सम्पूर्ण सड़कों की कुल लम्बाई का मात्र 2% है, किन्तु आज भी कुल यातायात का लगभग 40% इन्हीं राजमार्गों से गुजरता है। इन परियोजनाओं के पूर्ण हो जाने पर अनुमानतः कुल यातायात का 60% इन्हीं से होकर गुजरेगा। भावी समय में सकल घरेलू विकास दर 8 से बढ़कर 10 हो जाने की प्रबल सम्भावना है। इस योजना से भारतीय अर्थव्यवस्था में विकास एवं पर्यटन उद्योग में विकास की काफी सम्भावनाएँ हैं। विश्व बैंक की रिपोर्ट के अनुसार वाहनों के ईंधन में बचत, टूट-फूट एवं मरम्मत में बचत तथा समय में बचत से लगभग 8000 करोड़ रुपये तक की बचत प्रतिवर्ष होगी।

तालिका 1.3 : राष्ट्रीय राजमार्ग विकास परियोजना
(National Highway Development Project or NHDP)

चरण	प्रस्तावित खण्ड	सम्मिलित राष्ट्रीय राजमार्ग नाम	संख्या	कुल लम्बाई	पूरा हो जाने की लक्षित तिथि
प्रथम चरण स्वर्ण चतुर्भुज	1. दिल्ली-मुम्बई	क- दिल्ली-जयपुर-अजमेर	8	5952	31 दिसम्बर, 2004 (फरवरी 2004 तक 2548 किमी० का निर्माण कार्य पूरा हो चुका है, 3404 किमी० का निर्माण कार्य कार्यान्वयन के विभिन्न चरणों में है)
		ख- अजमेर-चित्तौड़गढ़	70		
		ग- चित्तौड़गढ़-उदयपुर	76		
		घ- उदयपुर-अहमदाबाद	8		
		ङ- अहमदाबाद-सूरत-मुम्बई	8		
	4. मुम्बई-चेन्नई	च- मुम्बई-पुणे-सतारा-बेलगाम-बंगलौर	4		
		छ- बंगलुरू-कृष्णागिरि	7		
		ज- कृष्णागिरि-चेन्नई	46		
	2. चेन्नई-कोलकाता	झ- चेन्नई-विजयवाड़ा-विशाखापतनम्-भुवनेश्वर-खड़गपुर	5		
		ञ- खड़गपुर-कोलकाता	6		
	3. कोलकाता-दिल्ली	ट- कोलकाता-रानीगंज-वाराणसी-इलाहाबाद-कानपुर-आगरा-दिल्ली	2		
द्वितीय चरण	2. उत्तर-दक्षिण गलियारा	अ- श्रीनगर-जम्मू-जालंधर	1 A	7413	31 दिसम्बर, 2007 (फरवरी 2004 तक 565 किमी० का निर्माण कार्य पूरा हो चुका है)
उत्तर-दक्षिण		ब- जालधर-दिल्ली	1		
पूर्व-पश्चिम		स- दिल्ली-आगरा	2		
गलियारा		द- आगरा-ग्वालियर	3		
		य- ग्वालियर-झांसी	75		
		र- झांसी-लखानाडॉन	26		
		ल- लखानाडॉन-नागपुर-हैदराबाद-बंगलौर-कृष्णागिरि-सेलम-मदुरै-कन्याकुमारी	7		
	2. पूर्व-पश्चिम गलियारा	व- सिल्चर-दाबोका	54		
		श- दबोका-नौगाँव	36		
		स- नौगाँव-गुवाहाटी-पंचरत्न	37		
		ह- पंचरत्न-जलपाईगुड़ी-पूर्णिया	31		
		क्ष- पूर्णिया-मुजफ्फरपुर	57		

Scanned by CamScanner

		ब्र- मुजफ्फरपुर-गोरखपुर-लखनऊ	28		
		अअ- लखनऊ-कानपुर-झाँसी-शिवपुरी-कोटा-चित्तौड़गढ़	25		
		अब- चित्तौड़गढ़-उदयपुर-राधनु	76		
		अस- पिण्डवारा-राधनपुर	14		
		अद- राधनपुर-समखियाली	15		
		अय- समखियाली-वामनवारे	8 A		
		अर- वामनवारे-राजकोट-पोरबन्दर	8 B		
तृतीय चरण बन्दरगाहों तक पहुँच	1. 10 प्रमुख बन्दरगाहों को राष्ट्रीय राजमार्गों को जोड़ना	काण्डा-न्हावा-शेवा (जवाहर लाल नेहरू पोर्ट), मारमुगुआओ, मंगलौर, कोच्चि, तूतिकोरिन, चेन्नई, एन्नोर, विशाखापत्तनम्, पाराद्वीप, हल्दिया	47	363	31 दिसम्बर, 2007
	2. अन्य राजमार्ग	छूटे सम्पर्क एवं अन्य		1018	

तालिका 1.4 प्रधानमन्त्री भारत जोड़ो परियोजना
(Prime Minister Bharat Joro Pariyojna or PMBJP)

	राष्ट्रीय राजमार्ग या उसका खण्ड	राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या
1.	दिल्ली-देहरादून	58 व 72
2.	धुले-नागपुर	6
3.	बेलगाम्-पणजी	6
4.	मुजफ्फरपुर-पटना	77
5.	सिवोक-गंगटोक	29 A
6.	सिल्चर-इम्फाल	53
7.	सलेम-कोचीन-तिरुवनन्तपुरम्-कन्याकुमारी	47
8.	अमृतसर-पठानकोट	15
9.	अम्बाला-चण्डीगढ़-शिमला	21
10.	थाणे-नासिक-धुले	3
11.	पुणे-नासिक	4 A
12.	लखनऊ-सीतापुर	77
13.	चेन्नई-तिन्दावरम्-पाण्डिचेरी	45
14.	दबका-कोहिमा	36
15.	सिल्चर-आइजोल	54
16.	भारत-पाक सीमा : अमृतसर-जालंधर-चण्डीगढ़-कौरतपुर	1
17.	जयपुर-भरतपुर-आगरा	11
18.	इन्दौर-नागदा-खलघाट	50
19.	नागपुर-रायपुर-औरांग	24
20.	बाढ़ी-राँची-जमशेदपुर	33
21	गुवाहाटी-ईटानगर	37/62

अभियन्त्रण गतिविधियाँ (Engineering Activities)

किसी भी प्रकार के नवनिर्माण को अभियन्त्रण गतिविधि कहते हैं। अभियन्त्रण गतिविधियों के माध्यम से ही प्रौद्योगिकी का विकास सम्भव हुआ है। अभियन्त्रण गतिविधियों के कारण ही मानव नदियों पर विशाल बाँधों तथा जलाशयों का निर्माण करने में सफल हुआ है। इनके भार की वजह से नीचे स्थित शैलों के पारिस्थितिक तन्त्रों (Ecosystems) तथा उनके पारिस्थितिकी संसाधन के परिरक्षण से नवीन प्रकार के जन्तुओं और वर्ण शंकर फसलों को विकसित किया जा सकता है। पादपों एवं जन्तुओं की प्राकृतिक संख्या के परिरक्षण तथा अनुरक्षण द्वारा पारिस्थितिक सन्तुलन की स्थापना किया जाना भी सम्भव हो सकता है, किन्तु अति आधुनिक प्रौद्योगिकी से पारिस्थितिकी तथा पारिस्थितिक तन्त्र पर अनेक दुष्प्रभाव पड़ रहे हैं। यद्यपि इन दुष्प्रभावों की सूची बहुत लम्बी है, फिर भी कुछ महत्वपूर्ण दुष्प्रभाव निम्नांकित हैं—

1. अनेक विलासिता के उत्पादों जैसे—रेफ्रीजरेटर, एयरकन्डीशनर, स्प्रे कैन डिसपेन्सर इत्यादि के परिचालन से तथा अग्निशामक यन्त्रों से भारी मात्रा में क्लोरो फ्लुरो कार्बन (C.F.C.) तथा हैल्सन का विमोचन तथा इनके द्वारा ओजोन पर्त का क्षरण।
2. मौसम सम्बन्धी दशाओं में परिवर्तन के दुष्प्रभाव।
3. कृषि उत्पादकता में वृद्धि करने हेतु रासायनिक खादों, कीटनाशी तथा शाकनाशी कृत्रिम रसायनों का अत्यधिक प्रयोग किये जाने के कारण झीलों, नदियों तथा भूमिगत जल का प्रदूषण।
4. रासायनिक संयन्त्रों से जहरीली गैसों के निष्कासन से वायु प्रदूषण।
5. मशीनों के प्रचालन हेतु आवश्यक ऊर्जा के जनन के लिए जीवाश्म ईंधनों के दहन तथा स्वचालित वाहनों में खनिज तेल के प्रज्ज्वलन से उत्पन्न CO_2 के वायुमण्डल के सान्द्रण में वृद्धि के कारण हरित गृह प्रभाव (Green House Effects)।
6. मानव द्वारा नाभिकीय परीक्षण और इससे उत्पन्न जल, वायु व स्थल का प्रदूषण, नाभिकीय युद्ध की दशा में इससे उत्पन्न नाभिकीय सर्वनाश (Nuclear Holocaust) तथा नाभिकीय शरद (Nuclear Winter) के कारण समस्त जैव जगत (पादप, जन्तु तथा मानव) का कुछ ही क्षणों में सर्वनाश।

उपरोक्त के अतिरिक्त अभियान्त्रिकी गतिविधियों के रचनात्मक प्रभाव भी हैं। जननिक अभियन्त्रण (Genetic Engineering) के कारण खतरे में ग्रसित प्रजातियों के डी० एन० ए० को जीन बैंक में संरक्षित किया जा सकता है। जर्मप्लाज्म या जनन द्रव्य का संग्रह व संरक्षण किया जा सकता है। कायिक प्रवर्धन करने वाली फसलों जैसे—आलू या क्रिप्टो संरक्षण (Cyrpto Preservation) विधि द्वारा संरक्षण किया जा सकता है।

खनन (Mining)

कृषि के बाद खनन विश्व का दूसरा सबसे प्राचीन उद्योग आदि काल से रहा है। किसी भी देश की आर्थिक प्रगति के लिए खनन उद्योग की अहम् भूमिका होती है। पृथ्वी में छिपे हुए असंख्य अमूल्य खनिज तत्व, पदार्थ व यौगिकों को खनन के द्वारा निकाला जाता है। इसमें उपलब्ध अयस्क धातुओं का उपयोग मशीन, इंजन भवन, पुल एवं विकास के प्रत्येक क्षेत्र में होता है।

खनिज सम्पदा में धात्विक, अधात्विक तथा बहुमूल्य धातु होते हैं। खनिज सम्पदा का दोहन मानव प्रारम्भ से ही करता आया है और सभ्यता के विकास के साथ-साथ अधिकतम होता जा रहा है जिसके परिणामस्वरूप एक ओर तो इनके समाप्त होने का संकट गहराता जा रहा है, वहीं दूसरी ओर खनिज-खनन का पर्यावरण पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। खनिज खनन का विपरीत प्रभाव जल, भूमि एवं वायु के प्रदूषण के रूप में है। इसलिए खनिजों का प्रबन्ध अति आवश्यक है अन्यथा भावी पीढ़ियों को अनेक खनिजों का अभाव सहन करना पड़ेगा।

Scanned by CamScanner

खनन की विधियाँ (Methods of Mining)

यद्यपि खनन की अनेक विधियां हैं, किन्तु मूलरूप से निम्नांकित दो विधियाँ सबसे अधिक प्रचलित है—

(i). भूमिगत खनन (Underground Mining)—भूमिगत खनन के अन्तर्गत खनिजों का सीधे ही उन तक क्षैतिज, आनत तथा ऊर्ध्वाधर सुरंगों द्वारा पहुँच बनाकर खनन क्रिया सम्पन्न की जाती है। चूँकि अयस्क को सतह पर निकाला जाता है, इसलिए भूमिगत सुरंगों के रास्तों पर छत बनाकर आलम्ब (Support) प्रदान किया जाता है, जिससे उन्हें ढहने से बचाया जा सके।

(ii) विवृत खनन (Open Cast Mining)—खनन की इस विधि के अन्तर्गत पृथ्वी की सबसे ऊपरी सतह (उपमृदा, शैल तथा स्लेट) को हटा दिया जाता है, जिसके नीचे खनिज निक्षेप होते हैं। खनिज स्तरों का वेधन (Drilled) किया जाता है और उनमें विस्फोटकों से विस्फोट किया जाता है जिसके फलस्वरूप वे गोलाश्मों (Bounders) तथा शैलो में खण्डित हो जाते है।

खनन के प्रभाव (Effects of Mining)

जिस क्षेत्र में खनन उद्योग विकसित होता है, निःसन्देह इसका प्रभाव उस क्षेत्र के जीवन स्तर पर भी पड़ता है। खनन उद्योग के विकसित होने से वहाँ बड़ी संख्या में कारीगरों को रोजगार मिलने की सम्भावना रहती है। खनन उद्योग से न केवल आधुनिक जीवन शैली की समस्त सुविधाएँ वहाँ आ जाती हैं, बल्कि उसकी बुराइयाँ भी सम्मिलित हो जाती हैं, क्योंकि खनिजों का निर्माण मुख्यतः कमजोर क्षेत्रों में (जैसे—पहाड़ों की दरारों तथा दोषयुक्त क्षेत्रों, तालों, गर्तों व महाद्वीपीय शैल्फों में) होता है। पारिस्थितिक रूप से ये क्षेत्र अत्यन्त संवेदनशील होते हैं, जो सुगमता से आन्दोलित हो जाते हैं। खनन के कारण भूमि, वन, जल तथा जीव इत्यादि नष्ट हो जाते हैं। थल संसाधनों के विनाश तथा वनों की कटाई से मृदा अपरदन, नदियों में गाद एकत्रित हो जाना, भौमजल व जलाशयों के दूषित हो जाने जैसी समस्याओं के अलावा उस क्षेत्र की जलवायु भी परिवर्तित हो जाती है। खानों के निष्प्रयोज्य (Waste) पदार्थों को प्रायः यूँ ही फेंक दिया जाता है और खनिज क्षेत्रों को सामान्यतः बिना किसी भूमि सुधार के वैसा ही छोड़ दिया जाता है। इसके परिणामस्वरूप वह सम्पूर्ण क्षेत्र बंजर और वीरान पड़ा रहता है। पर्यावरण के प्रति लगाव तथा कानूनों की कमी के कारण पूरे विश्व में खनन उद्योग से लाखों हेक्टेयर भूमि बंजर तथा बेकार पड़ी हुई है। Waste पदार्थों को खुला फेंकने से भूमि में बंजरता पैदा होती है।

खनन से ध्वनि तथा वायु प्रदूषण भी होता है। बेधन, विस्फोट, लदान और कूड़ा-करकट डाले जाने से कार्य क्षेत्र में अत्यन्त शोर होता है। इन गतिविधियों के कारण श्रव्य (Audible) तथा पराश्रव्य (Ultrasonic) विस्तार दोनों में बढ़ने वाले ध्वनि स्तरों का विपरीत प्रभाव मुख्यतः मानवों तथा मवेशियों पर दृष्टिगोचर होता है। विशाल मशीनीकृत खानों के अन्दर धूल, धुआँ, नमी व गैसों की समस्या अधिक उत्पन्न होती है, जो कि वायु प्रदूषण का प्रमुख स्रोत होती है। कान के रोग, श्वसन सम्बन्धी रोग, आँख के रोग, कम कृषि उपज तथा मवेशियों की जनन क्षमता में कमी इत्यादि इसके कुछ हानिकारक प्रभाव परिलक्षित होते हैं। ये प्रदूषण न केवल खान में कार्य करने वाले व्यक्तियों को ही प्रभावित करते हैं, बल्कि मौसम की स्थितियों के अनुसार आस-पास के क्षेत्रों की मानव बस्तियों, कृषि-भूमि तथा पशुओं को भी प्रभावित कर देते हैं।

वनों की कटाई तथा इसके प्रभाव (Deforestation and its Effects)

वन किसी भी देश के पर्यावरण के प्रमुख अंग तथा महत्वपूर्ण प्राकृतिक सम्पदा होते हैं। बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्य तथा ईंधन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वनों की कटाई की जाती है। उद्योग लगाने हेतु, सड़क निर्माण हेतु, आवास हेतु, कृषि उत्पादन हेतु, चारण हेतु, बाँध बनाने हेतु, विद्युत परियोजनाओं हेतु वनों की कटाई की जाती है। ईंधन की पूर्ति हेतु लगभग 135 मिलियन टन लकड़ी की आवश्यकता 1980 ई० में हुई थी, जिसकी मात्रा दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। 42·45% काष्ठ का प्रयोग उद्योगों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आवश्यक है। हमारे देश में वन नष्ट होने की दर लगभग 1·5 मिलियन/ हेक्टेयर/वर्ष है। वनों के नष्ट होने से मृदा अपरदन, बाढ़ आना, अकाल, सूखा इत्यादि प्र कृतिक आपदाओं में वृद्धि हुई है। भारतवर्ष में वनस्पति आवरण से 1% मृदा प्रति वर्ष की दर से अनावृत्त हो रही है। यदि यही क्रम

जारी रहा तो इससे मानव को अपूरणीय क्षति होगी। इसी का परिणाम है कि हमारी बहुमूल्य वन्य जीव सम्पदा तेजी से विलुप्त हो रही है या विलुप्त होने के कगार पर है।

ब्रियूबेकर (Brewbaker, 1984) के अनुसार विश्व में सन् 1900 में 7000 मिलियन हेक्टेयर वन क्षेत्र था, जो धीरे-धीरे घटकर 1995 ई० तक लगभग 2800 मिलियन हेक्टेयर रह गया तथा 2000 ई० में 2300 मिलियन हेक्टेयर रह गया। केन्द्रीय वन आयोग (1980 ई०) के अनुसार भारतवर्ष में 75 मिलियन हेक्टेयर वन क्षेत्र था। आहार एवं कृषि संगठन (Food and Agriculture Organization or F.A.O.) 1983 के अनुसार भारतवर्ष में 1982-90 के बीच मे लगभग 1·44 मिलियन हेक्टेयर वनों की कटाई हुई। यदि वनो की कटाई इसी गति से होती रही तो बचे हुए उष्ण कटिबंधीय वनों के सहस्राब्दि के भीतर ही लुप्त हो जाने का खतरा है। वनों की कटाई के प्रमुख कारण निम्नांकित हैं—

(i) स्थानान्तरी जुताई (Shifting Cultivation)।

(ii) कृषि का विस्तार।

(iii) मानव की गतिविधियो जैसे—खनन, खुदाई, सिचाई, वनों की आग इत्यादि का प्रभाव।

(iv) वन उत्पादों का अत्यधिक व्यावसायिक उपयोग।

(v) वृहत् बांधो के जल-ग्रहण क्षेत्रो मे वनों का जल-मग्न होना।

(vi) कीटों, पीड़कजीवों तथा कवकों का आक्रमण।

(vii) औद्योगीकरण।

(viii) मानव तथा मवेशियों की जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि।

(ix) मवेशियों को चराना।

(x) जन साधारण में वन संरक्षण चेतना का अभाव।

(xi) शहरीकरण।

(xii) पहाड़ों पर सड़कों का निर्माण।

वनों की कटाई से होने वाली प्रत्यक्ष हानियाँ—

(i) राष्ट्रीय आय में कमी।

(ii) हिमस्खलन।

(iii) मृदा जल का स्तर नीचे हो जाना।

(iv) चरागाह समाप्त।

(v) ईंधन की आपूर्ति बन्द।

(vi) इमारती लकड़ी में कमी।

(vii) जैव विविधता नष्ट।

(viii) मोम, कत्था, लाख, गोंद, शहद इत्यादि गौण उपज की उपलब्धि नहीं।

(ix) जड़ी-बूटियाँ विनष्ट।

(x) औद्योगिक कच्चा माल उपलब्ध न होना।

वनों की कटाई से होने वाली अप्रत्यक्ष हानियाँ—

(i) मरुस्थल प्रसार।

(ii) वायु आर्द्रता में कमी।

Scanned by CamScanner

(iii) मृदा अपरदन में वृद्धि।

(iv) प्राकृतिक दशाओं में परिवर्तन।

(v) कार्बन डाई-ऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि।

(vi) बाढ़ नियन्त्रण सम्भव नहीं।

गिरता भूजल स्तर (Lowering of Under Ground Water Level)

सदियों से सिन्धु गंगा का विशाल मैदान ईश्वर की असीम कृपा से मीठे जल के असीमित भण्डार से परिपूर्ण रहा है। यहाँ के निवासियों को कभी पानी की कमी का आभास ही नहीं हुआ है। अगर हम उत्तर प्रदेश से बाहर दूसरे प्रान्तों अथवा दूसरे देशों पर निगाह डालें तो हम पानी की समस्या को भली प्रकार समझ सकते है। राजस्थान जैसे राज्यों में पेयजल की समस्या विकराल रूप धारण किये हुए है जिसके समाधान के लिये सरकार को कई परियोजनाओं को चलाना पड़ रहा है। हम उत्तर प्रदेश के निवासी पेयजल समस्या के बारे में अखबारों में, पत्रिकाओं में एवं दूरदर्शन पर देखते है। परन्तु अभी तक इस समस्या से ग्रसित नहीं हुए हैं। लेकिन अब वह दिन दूर नहीं है जब हम अन्य प्रान्तों के लोगों की भाँति पीने के पानी के लिये तरसते नजर आयेंगे अगर हम समय रहते नहीं चेते तो हमारे भूजल भण्डार भी एक दिन खाली हो जायेंगे।

उत्तर प्रदेश में एक आँकलन के अनुसार भूजल का कुल भण्डार 80·0 मिलियन हेक्टेयर मीटर है। इसमें से 43·8 मि०हेमी० भूजल का दोहन प्रतिवर्ष किया जा रहा है। इस प्रकार कुल अवशेष भूजल 37·0 मि०हेमी० ही शेष बचता है। शहरों की आबादी बढ़ने तथा जल का दुरुपयोग बढ़ने के कारण भूजल की खपत शहरों में बहुत अधिक बढ़ गयी है जिससे भूजल स्तर नीचा हो गया है।

जल संस्थान द्वारा जल की आपूर्ति सही ढंग से न हो पाने के कारण अब सभी लोग अपने-अपने घरों में बोरिंग करवाकर जेट पम्प या सबमर्सिबल पम्प से पानी की खपत बहुत बढ़ा रहे है। यह भी भूजल स्तर गिरने का एक बड़ा कारण है। मैदानी भागों में सम्पूर्ण वर्षा का 12-20 प्रतिशत भाग प्राकृतिक रूप से भूगर्भ जल में मिल जाता है। शेष 80-88 प्रतिशत भाग बहकर नदियों में चला जाता है। शहरी क्षेत्रों में सड़कों, भवनों व कंक्रीट के निर्माण कार्यों के कारण अब 5-6 प्रतिशत वर्षा जल ही भूगर्भ जल में मिल पा रहा है। इस प्रकार शहरी क्षेत्र के भूगर्भ जल में वर्षा जल की आपूर्ति निरन्तर घटती जा रही है। पानी की खपत उद्योगों पर व्यावसायिक कार्यों में भी होती है। कल्पना कीजिये जब हर घर में जेट पम्प या सबमर्सिबल पम्प चल रहा हो, खेतों की सिंचाई, सरकारी या प्राइवेट नलकूपों द्वारा की जा रही हो, उद्योग धन्धों में भी इस जल का दोहन विभिन्न कार्यों हेतु किया जा रहा हो, तब भूगर्भ में इन सबके लिये इतना जल अपर्याप्त होगा और भूजल स्तर नीचे गिरेगा। अब भी समय है हम सावधान हो जाये और इस तथ्य को समझें कि भूजल स्तर में गिरावट नहीं आयेगी जब दोहित जल की मात्रा भूजल में शामिल वर्षा जल की मात्रा के बराबर रहेगी। इसके लिये आवश्यक है कि भूजल में वर्षा जल पहुँचने के उपाय किये जायें।

वर्षा जल के जो 80-88 प्रतिशत भाग को, जो बहकर समुद्र में मिल जाता है, संचित करने के उपाय—

1. भूजल का पुनर्भरण (संवर्धन)
2. सतही संचयन

भूजल का पुनर्भरण से अभिप्राय है कि वर्षाजल को बिना प्रदूषित हुए सुरक्षित तरीके से भूजल में मिला देना। सतही संचयन में वर्षा जल को रोककर, बागवानी एवं सिंचाई आदि कार्यों हेतु सीधे प्रयोग कर लिया जाता है अथवा तालाब, पोखर, झील आदि में वर्षा जल को एकत्र कर लिया जाता है। यह जल धीरे-धीरे मृदा में रिसकर भूजल में मिलता रहता है। रेन वाटर हार्वेस्टिंग द्वारा प्रतिवर्ष 10,000 घनमीटर पानी भूजल में सम्मिलित होगा।

शासन स्तर पर इस दिशा में ठोस प्रयास तेजी से किये जा रहे हैं। 19 जून 2003 के शासनादेश के अनुसार 300 वर्ग मी० से अधिक क्षेत्रफल के भवनों (निर्मित होने वाले) में रूफ टॉप रेन वाटर हार्वेस्टिंग परियोजना अनिवार्य करने का निर्णय लिया गया है।

भूजल संरक्षण का दायित्व केवल सरकार का ही नहीं है। हम सभी का नैतिक दायित्व है कि हम कम से कम पानी का प्रयोग करें, पानी को व्यर्थ न फैलायें, लोटे का इस्तेमाल करें, सीधे वाशबेसिन की टोंटी खोलकर दाढ़ी न बनाये, बाल्टी में पानी लेकर लोटे से स्नान करें, फर्श को धोने के स्थान पर पोंछा लगायें। इस प्रकार की गई पानी की छोटी-छोटी बचतों का बहुत महत्व है। बूँद-बूँद से ही घड़ा भरता है। पानी (water) के सम्बन्ध में निम्न व्याख्या देखें—

W — Wastage	A — Amounts	T — To
E — Empty	R — Reservoirs	

कम्पोस्ट खाद बनाना (Composting)

कूड़ा-करकट में मौजूद कार्बनिक पदार्थ का जैव रासायनिक क्रिया द्वारा अपघटन करने से ह्यूमस (Humus) बनता है जिसे कम्पोस्ट खाद कहते है। इसकी उपजाऊ शक्ति बहुत अधिक होती है। ठोस अपशिष्ट के समापन की यह एक अच्छी विधि है। इससे व्यर्थ ठोस पदार्थ अत्यन्त उपयोगी उत्पाद में परिवर्तित हो जाते है। इस तरह तैयार खाद में लगभग 0·3% नाइट्रोजन, 0·5% से 0·8% फास्फोरस एवं 0·6 से 0·9% पोटैशियम पाया जाता है, जो पेड़-पौधों के लिये आवश्यक तत्व है। कम्पोस्ट खाद बनाने की कई विधियाँ हमारे देश में प्रचलित है। उनमें से प्रमुख विधियाँ निम्न प्रकार है—

1. इन्दौर विधि या वायुजीवी विधि
2. बंगलौर विधि या अवायुजीवी विधि
3. कम्पोस्ट संयन्त्र

1. इन्दौर विधि या वायुजीवी विधि (Indore Method or Aerobic Method)—इन्दौर विधि बंगलौर विधि की ही भाँति है अन्तर केवल इतना है कि इसमे गड्ढा थोड़ा खाली रखा जाता है। इसे मिट्टी से ढका नहीं जाता। 5 से 7 दिन बाद गड्ढे का कूड़ा उलट-पुलट कर दिया जाता है ताकि सम्पूर्ण अपशिष्ट भली प्रकार ऑक्सीजन (वायु) के सम्पर्क में आ सके। इस विधि से 15 से 20 दिन में ही कम्पोस्ट खाद तैयार हो जाती है।

2. बंगलौर विधि या अवायुजीवी विधि (Bangalore Method or Anerobic Method)—इस विधि में कूड़ा-करकट से प्लास्टिक, रबर एवं चमड़ा आदि हाथ से अलग कर दिया जाता है फिर इसे लम्बे गड्ढों या खाइयों में भर दिया जाता है। इसमें पर्याप्त कार्बनिक पदार्थ एवं नमी होनी चाहिये। ठोस पदार्थ को इस भूमि तल से लगभग 30 सेमी० ऊपर तक भर कर मिट्टी से ढक दिया जाता है। इससे गड्ढों में अवायुजीवी परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है। अवायुजीवी जीवाणु 4 से 6 महीने में इसे जैविक क्रिया द्वारा कम्पोस्ट खाद में बदल देते है। फिर इसे खोदकर निकाल लिया जाता है और खाद के रूप में प्रयोग कर लेते है। यह एक आसान विधि है।

इस प्रकार की विधि में ठोस अपशिष्ट में पाये जाने वाली मक्खियों एवं मच्छरों के लारवा (Larvae) एवं रोगाणुओं का पूर्णतया अन्त हो जाता है। गड्ढे के मध्य में जैव क्रियाओं से उत्पन्न ऊष्मा के कारण ताप काफी बढ़ जाता है, जिससे सम्पूर्ण लारवा एवं रोगाणु नष्ट हो जाते है। लेकिन ऊपरी भाग में ताप कम होने से यह क्रिया धीमी पड़ जाती है और कुछ मात्रा में रोगाणु शेष रह जाते हैं। इस अपघटन में मीथेन गैस बनती है।

3. कम्पोस्ट संयन्त्र (Compost Plant)—इस विधि में सूखा कचरा एक बेल्ट कन्वेयर (Belt Conveyor) से होकर गुजरता है। एक शक्तिशाली चुम्बक द्वारा इसमें से लौह पदार्थ अलग कर लिये जाते है और फिर इसमें से प्लास्टिक, चमड़ा, रबड़, अलौह धातुयें एवं कार्ड-बोर्ड आदि हाथ द्वारा या यांत्रिक छन्नकों द्वारा अलग किये जाते है और बचे कचरे को हैमर मिल या चूर्णकारक (Pulverizer) में महीन पीस लिया जाता है। इसके बाद इसे बैलास्टिक पृथक्कारी (Ballastic Separator) में अति सूक्ष्म (महीन) पीस लिया जाता है। यहीं पर इसमें सूखा अथवा गीला स्लज मिला दिया जाता है। इसके बाद वांछित ताप एवं नमी पर इसमें झाग (Fermentation) उत्पन्न कराये जाते है। सात दिन तक इसमें अवायुजीवी परिस्थिति रहती है। इसके बाद इसमें वायुजीवी परिस्थिति उत्पन्न करा दी जाती है। 15 से 20 दिन में कम्पोस्ट खाद बनकर तैयार हो जाती है। इसे छानकर बोरों में भर लिया जाता है।

Scanned by CamScanner

कम्पोस्ट संयन्त्र लगाने की प्रारम्भिक लागत अधिक होती है परन्तु यह कम स्थान घेरता है। यह खाद्य उच्च श्रेणी की होती है। इसमें बोरोन, कैल्सियम, कोबाल्ट, कॉपर, लोहा, मैग्नीशियम एवं मोलीब्डिनम आदि तत्व पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। खाद में किसी भी प्रकार के रोगाणु नहीं होते हैं।

भारत में चार प्रकार के संयन्त्र उपयोग में लाये जा रहे हैं—

1. टीलोमैक संयन्त्र (Tellomache Plant)
2. बुहलर संयन्त्र (Buhler Plant)
3. न्यूस्वायल संयन्त्र (Nusoil Plant)
4. डेनो संयन्त्र (Dano Plant)

जैव-उपचार (Bio-Remediation)

किसी पारिस्थितिक तन्त्र में अनावश्यक रूप से फैलने वाले प्रदूषणकारी पदार्थों से निजात पाने या उनकी मात्रा कम करने के लिये जब जैव क्रियाओं एवं जैव रासायनिक क्रियाओं की मदद ली जाती है तब इसे जैव उपचार की संज्ञा दी जाती है। जल धाराओं में बढ़ते हुए कार्बनिक अपशिष्ट वायुजीवी बैक्टीरिया द्वारा विघटित कर कर निजात पाते हैं। बहुत-सी अन्य क्रियायें अवायुजीवी जीवाणुओं द्वारा सम्पन्न होती हैं। सामान्यत: भूमि, जल एवं वायु में मिश्रित हानिकारक प्रदूषक पदार्थ भौतिक तथा रासायनिक क्रियाओं द्वारा उपचारित किये जाते हैं। जैव-उपचार (Bio-Remediation) एक ऐसी तकनीक है, जिसमें जीवाणुओं का उपयोग प्रदूषक पदार्थों को स्वच्छ (Clean) करने में किया जाता है जिसके लिए जैवीय अभिकर्त्ताओं (Biological Agents) का उपयोग करके खतरनाक अपशिष्ट (Hazardous Waste) के कम खतरनाक अपशिष्ट अथवा हानिरहित अपशिष्ट में बदल दिया जाता है।

व्यर्थ अपशिष्ट पदार्थों जैसे काँच, प्लास्टिक, रबर, धातुएँ, प्रलेप, विलायक, काष्ट, कागज आदि को पृथ्वी पर गड्ढों में भरकर मिट्टी से दबा दिया जाता है। प्राकृतिक रूप से पाये जाने वाले अनेक सूक्ष्म जीव तुरन्त ही जैव अपघटनी पदार्थों (Biodegradable Materials) का जैव अपघटन कर देते हैं, परन्तु प्लास्टिक एवं काँच आदि कुछ पदार्थ जैव अपघटित नहीं हो पाते हैं। इसके अतिरिक्त अनेकों विषाक्त रसायनों जैसे औद्योगिक हाइड्रोकार्बन व्यर्थ पदार्थ तथा हाइड्रोकार्बन विलायक, कीटनाशकों के अपशिष्ट नदियों, नहरों एवं समुद्र तथा कचरे में निर्मुक्त कर दिये जाते हैं जो कि नष्ट नहीं होते हैं। जैव उपचार तकनीक में जल तथा मृदा में से विषाक्त जहरीले व्यर्थ पदार्थों को हटाने अथवा अपघटित करने हेतु सूक्ष्म जीवों का उपयोग किया जाता है। चूँकि प्राकृतिक प्रक्रिया अत्यन्त धीमी गति से सम्पन्न होती है, अत: व्यावसायिक तौर पर जैव उपचार करने में मृदा को ऑक्सीजन, पोषक तत्वों एवं जल से उपचारित करने पर सूक्ष्म जीवीय क्रिया में वृद्धि हो जाती है। इस विधि द्वारा 2, 4-D (2, 4-Dichloro-phenoxy Acetic Acid) के स्तर को उसके मूल स्तर से लगभग 96% तक कम किया जा सकता है। सर्वाधिक महत्वपूर्ण जैव उपचारी सूक्ष्म जीवों में सूडोमोनास तथा बैसीलस तथा विभिन्न विषभोजी कवक के नाम अग्रणी हैं। विषाक्त पदार्थों के अपघटन हेतु आजकल आनुवांशिक अभियन्त्रण युक्त तकनीक 'सुपर बग्स' (Super Bugs) का अन्वेषण किया जा चुका है। यह विषाक्त रसायनों को कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) या अन्य कम हानिकारक अवशेषों में बदल देते हैं।

सूक्ष्म जीवाणु (Microbes)

(i) पर्यावरण में सूक्ष्म जीवाणुओं की भूमिका (Role of Microbes in Environment)—सूक्ष्म जीवाणु समस्त पारिस्थितिक तन्त्रों (Ecosystem) का महत्वपूर्ण एवं आवश्यक घटक माने जाते हैं, क्योंकि ये ही एकमात्र ऐसे सजीव जीव हैं जो कि उत्पादकों (Producers), उपभोक्ताओं (Consumers) तथा अपघटकों (Decomposers) अर्थात् तीनों ही प्रमुख पोषक स्तरों (Trophic Levels) पर पाये जाते हैं।

उत्पादकों (Producers) द्वारा किसी भी पारिस्थितिक तन्त्र में पोषण स्तरों (Trophic Levels) को चलाने के लिये मौलिक ऊर्जा प्रदान की जाती है। सायनोबैक्टीरिया, शैवाल (Algae), जीवाणु तथा सल्फर जीवाणु नामक अनेक सूक्ष्म जीवाणु सूर्य की ऊर्जा को रासायनिक बन्धों की ऊर्जा में बदल देते हैं।

उपभोक्ता (Consumers) कार्बनिक अवस्तरों में उपस्थित बन्धों (Bonds) से ऊर्जा प्राप्त करते हैं तथा अन्य सजीव जीवों का भोजन करते हैं। इस वर्ग में जन्तु, प्रोटोजोआ तथा कुछ कवक (Fungi) आते हैं।

अपघटक (Decomposers) प्राथमिक तौर पर ऐसे सूक्ष्म जीवाणु हैं, जो मृदा एवं जल में पाये जाते हैं। ये मृत पादप, जन्तुओं के कार्बनिक पदार्थों को विखण्डित करके उन्हें अवशोषित कर लेते हैं। इन सूक्ष्म जीवाणुओं के अभाव में जीवमण्डल (Biosphere) प्राय: मृत और रुद्ध हो जाता है। ये सूक्ष्म जीवाणु कार्बनिक तत्वों को अकार्बनिक तत्वों और गैसों में अपघटित कर देते हैं तथा विशेषत: प्राथमिक उपभोक्ताओं के उपयोग हेतु जो पारिस्थितिक तन्त्र में पुन: चक्रित हो जाते हैं। इस प्रक्रिया को खनिजन (Mineralisation) कहते हैं। सूक्ष्म जीवाणुओं की ऐसी असंख्य प्रजातियाँ हैं जो लिग्निन (Lignin) तथा सैलुलोस (Cellulose) को अपघटित कर देती हैं जो कि पादप कोशिका भित्तियों के जटिल पॉलीसैकेराइड्स (Polysaccharides) होते हैं। जीवाणु तथा कवक (Fungi), किरैटिन (Keratin) एवं काइटिन (Chitin) जैसे जटिल यौगिकों को अपघटित कर देते हैं। अत: सूक्ष्म जीवाणु प्राकृतिक पारिस्थितिक तन्त्रों के क्रियान्वयन में उत्पन्न महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

अत: प्राकृतिक पर्यावरण में सूक्ष्म जीवाणुओं द्वारा मुख्यत: अग्रांकित कार्य सम्पन्न होते हैं—

(a) ये कार्बनिक तत्वों को अपघटित कर देते हैं अर्थात् खनिजन (Mineralisation) कर देते हैं।

(b) ये पदार्थों को घुलनशील तथा गैसीय रूपों में बदल देते हैं। ऐसा या तो प्रत्यक्ष रूप से उपापचयी प्रक्रियाओं द्वारा होता है अथवा अप्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण में रूपान्तरण द्वारा होता है।

(c) सूक्ष्म जीवाणु अन्य जीवों द्वारा उपयोग किये जाने हेतु पदार्थों को रूपान्तरित कर देते हैं।

(d) ये परभक्षी जीवाणुओं, प्रोटोजोआ, निमेटोड्स और मृदा कीटों के लिये भोजन स्रोत का कार्य करते हैं। अत: इस प्रकार ये एक खाद्य जाल (Food Web) का निर्माण करते हैं।

(e) इनके द्वारा ऐसे निरोधी पदार्थ (Inhibitory Substances) पैदा कर दिये जाते हैं, जो सूक्ष्म जीवीय गतिविधि को कम कर देते हैं। अर्थात् ये पादप तथा जन्तुओं की उत्तरजीविता तथा क्रियाविधि को सीमित कर देते हैं।

वाहितमल के उपचार में सूक्ष्म जीवाणुओं की भूमिका
(Role of Microbes in Sewage Treatment)

घरों तथा उद्योगों से उपयोग के उपरान्त निकले जल को ही वाहित मल (Sewage) कहते हैं, इसमें विभिन्न प्रकार के रसायन, कचरा एवं सूक्ष्म जीवाणु होते हैं। वाहितमल से टाइफाइड, हैजा, पेचिश इत्यादि बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं। वाहितमल के उपचार के प्रथम चरण में तैरने वाली वस्तुओं इत्यादि को निकाल लिया जाता है तथा बचे हुए निलम्बित कणों को बैठने दिया जाता है। इस अवसादन (Sedimentation) क्रिया से कार्बनिक तत्वों से समृद्ध मिश्रण शेष रह जाता है। इस जलीय अवशेष को सूक्ष्म जीवीय अपघटन अथवा जल अपघटन के द्वितीय चरण में प्रयोग में लाया जाता है। इस चरण में जीवाणुओं, शैवालों, प्रोटोजोआ इत्यादि का एक विविध समुदाय वायवीय रूप से कागज, काष्ठ, कपड़ों, पैट्रोलियम एवं कार्बनिक अणुओं के शेष कणों का पाचन कर देता है तथा निलम्बन का निर्माण करता है, जिसे अवमल (Sludge) कहते हैं।

तत्वों के पुनर्चक्रण में सूक्ष्म जीवों की भूमिका
(Role of Microbes in Recycling of Elements)

कार्बन, फॉस्फोरस, सल्फर, नाइट्रोजन, ऑक्सीजन तथा लौह इत्यादि आवश्यक तत्वों का चक्रण पारिस्थितिक तन्त्र में जैविक भू-वैज्ञानिक विधि के माध्यम से होता है, जो कि जैव-भू-रसायनिक चक्र (Biogeochemical Cycles) के नाम से जाने जाते हैं। जैव-भू-रासायनिक चक्रों में सूक्ष्म जीवाणु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

नाइट्रोजन चक्र में नाइट्रोजन यौगिकीकरण (Nitrogen Fixation), नाइट्रीकरण (Nitrification) और विनाइट्रीकरण (Denitrification) की प्रक्रियायें होती हैं, जोकि सूक्ष्म जीवाणुओं की क्रियाओं के द्वारा नियन्त्रित की जाती हैं। नाइट्रोजन का यौगिकीकरण जीवाणुओं के द्वारा ही होता है। इसमें मुक्त जीव वायवीय एजोटोबैक्टर (Azotobacter), एजोस्पाइरिलम (Azospirillum) जीवाणुओं के कारण होता है। इनके अतिरिक्त कुछ सूक्ष्म जीवाणु भी होते हैं जो पेड़ों के साथ सहजीवी साहचर्य में भी नाइट्रोजन यौगिकीकरण बनाने में सहायता करते हैं। उदाहरणार्थ —राइजोबियम (Rhizobium) और बार्डीराइजोबियम (Bardyrhizobium), पेड़ों की फलियों के साथ, फ्रेन्किया (Frankia) लकड़ी, झाड़ियों के साथ मिलकर तथा

Scanned by CamScanner

एनाबीना (Anabaena), एजोला (Azolla) के साथ मिलकर नाइट्रोजन यौगिकीकरण करते हैं। नाइट्रीकरण नाइट्रोसोमोनास (Nitrosomonas), नाइट्रोकॉक्स (Nitrococcus) और नाइट्रोबैक्टर (Nitrobacter) जीवाणु के द्वारा पूर्ण होता है तथा विनाइट्रीकरण प्रक्रिया सूडोमोनास डिनाइट्रीफिकन्स जीवाणु के द्वारा होती है। कार्बन साइकिल (चक्र) में कार्बन का यौगिकीकरण साइनो बैक्टीरिया और हरे शैवालों (समुन्द्र में रहने वाले पौधे) की क्रिया के कारण कार्बन चक्र होता है। सल्फर चक्र बनाने के लिये भी सूक्ष्म जीवों का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान रहता है। प्रकाशसंश्लेषी सूक्ष्म जीव (Photosynthetic Micro-organism) इलैक्ट्रोन के स्रोत के रूप में सल्फ्यूराइड का उपयोग करते हुए सल्फर का पूर्ण तरह से रूपान्तरण कर देते हैं। लौह चक्र भी बहुत छोटे-छोटे जीवों की क्रियाओं पर ही निर्भर करता है। यह भी जीवों की क्रियाविधि के परिप्रेक्ष्य में बहुत अधिक उपयोगी होते हैं। थियोबैसीलस फेरोऑक्सीडन्ट (Thiobacillus Ferroxidant) और गैलीओनेला (Gallionella) नामक जीवाणु लौह चक्र में लौह का आक्सीकरण करके फैरस (Ferrous) आयन को फैरिक आयन में रूपान्तरित कर देते हैं। सूडोमोनास (Pseudomonas) भी लौह चक्र में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। अवायवीय स्थिति में सूडोमोनास लौह तत्व को अपघटित कर देता है जिसके फलस्वरूप फेरस आयन एकत्रित हो जाते हैं।

जैव कीटनाशकों तथा जैव फफूँदी नाशकों का उपयोग
(Use of Biopesticides and Biofungicides)

विश्व की आबादी तेजी से बढ़ने के कारण अनाज की पैदावार में वृद्धि करना अति आवश्यक हो गया है, जिसके लिये नयी-नयी रासायनिक खादों का प्रयोग किया जाने लगा है। इसके साथ ही फसलों का लगभग 30% भाग कीड़े-मकोड़ों एवं फसलों में लगी बीमारियों से नष्ट हो जाता है। फसलों को इन सबसे बचाने हेतु कीटनाशकों का प्रयोग होने लगा है। इनके प्रयोग से फसलों को रोगों एवं कीटों से छुटकारा मिला तथा फसलों का उत्पादन भी बढ़ा है। कीटनाशक निम्नलिखित प्रकार के होते हैं—

1. **कीटनाशी (Insecticides)**—इन्हें कीटों को मारने के लिये प्रयोग किया जाता है, जैसे—गैमेक्सीन, एल्ड्रीन तथा डी०डी०टी० आदि।

2. **फफूंद अथवा कवकनाशी (Fungicides)**—इस प्रकार के रासायनिक पदार्थों को कवकों अथवा फफूंद को समाप्त करने के लिये उपयोग में लाया जाता है, जैसे—कॉपर, गन्धक, ऑक्सीक्लोराइड इत्यादि।

3. **खरपतवारनाशी (Herbicides)**—इन रासायनिक पदार्थों को खरपतवार इत्यादि को नष्ट करने के लिये प्रयोग किया जाता है, जैसे—ऐट्राजिन, ब्यूटाक्लोर, एल्क्लोर इत्यादि।

सभी कीटनाशक अत्यन्त जहरीले होते हैं। इनका प्रयोग अधिक समय तक किये जाने पर ये भोजन के साथ मिलकर मनुष्य के शरीर में अनेकों बीमारियाँ पैदा कर देते हैं। इसके अतिरिक्त फसलों पर इनका प्रभाव भी क्षीण होने लगता है तथा इनके प्रति फसलों की प्रतिरोधकता में भी वृद्धि होती है। इनके प्रयोग करने से हानिकारक कीटों के साथ-साथ लाभकारी कीट भी मर जाते हैं। अतः इन कीटनाशकों के स्थान पर जैव कीटनाशकों (Biopesticides), जैव खरपतवारनाशकों (Bioherbicides) तथा जैव फफूंदनाशकों (Biofungicides) की खोज की गयी। सर्वप्रथम जैव खरपतवारनाशक अथवा जैवशाकनाशी (Bioherbicides) की खोज हुई जिसे कवक फाइटोफ्थोरा पाल्मीवोरा (Phytopthora Palmivora) से प्राप्त किया गया। इसी प्रकार कोलेगो (Collego) भी एक कवकीय शाकनाशी है, जिसे कवक कौलेटोट्राइकम ग्लीओस्पोरी/ऑड्स (Collectotrichum-Gloeosporioides) के कोनीडिया (Conidia) से प्राप्त किया जाता है।

जैविक पीड़कजीव नियन्त्रण (Biological Pest Control)

जैविक पीड़कजीव नियन्त्रण एक ऐसी उपयुक्त विधि है, जिसमें पीड़कजीवों को मारने के लिए अन्य जीवों का उपयोग किया जाता है तथा ये जीव जैवपीड़क जीवनाशी (Biopesticides) कहलाते हैं, जिसके उदाहरण जैव-शाकनाशी ... जैव कीटनाशी (Bioinsecticides) तथा जैव कवकनाशी (Biofungicides) इत्यादि हैं।

जैव कीटनाशकों के प्रकार (Types of Bioinsecticides)

1. **परजीवी (Parasite)**—फसलों को हानि पहुँचाने वाले कीटों को मारने के लिए ऐसे जीवाणुओं का प्रयोग करना जो पौधों के हानिकारक कीटों एवं रोगाणुओं का भक्षण कर लेते हैं। ऐसे जीवाणु कीटनाशी का कार्य करते हैं। अतः इन्हें जैव कीटनाशी की संज्ञा दी जाती है। ये जीवाणु परजीवी होते हैं।

परजीवियों, परभक्षियों तथा रोगाणुओं का उपयोग—प्रेइंग मैन्टिस अथवा लेडीबग अर्थात् मैन्टिस के उपयोग द्वारा एफिड्स (Aphids) पर नियन्त्रण किया जाता है। इसी प्रकार मक्का, कपास, सूरजमुखी आदि को प्रभावित करने वाले कीटों को बैसीलस थूरिन जियान्सिस (Bacillus Thuringiensis) (BT) जीवाणु स्पोरीन (Sporeine) के उत्परिवर्ती विभेदों (Mutant strains) द्वारा नियन्त्रित किया जाता है। सिट्रस के पौधों पर पाये जाने वाले कीड़ों (Fluted Scale Insect Incerya Purchasi) को लेडीबर्ड बीटल्स (Ladybird Beetles) द्वारा प्रभावी रूप से नियन्त्रित किया जा सकता है। इसी प्रकार मच्छरों के लारवा को गेम्बूसिया (Gambusia) मछली द्वारा नष्ट अथवा नियन्त्रित किया जा सकता है। गन्ने पर लगने वाले कीड़े को कोक्सीनेलिड (Coccinellid) परभक्षियों द्वारा नियन्त्रित किया जा सकता है।

2. **कीट हार्मोन्स (Insect Hormones)**—कीट हार्मोन्स को फैरो हार्मोन्स (Pherohormones) अथवा फेरोमोनस भी कहते हैं। इनके द्वारा कीटों को नियन्त्रित किया जाता है। ये फैरो हार्मोन्स प्रजनन काल के दौरान विपरीत लिंगी कीटों को आकर्षित करते हैं। आजकल कीटों को मृत्युपाश में फँसाने हेतु प्राकृतिक अथवा कृत्रिम फैरो हार्मोन्स का उपयोग किया जाता है। ओरिएन्ट फ्रूट फ्लाई (Orient Fruit Fly) का उन्मूलन किया जाता है।

भ्रांति तकनीक (Confusion Technique) इसी तकनीक का एक रूप है। इस तकनीक के अन्तर्गत फैरोमोन्स या विपरीत लिंगियों को आकर्षित करने वाले पदार्थों से युक्त जल विरोधी कागज (Hydrophobic Paper) को फसल के क्षेत्र में रखा जाता है, जिससे पूरे क्षेत्र मे उसकी विशेष प्रकार की गन्ध फैल जाती है जो विपरीत लिंगी कीटों को आकर्षित करती है तथा सभी विपरीत लिंगी कीट इधर-उधर भटकते हैं तथा मादा कीट के पास नर कीट नहीं पहुँच पाते हैं। इसी कारण इन कीटों की वृद्धि रुक जाती है।

3. **बंध्यीकरण तकनीक (Sterilization Technique)**—यह जैविक पीड़कनाशी जीव नियन्त्रण की आधुनिक विधि है अर्थात यह जीवों (कीटों) की वृद्धि को नियन्त्रित करने के लिए एक वैज्ञानिक विधि है जिसके अन्तर्गत नर कीटों को विकरण द्वारा बंध्यीकृत कर दिया जाता है। इसके अन्तर्गत कीटों के मिलने के समय उन पर विकिरण डालकर उनको बंध्यीकृत करके उनकी वृद्धि को रोका जाता है। स्क्रू वर्म (Screw Worm) अर्थात् कॉक्लोओमाइया होमीनीवोरेक्स (Coachliomyia Hominivorax) तथा रेड वीविल (Red Weavil) अर्थात् नारियल का पीड़क जीव का नियन्त्रण इस तकनीक से किया जाता है।

4. **प्राकृतिक कीटनाशक (Natural Insecticides)**—पादप (पेड़-पौधे) एवं सूक्ष्म जीवाणुओं से उत्पन्न होने वाले कीटनाशक ही प्राकृतिक कीटनाशक कहलाते हैं। इन कीटनाशकों का प्राकृतिक संचालन में अपना महत्वपूर्ण स्थान है अर्थात ये प्रकृति के अभिन्न अंग है। इनका कार्य कीड़े-मकोड़ों का ही भक्षण करना है। उदाहरणार्थ—रोटीनोन जो डेरिस्पी० तथा लोकोकार्पस स्पी० की जड़ों से प्राप्त होता है। ये भिन्न-भिन्न प्रकार के एल्केलाइड्स जैसे—निकोटीन तम्बाकू से, पाइरोथ्रम (Pyrethrum) व साइनेरिन (Cinerin) क्राईसेन्थिमम (Chrysanthemum) से प्राप्त होते हैं तथा एजाडिरेन्टिन (Azadirachtin), मार्गोसा (Margosa) या नीम से प्राप्त होने वाले प्राकृतिक कीटनाशक होते हैं जो नीम या मार्गोसा एजेडिरेक्टा इंडिका (Azadirachta Indica) सबसे अधिक प्राकृतिक कीटनाशक होते है जो कीटों, सूत्रकृमियों/निमेटोड्स तथा दीमक इत्यादि की लगभग दो सौ प्रजातियों के लिए प्रतिरोधी हैं।

भूमण्डलीय तापन (Global Warming)

वायु में कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) की मात्रा बढ़ने और हरित गृह प्रभाव (Green House Effect) के कारण पृथ्वी का तापमान लगातार बढ़ता जा रहा है जिसके फलस्वरूप ध्रुवों पर जमी बर्फ पिघलने लगेगी तथा उससे निकले पानी से समुद्र का तल बढ़ने लगेगा। इससे समुद्र तटीय नगर पानी में डूब जायेंगे, ध्रुव प्रदेशों पर बर्फ पिघलने लगेगी। तापमान बढ़ने से अनेक

Scanned by CamScanner

स्थान रहने योग्य नहीं रह जायेंगे। नई-नई बीमारियाँ उत्पन्न होंगी। ऐसी क्रियाये की जानी चाहिए, जिनसे तापक्रम घटे तथा वनें का प्रतिशत भी बढ़ाया जाना चाहिये। ग्रीन हाउस में काँच की दीवारों एवं छत से बना एक मकान होता है। इसके अन्दर पेड़-पौधो पर विभिन्न प्रयोग किये जाते है। इसी को ग्रीन हाउस कहते है। इस ग्रीन हाउस के अन्दर का तापमान काफी समय तक स्थिर रखा जा सकता है। पौधो के वातावरणं का ताप ठण्डो हवाओ से कम नहीं हो पाता है। सूर्य से आने वाली सम्पूर्ण विकिरण अन्दर नहीं पहुंच पाती है और न ही अन्दर से विकिरण बाहर जाने पाता है। काँच का कार्य CO_2 एवं जल वाष्प के मिश्रण की ही भाँति होता है। CO_2 के ग्रीन हाउस की भाँति व्यवहार करने को ग्रीन हाउस प्रभाव कहते है।

कुछ अन्य गैसे भी ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करती है। इसमें मुख्यत: कार्बन डाई ऑक्साइड (CO_2), मीथेन (CH_4), नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O), क्लोरोफ्लोरो कार्बन (CFC) तथा हाइड्रोफ्लोरोकार्बन (HCF) गैसें होती हैं।

वर्ष 1850 में वायुमण्डल में उपरोक्त गैसों के सान्द्रण तथा वर्ष 2030 में सम्भावित सान्द्रण के कारण वायुमण्डलीय औसत तापमान में वृद्धि निम्नानुसार होने की सम्भावना है।

→ CO_2 के कारण 71% (लगभग)

→ CH_4 के कारण 13% (लगभग)

→ N_2O के कारण 5·5% (लगभग)

→ CFC तथा HFC के कारण 10·5% (लगभग)

भूमण्डलीय तापन के प्रभाव (Effects of Global Warming)

भूमण्डलीय औसत ताप के बढ़ने अर्थात् ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव निम्नलिखित है—

1. **ध्रुवीय बर्फ का पिघलना**—ध्रुवों पर जमी हुई बर्फ के रूप में लगभग 7 मिलियन घन मीटर पानी है। यदि सम्पूर्ण बर्फ पिघल जाये तो समुद्र का तल 7-8 मीटर तक ऊँचा उठ जायेगा जिससे कई द्वीप समूचे हो जल मग्न हो जायेंगे

2. **तापमान में वृद्धि**—CO_2 की सान्द्रता इस समय 340 PPm है और सन् 2030 के लगभग इसके 640 PPm तक पहुँच जाने की सम्भावना है। यदि ऐसा हुआ तो भूमण्डल का औसत तापमान 1·5–4·5°C तक बढ़ जायेगा।

3. **समुद्र तल का बढ़ना**—भूमण्डल के औसत तापमान में 1·5–5·5°C की वृद्धि से समुद्र का तल 25 cm से 165 cm तक बढ़ जाने की सम्भावना है। पहला समुद्री जल का ऊष्मीय प्रसार एवं दूसरा ध्रुवीय बर्फ का पिघलना, अगर उपरोक्त कारणों से समुद्र तल बढ़ जाये तो खाड़ी के किनारे के क्षेत्र जैसे बांग्लादेश, अमेरिका का बोस्टन शहर, कोलकता शहर आदि निचले शहरों के पूर्ण रूप से डूब जाने का खतरा उत्पन्न हो जायेगा।

4. **प्रजातियों पर प्रभाव** (Effects on Species)—प्रत्येक पादप एवं जन्तु एक विशेष तापक्रम सीमा में जीवित रहते है। ताप वृद्धि होने पर बहुत-सी प्रजातियाँ ध्रुवों की ओर स्थानान्तरित हो सकती हैं तथा कई प्रजातियाँ जल्द स्थानान्तरित न होने के कारण मर भी सकती है। बहुत से पेड़-पौधे विलुप्त हो सकते हैं।

5. **मौसम परिवर्तन**—भूमण्डल के औसत तापमान में 3°C की वृद्धि से उच्च अक्षांश पर औसतन ताप 10°C तक बढ़ जायेगा। ग्रीन हाउस प्रभाव के कारण सर्दी की ऋतु छोटी एवं आर्द्र हो जायेगी तथा गर्मी की ऋतु लम्बी शुष्क हो जायेगी। ताप वृद्धि से वाष्पीकरण अधिक होगा एवं 7% से 11% तक वर्षा अधिक होने लगेगी।

6. **अन्न उत्पादन** (Food Production)—भूमण्डलीय ताप वृद्धि बीमारियों के अधिक बढ़ जाने, घास के अधिक उगने व पौधों की श्वसन क्रिया के तेज हो जाने के कारण फसलों की पैदावार घटा देती है। एक अनुमान के अनुसार दक्षिण पूर्व एशिया में चावल का उत्पादन प्रति 1°C ताप वृद्धि में 5% कम हो जायेगा यद्यपि वायुमण्डल में CO_2 सान्द्रण में वृद्धि फसलों की उपज बढ़ाने में सहायक होती है परन्तु विश्व का कुल अनाज उत्पादन भूमण्डलीय ताप बढ़ने पर घट जायेगा।

भूमण्डलीय तापन से बचाव के उपाय
(Remedial Measures with Global Warming)

भूमण्डलीय तापन से बचने के निम्नलिखित उपाय है—

1. जमीन के अधिक से अधिक भाग पर वृक्षारोपण करके वायुमण्डल में उपस्थित CO_2 का प्रकाश संश्लेषण कराके CO_2 का सान्द्रण कम कर सकते है।

2. भूगर्भीय ईंधन का प्रयोग कम करके तथा ऊर्जा के अन्य स्रोतों जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा आदि का विकास करके ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन कम किया जा सकता है।

3. क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC) के स्थानापन्न का विकास करके भूमण्डलीय तापन कम किया जा सकता है।

ओजोन (Ozone O_3)

स्ट्रैटोस्फियर (Stratosphere) के ऊपरी भाग में कुल O_2 का 90% भाग मौजूद है। यह मानव जाति एवं जीव-जन्तुओं के लिये एक सुरक्षा कवच का कार्य करती है। सूर्य से आने वाली पराबैंगनी किरणों को रोकती है। लेकिन पृथ्वी पर इस गैस का उपयोग संक्रामक, दोषनाशक (Disinfectant) के रूप में कपड़ों का रंग उड़ाने आदि में किया जाता है। ओजोन की हाइड्रोकार्बन से क्रिया बड़ी खतरनाक हो जाती है। इससे पैदा होने वाली गैसें धूम्र-कुहासे को जानलेवा बना देती हैं। सौर विकिरण के कारण ही ओजोन स्ट्रैटोस्फियर के ऊपरी भाग में बनती है। यह गैस खाँसी, दमा, सिर दर्द, आँख, नाक एवं गले की बीमारियां उत्पन्न करती हैं। ओजोन गैस पेड़-पौधों की पत्तियों में प्रवेश करके कोशिकाओं को नष्ट कर देती है और यह पेन्ट, रबर, बुनाई के धागे एवं रंगो को शीघ्र ही ऑक्सीकृत कर देती है।

भूतल पर ओजोन की उपस्थिति प्राणिजगत के लिये अत्यन्त ही हानिकारक है जबकि ऊपरी वायुमण्डल में यह गैस प्राणिजगत के लिये सुरक्षा कवच का कार्य करती है। गैस की पूर्ति सूर्य से निकलने वाली पराबैंगनी किरणों को अवशोषित कर लेती हैं जिससे मनुष्य इन हानिकारक विकिरणों के प्रभाव से सुरक्षित रहता है। पराबैंगनी किरणों को अवशोषित करके ओजोन गैस O_2 तथा O में बदल जाती है। दुबारा ये दोनों गैसें संयुक्त होकर O_3 बना देती है और साथ ही ऊष्मा का भी उत्सर्जन करती हैं।

$$O_3 \xrightarrow{\text{पराबैंगनी विकिरण}} O_2 + O$$

$$O_2 + O \longrightarrow O_3 + \text{ऊष्मा}$$

दोनों क्रियाओ में सन्तुलन बना रहता है। यह गैस स्ट्रैटोस्फियर में समुद्र तल से 20 से 26 किमी० की ऊँचाई के मध्य स्थित रहती है और यदि इस गैस को ऊर्ध्वाधरतः मानक ताप एवं दाब (0° सेल्सियस एवं 760 mm पारे का दाब) तक संपीडित किया जाये तो भूमध्य रेखा के ऊपर इसकी मोटाई 0·29 सेमी० (290 DU) तथा ध्रुवों के ऊपर इस पर्त की मोटाई 0·40 सेमी० (400 DU) पायी जाती है। ओजोन पर्त की मोटाई Dabson Unit (DU) में ज्ञात की जाती है।

1 DU = 0·01 mm संपीडित गैस (मानक ताप एवं दाब पर)

= 1 PPb (Part per billions)

पराबैंगनी विकिरण तीन प्रकार का होता है—

1. UV-A (320-400 nm)
2. UV-B (280-320 nm)
3. UV-C (200-280 nm)

UV-B तथा UV-C विकिरण काफी खतरनाक है जबकि UV-A खतरनाक नहीं है। सौभाग्य से UV-C ऊपरी वायुमण्डल में स्थित O_2 तथा O_3 के द्वारा अवशोषित कर ली जाती है। UV-B भी स्ट्रैटोस्फियर में O_3 द्वारा अवशोषित कर ली जाती है। इसका केवल 2 से 3 प्रतिशत भाग ही जमीन पर पहुँच पाता है।

Scanned by CamScanner

ओजोन छिद्र या ओजोन रिक्तीकरण
(Ozone Hole or Ozone Depletion)

ओजोन परत के किसी स्थान पर पतले हो जाने को ही ओजोन छिद्र या ओजोन रिक्तीकरण कहते हैं। वर्ष 1956-1970 तक बसन्त ऋतु (फरवरी-अप्रैल) में एण्टर्टिका के ऊपर ओजोन पर्त की मोटाई 325 DU से 280 DU तक बदल गयी। वर्ष 1979 में यह तेजी से घटकर 225 DU रह गयी तथा वर्ष 1985 में यह मात्र 136 DU रह गयी, इसी कमी को ओजोन छिद्र कहा गया। 200 DU से अधिक मोटी पर्त सामान्य पर्त कहलाती है तथा इससे कम मोटाई की पर्त को ओजोन छिद्र की श्रेणी में माना जाता है।

कई प्रदूषक स्ट्रेटोस्फियर में पहुँचकर ओजोन पर्त को नष्ट करते हैं। जैसे क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC_5), मीथेन (CH_4) तथा नाइट्रोजन के ऑक्साइड (NOx) इनमें से CFC_5 बहुत अधिक घातक हैं। CFC की ओजोन से क्रिया निम्न प्रकार है—

$$CFC_5 \xrightarrow{UV} Cl$$

$$\text{Halons} \xrightarrow{UV} Br$$

$$Cl + O_3 \longrightarrow ClO + O_2$$

$$ClO + O_3 \longrightarrow Cl + 2\,O_2$$

वायुमण्डल में CFC विघटन पराबैंगनी किरणों द्वारा होता है तथा इससे क्लोरीन मुक्त होती है। यह क्लोरीन फिर O_3 से क्रिया करके क्लोरीन ऑक्साइड (ClO) बनाती है तुरन्त ही क्लोरीन ऑक्साइड विघटित होकर आक्सीजन परमाणु (O) मुक्त कर देती है जो कि अणुओं में परिवर्तित हो जाती है। इस प्रकार पुनः मुक्त हुई क्लोरीन फिर ओजोन से क्रिया करती है। क्लोरीन बिना नष्ट हुए ओजोन गैस को आक्सीजन में बदलती रहती है। यह क्लोरीन 100 वर्षों तक सक्रिय रहती है और HCl में परिवर्तित होने से पूर्व एक क्लोरीन परमाणु (Cl) एक लाख ओजोन अणुओं को नष्ट कर सकता है।

क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC) का प्रयोग रेफ्रीजरेटर, वातानुकूल यंत्र, परफ्यूम, शेविंग फोम, पफ (PUF), अग्निशमन यंत्र, माइक्रोचिप्स धोने का घोल एवं कम्प्यूटर में इलेक्ट्रोनिक परिपथ बोर्ड बनाने में किया जाता है। CFC का जीवन काल (10-100) वर्ष का होता है। CFC का 90% वायुमण्डल में चला जाता है।

पराबैंगनी विकिरणों से कई तरह की बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती है, जैसे—त्वचा रोग, त्वचा कैंसर, अंधापन एवं मोतिया बिन्द आदि। पराबैंगनी किरणें पौधों की बाढ़ प्रकाश संश्लेषण एवं फुलवाड़ी को काफी नुकसान पहुँचाती हैं। बहुत से पदार्थ जैसे लकड़ी, प्लास्टिक, रबड़ आदि भी क्षतिग्रस्त हो जाते हैं।

अम्ल वर्षा (Acid Rain)

सल्फर डाईऑक्साइड (SO_2) सल्फ्यूरस अम्ल H_2SO_3 बनाती हैं।

$$SO_2 + H_2O \longrightarrow H_2SO_3$$

अम्ल वर्षा जल के pH मान को कम कर देते हैं। जब वर्षा जल का pH मान 5·7 से कम हो जाता है तब यह अम्ल वर्षा कहलाती है। वायुमण्डल में उपस्थित नाइट्रोजन ऑक्साइड गैसें भी वर्षा जल से मिलकर नाइट्रिक अम्ल (HNO_3) बनाती हैं। अम्ल वर्षा कुल 60 से 70% सल्फर डाईऑक्साइड के कारण होती है। कार्बन मोनोऑक्साइड (CO) एवं कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) भी वर्षा जल के साथ कार्बोनिक अम्ल बनाते हैं जोकि जल को अम्लीय बना देते हैं। कुछ स्थानों पर अम्ल वर्षा का pH मान 2·8 तक पाया गया है। अम्ल वर्षा से होने वाले प्रभाव निम्नलिखित हैं—

1. पेड़ पौधों पर प्रभाव (Effect on Plants)—अम्ल वर्षा से पौधे नष्ट हो जाते हैं तथा पत्तों का रंग भी उड़ने लगता है एव पत्तों के क्लोरोफिल की कमी के कारण फसल की बढ़त भी रुक जाती है।

2. जीव-जन्तुओं पर प्रभाव (Effect on Animals)—जल में रहने वाले सभी जीव 4 से कम pH मान की वर्षा की एक बूंद भी सहन नहीं कर सकते हैं। सामान्यतः 6 से कम pH पर कई अल्गाई (algae) जैसी कोमल वनस्पतियाँ भी नष्ट हो जाती हैं।

3. पदार्थों पर प्रभाव (Effect on Materials)—सल्फ्यूरिक अम्ल एक तीव्र क्रियाशील एवं क्षयकारी (Corrosive) है। इसके प्रभाव से लोहे की सतह पर नीला $FeSO_4$, कॉपर की सतह पर हरा $CuSO_4$ एवं ऐलुमिनियम की सतह पर सफेद $Al_2(SO_4)_3$ जम जाता है। यह कपड़े, कागज तथा चर्म उत्पादों का रंग उड़ा देता है और उनकी सामर्थ्य भी नष्ट कर देता है।

अम्ल वर्षा से विशेषकर क्षारीय भवन निर्माण सामग्री जैसे चूना पत्थर, डोलोमाइट स्लेट एवं संगमरमर आदि खराब हो जाते हैं। इनकी सतह खुरदरी एवं कमजोर हो जाती है। $CaCO_3$ को यह $CaSO_4$ में बदल देता है जो जल में घुलनशील होता है।

प्रकृति संरक्षण के अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास
(International Efforts for Conservation of Nature)

प्रकृति के संरक्षण हेतु किये गये कुछ अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास निम्नलिखित हैं—

1. वर्ष 1977 में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP) के सहयोग से ओजोन पर्त की सुरक्षा पर एक विश्वव्यापी योजना हेतु वाशिंगटन में 32 देशों की एक बैठक बुलायी गयी।

2. **मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल** (Montreal Protocol)—वर्ष 1987 में विश्व के 27 औद्योगिक देशों ने स्ट्रैटोस्फियर में स्थित ओजोन पर्त की सुरक्षा हेतु एक अन्तर्राष्ट्रीय सहमति पत्र पर हस्ताक्षर किये। इसी सहमति पत्र को मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल कहते हैं। इस प्रोटोकॉल के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित है—

(i) ओजोन नष्ट करने वाले पदार्थों को बदल देना।

(ii) CFC के स्थान पर अन्य पदार्थों के प्रयोग में विकासशील देशों की सहायता करना।

(iii) ओजोन पर्त को नष्ट करने वाले पदार्थों का उत्पादन कम करना।

अब तक कुल 175 से अधिक देश इस सहमति पत्र पर हस्ताक्षर कर चुके हैं। भारत ने 17 सितम्बर 1992 को इस पर हस्ताक्षर किये थे। वर्ष 1987 से प्रत्येक वर्ष 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस के रूप में मनाया जाता है।

3. **टोरन्टो सम्मेलन** (Toronto Conference)—कनाडा के टोरन्टो सिटी में जून 1988 में एक विश्व सम्मेलन का आयोजन किया गया था जिसमें 2005 तक कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) के उत्सर्जन में 20% तक की कमी करने का निर्णय लिया गया था परन्तु इसके अनुपालन में अनेकों व्यावहारिक समस्याएं थीं।

4. **भू-शिखर सम्मेलन** (Earth Summit)—संयुक्त राष्ट्र शिखर सम्मेलन (UNCED) वर्ष 1992 में पर्यावरण पर ब्राजील के रियोडी जैनेरो में आयोजित किया गया था। इसे ही भू-शिखर सम्मेलन कहते हैं। इस सम्मेलन में ग्रीन हाउस गैसों को कम करने पर विचार किया गया।

5. **क्योटो प्रोटोकॉल** (Kyoto Protocol)—दिसम्बर 1997 में जापान के क्योटो शहर में एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन किया गया। इसमें सभी देशों द्वारा तय किया गया कि वर्ष 2008 से 2012 तक ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में 1990 के स्तर से 5% की कमी अवश्य की जाये।

6. जून 1997 में न्यूयार्क में पृथ्वी सम्मेलन समीक्षा सम्मेलन आयोजित किया गया। इसमें 170 देशों से अधिक ने भाग लिया। इसमें ग्रीन हाउस प्रभाव तथा ओजोन छिद्र के खतरों पर चर्चा की गयी।

7. **मराकस सम्मेलन**—मोरक्को के मराकस शहर में वैश्विक ताप वृद्धि रोकने के लिये वर्ष 2001 में बनायी गयी आचार संहिता पर 165 देशों ने हस्ताक्षर किये।

Scanned by CamScanner

8. सितम्बर 1998 में मॉंट्रियल (कनाडा) में 47 देशों की एक बैठक बुलायी गयी, जिसमें CFC तथा हैलन्स के उत्पादन पर 15 वर्ष में पूर्ण प्रतिबन्ध का निर्णय लिया गया।

प्रश्नावली

1. पारिस्थितिकी क्या है? पारिस्थितिकी तन्त्र के निर्माण हेतु प्रकृति के सजीव एवं निर्जीव अवयवों की परस्पर प्रक्रिया के दर्शाते हुए रेखांकित चित्र बनाइये। (B.T.E. 95, 98, 2015)
2. जैव विविधता से आप क्या समझते है? वर्णन कीजिए। (B.T.E. 2012, 13)
3. पारिस्थितिकी एवं परितन्त्र पर मानवीय क्रियाओं का क्या प्रभाव पड़ता है?
4. विभिन्न प्रकार के विकास कार्यों का उल्लेख करते हुए समझाइये कि उनका पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ता है? (B.T.E. 2008)
5. खनन कार्य से पर्यावरण कैसे प्रदूषित होता है? (B.T.E. 2010)
6. जंगल की कटाई से मानव जाति किस प्रकार प्रभावित होती है?
7. जैव विविधता, औद्योगीकरण, सड़कों का विकास, खनन, जंगलों की कटाई पर संक्षिप्त टिप्पणी करो। (B.T.E. 2008, 2011, 2016)
8. शहरीकरण का भौम जल स्तर पर क्या प्रभाव पड़ता है?
9. जैव अपघटन क्या है तथा जैव अपघटनशीलता के बारे में भी बताइये।
10. कम्पोस्ट खाद बनाने की विधियों का वर्णन करो।
11. जैव उपचार, जैव कीटनाशक एवं जैव फफूंद नाशक का संक्षिप्त परिचय एवं उनके उपयोग बताओ। (B.T.E. 2012. 13)
12. भूमण्डल किन कारणों से गर्म होता जा रहा है, बताओ।
13. पादप गृह प्रभाव, अम्ल वर्षा, ओजोन परत का नष्ट होना, सूक्ष्म जीवाणु, ओजोन (O_3) गैस पर संक्षिप्त में टिप्पणी करो। (B.T.E. 2008, 09, 12, 13)
14. पर्यावरण क्या है? इसको कितने भागों में रखा गया है तथा पर्यावरण को प्रभावित करने वाले कारक बताओ (B.T.E. 2000, 2003)
15. जीवमण्डल क्या है? इसकी विशेषताएँ बताओ। (B.T.E. 1995)
16. समुद्री इकोतन्त्र क्या है तथा इसको प्रभावित करने वाले कारको को स्पष्ट करें।
17. स्थलीय इकोतन्त्र क्या है? इसको प्रभावित करने वाले कारकों के केवल नाम स्पष्ट करो।
18. Ecology सन्तुलन प्रदूषित पर्यावरण से किस प्रकार असन्तुलित होता है?
19. इकोतन्त्र के रचनात्मक एवं कार्यशील अवयवों का अर्थपूर्वक वर्णन करो। किसी समुदाय का भौगोलिक क्षेत्र में पारस्परिक सन्तुलन बनाये रखना क्यों आवश्यक है? (B.T.E. 1994)
20. प्राकृतिक ताल परितन्त्र के विभिन्न अवयवों का संक्षिप्त रेखाचित्र बनाइये। (B.T.E. 1996)
21. परितन्त्र किसे कहते है? परितन्त्र पर निर्वनीकरण के होने वाले प्रभावों की विवेचना कीजिए। (B.T.E. 2006)
22. भूजल का तल, विशेष रूप से नगरीय क्षेत्रो में नीचे उतरने के कारणों को स्पष्ट करो। (B.T.E. 2006, 15)
23. विभिन्न विकासात्मक प्रक्रियाओं के फलस्वरूप वन कटाई की विवेचना करो। (B.T.E. 2008)
24. रेगिस्तानी तथा उत्तरी ध्रुवीय प्रदेशों की पारिस्थितिक प्रणाली में अन्तर करें। इस सन्तुलन के महत्व बताओ। (B.T.E. 2009)
25. वर्षा व तापमान के आधार पर जंगलों का वर्गीकरण करें। जंगल कटाई के दुष्परिणामों को समझाओ। (B.T.E. 2010)
26. पारिस्थितिकी शाखायें कौन-कौन सी है? प्रत्येक का संक्षिप्त वर्णन करो तथा मूल सिद्धान्त भी लिखो।
27. पारिस्थितिकी तन्त्र की मूल अवधारणा तथा अर्थ व विशेषताएं बताते हुए उनका वर्गीकरण कीजिए।
28. पारिस्थितिकी तन्त्र के घटक कौन-कौन से है? उनके कार्य बताओ। (B.T.E. 2016)
29. पारिस्थितिकी तथा पारिस्थितिक तन्त्र में क्या अन्तर है? पारिस्थितिक तन्त्र में ऊर्जा के प्रवाह को बताओ।

30. जैव विविधता के महत्व को समझाओ। इसके घटने को नियन्त्रित करने की विधियां को बताइये। (B.T.E. 2008, 2009, 2011, 2017)
31. खाद शृंखला, खाद जाल तथा पारिस्थितिक पिरैमिड पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो।
32. पारिस्थितिक तन्त्रों पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो—अलवणीय जलीय ताल, वन, सागरीय।
33. जैव विविधता के लाभ व कार्य तथा कमी आने के कारण बताओ।
34. निम्नांकित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए। हरित गृह प्रभाव, शहरीकरण, नगरीय क्षेत्र में भू-जल तल का नीचा होना, सिंचाई, नगरीकरण, राजमार्ग। (B.T.E. 2009, 2011, 2012)
35. भूमण्डलीय तापन से क्या अभिप्राय है? इसके प्रभाव भी लिखो। (B.T.E. 2007)
36. ओजोन की परत के अवक्षय के क्या कारण है? दीर्घकाल में ऐसे अवक्षय के फलस्वरूप होने वाले परिणामों को स्पष्ट करो। (B.T.E. 2011, 12, 13, 14)
37. रेगिस्तानी और उत्तरी ध्रुवीय प्रदेशों की पारिस्थितिकी प्रणाली में अन्तर स्पष्ट कीजिए। इस सन्तुलन के महत्व को समझाइए। (B.T.E. 2009, 13)
38. परितन्त्र (Ecosystem) किसे कहते हैं? एक उदाहरण की सहायता से परितन्त्र के विभिन्न घटक स्पष्ट कीजिए। (B.T.E. 2006, 2011, 12)
39. नगरीकरण (Urbanisation) तथा अन्य अभियन्त्रण क्रियाओं के परितन्त्र एवं पारिस्थितिकी (Ecology) पर पड़ने वाले प्रभावों की विवेचना कीजिए। (B.T.E. 2012, 15)
40. परितन्त्र पर खनन (Mining) के प्रभावों की विवेचना कीजिए। (B.T.E. 2012, 14)
41. पारिस्थितिकी तथा परितन्त्र पर सिंचाई परियोजना से पड़ने वाले प्रभावों की विवेचना कीजिए। (B.T.E. 2013, 15)
42. शहरों में भूजल स्तर नीचे होने के कारण तथा प्रभावों की विवेचना कीजिए। इसके सुधार हेतु आप किन कार्यवाहियों की अनुशंसा करेंगे? (B.T.E. 2013)
43. कम्पोस्टिंग का पद स्पष्ट कीजिए। (B.T.E. 2013)
44. पद स्पष्ट करे—
    (i) जैव अवकरणीयता (Bio-gradibility) (ii) जैव कवकनाशक (Bio-fungicides) (BTE 2014)
45. परितन्त्र क्या है? एक उदाहरण की सहायता से परितन्त्र के विभिन्न घटक (Components) स्पष्ट करें। (BTE 2015)
46. जैव कीटनाशक तथा जैव कवकनाशक के प्रयोग पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें। (BTE-2015)
47. खनन एवं निर्वनीकरण के प्रभाव पर टिप्पणी लिखे। (BTE-2015)
48. पारिस्थितिक सन्तुलन के क्या अर्थ है? उन कारकों की विवेचना करें जो पारिस्थितिक सन्तुलन बनाये रखते है। (BTE-2016)
49. पारिस्थितिक सन्तुलन के क्या अर्थ है? उन कारकों की विवेचना करें जिनके कारण पारिस्थितिक असन्तुलन उत्पन्न होता है। (BTE-2017)
50. पारिस्थितिकी (Ecology) पर निर्वनीकरण (Deforestation) के प्रभाव की विवेचना करें। (BTE-2017)

❑

Scanned by CamScanner

अध्याय 2

वायु प्रदूषण (Air-Pollution)

परिचय (Introduction)

वायु सभी मनुष्यों, जीवों एवं वनस्पतियों के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इसकी महत्ता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि मनुष्य भोजन के बिना हफ्तों तक, जल के बिना कुछ दिनों तक ही जीवित रह सकता है किन्तु वायु के बिना उसका जीवित रहना असम्भव है। मनुष्य दिनभर में जो कुछ लेता है उसका 80% भाग वायु है। ध्यातव्य है कि मनुष्य प्रतिदिन 22000 बार सांस लेता है। इस प्रकार वह प्रत्येक दिन 16 kg या 35 गैलन वायु ग्रहण करता है। वायु विभिन्न गैसों का मिश्रण है जिसमें नाइट्रोजन की मात्रा सर्वाधिक अर्थात् 78% होती है जबकि 21% ऑक्सीजन तथा 0·03% कार्बनडाई ऑक्साइड पायी जाती है तथा शेष में 0·97% में हाइड्रोजन, हीलियम, आर्गन, निओन, क्रिप्टन, जीनोन, ओजोन एवं जल वाष्प होती है। वायु में विभिन्न गैसों की उपरोक्त मात्रा उसे सन्तुलित बनाये रखती हैं। इनमें जरा सा भी अन्तर आने पर यह असन्तुलित हो जाती है और स्वास्थ्य के लिए हानिकारक साबित होती है। श्वसन के लिए ऑक्सीजन जरूरी है। जब कभी वायु में कार्बनडाई-ऑक्साइड, कार्बन-मोनोऑक्साइड, सल्फर-डाईऑक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइडों की वृद्धि हो जाती है तो ऐसी वायु को प्रदूषित वायु तथा इस प्रकार के प्रदूषण को वायु प्रदूषण कहते हैं। अत: इसकी परिभाषा हम निम्न प्रकार दे सकते हैं—

"प्राकृतिक तथा मानव जनित स्रोतों से उत्पन्न बाहरी तत्वों के वायु में मिश्रण के कारण वायु की असन्तुलित दशा को वायु प्रदूषण कहते हैं तथा जिन कारकों से वायु प्रदूषित होती है, उन्हें वायु प्रदूषक कहते हैं।"

इस प्रकार असन्तुलित वायु की गुणवत्ता में ह्रास हो जाता है और वह जीव-जन्तुओं एवं पादपों के लिए हानिकारक हो जाती है।

वायु प्रदूषण की परिभाषा (Definition of Air Pollution)—हेनरी परकिन्स (Henry Perkins) ने वायु प्रदूषण की एक स्वीकार्य परिभाषा निम्न प्रकार दी—"बाह्य पर्यावरण में धूल, धुआँ, गैस, तुषार, गन्ध एवं वाष्प में से एक या अधिक प्रदूषकों की हानिकारक मात्रा एवं दीर्घ अवधि तक उपस्थिति जो मनुष्य, जानवरों, पेड़-पौधों एवं सम्पत्ति के लिए घातक हो अथवा तर्कहीन ढंग से जीवन और सम्पति के आनन्दमय उपभोग में बाधक हो, वायु प्रदूषण कहलाता है।"

विश्व स्वास्थ्य संगठन (W.H.O.)—"वायु प्रदूषण एक ऐसी परिस्थिति है जिसमें बाह्य वायुमण्डल में ऐसे पदार्थ एकत्र हो जाते है जो मनुष्य एवं उसके पर्यावरण के लिए हानिकारक होते हैं।"

प्रदूषण मुक्त वायु का संगठन (Composition of Pollution Free Air)

वायु में पायी जाने वाली गैसो की प्रतिशत मात्रा दी गई तालिका के अनुसार निम्नवत है—

क्रमांक	घटक	प्रतिशत में	ppm (आयतन में)
1.	नाइट्रोजन (Nitrogen)	78·08	780800·00
2.	ऑक्सीजन (Oxygen)	20·94	209400·00
3.	ऑर्गन (Organ)	0·934	9340·00
4.	कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2)	0·0315	315·00
5.	निओन (Neon)	0·0018	18·00
6.	हीलियम (Helium)	0·0005	5·00
7.	मीथेन (Methane)	0·0001–0·00015	100–1·50
8	क्रिप्टन (Krypton)	0·00011	1·10
9.	नाइट्रस ऑक्साइड (NO_2)	0·00005	0·50
10.	हाइड्रोजन (Hydrogen)	0·00005	0·50
11.	कार्बन मोनोऑक्साइड (CO)	0·00001	0·10
12.	जीनोन (Zenon)	0·000008	0·08
13.	ओजोन (Ozone)	0·000002	0·02
14.	अमोनिया (Ammonia)	0·000001	0·01
15.	नाइट्रोजन डाई-ऑक्साइड (NO_2)	0·000001	0·01
16.	सल्फर डाई-ऑक्साइड (SO_2)	0·00000002	0·0002
17.	रेडान (Radon)	$0{\cdot}06\times10^{-8}$	$0{\cdot}06\times10^{-14}$

वायु गुणवत्ता सूचकांक के मुताबिक पीएम 2.5 का स्तर और प्रभाव

सूचकांक	स्तर	स्थिति	स्वास्थ्य पर प्रभाव
0-50	हरा	अच्छी	स्वास्थ्य के लिए हानिकारक नहीं
51-100	पीला	संतोषजनक	संवेदनशील लोगों के लिए नुकसानदायक
101-150	नारंगी	मध्यम प्रदूषित	बुजुर्गों और बच्चों के लिए घातक
151-200	लाल	कमजोर गुणवत्ता	सभी के स्वास्थ्य के लिए नुकसानदायक
201-300	बैंगनी	गंभीर हालत	सभी के स्वास्थ्य के लिए गंभीर समस्या
301-500	गहरा भूरा	बेहद गम्भीर हालत	जीना दूभर

(आंकड़े माइक्रोग्राम प्रति क्यूबिक मीटर में)

वायु प्रदूषकों के प्रकार (Types of Air-pollutants)

वायु प्रदूषकों को निम्न दो वर्गों में बाँटा गया है—

(1) प्राकृतिक वायु प्रदूषक (Natural Air-pollutant)

(2) कृत्रिम वायु प्रदूषक (Artificial Air-pollutant)

(1) प्राकृतिक वायु प्रदूषक (Natural Air-pollutant)

प्राकृतिक स्रोतों से उत्पन्न वायु के प्रदूषकों को निम्न वर्गों में बांटा गया है—

(i) ज्वालामुखी के उद्गार से निकली राख, धूल, धुँआ, कार्बन डाई-ऑक्साइड, हाइड्रोजन तथा अन्य गैसें।

(ii) आँधी तूफान के समय उड़ती धूल।

(iii) तनों में लगी आग से उत्पन्न धुँआ तथा कार्बन डाई-ऑक्साइड गैस।

(iv) दलदलों तथा अनूपों में अपघटित होने वाली पदार्थों से निकली मीथेन गैस।

(v) बैक्टीरिया से निर्मुक्त कार्बन डाई-ऑक्साइड।

(vi) कवक से उत्पन्न जीवाणु एवं वायरस आदि।

(vii) फूलों के परागकण से निर्मुक्त कार्बन डाई-ऑक्साइड।

(viii) धूमकेतु, क्षुद्रग्रह एवं उल्काओं आदि के पृथ्वी से टकराने के कारण उत्पन्न कास्मिक धूल।

Scanned by CamScanner

(2) कृत्रिम वायु प्रदूषक (Artificial Air-pollutant)

मानवीय क्रिया-कलापों से उत्पन्न होने वाले प्रदूषक कृत्रिम वायु प्रदूषक कहलाते है। ये निम्न तीन प्रकार के होते है—

(i) कार्बन डाई-ऑक्साइड
(ii) कार्बन मोनो-ऑक्साइड
(iii) सल्फर के ऑक्साइड
(iv) नाइट्रोजन के ऑक्साइड
(v) क्लोरीन
(vi) सीसा
(vii) अमोनिया
(viii) कैडमियम
(ix) बेंजीपाइस
(x) हाइड्रोकार्बन
(xi) धूल।

ये कृत्रिम वायु प्रदूषक निम्न मानवीय क्रिया-कलापों के कारण उत्पन्न होते हैं—

(i) दहन प्रक्रिया द्वारा
(ii) कृषि कार्यों द्वारा
(iii) औद्योगिक निर्माणों द्वारा
(iv) विलायकों के उपयोग द्वारा
(v) आणविक ऊर्जा सम्बन्धी परियोजनाओं द्वारा
(vi) अन्य कारणों द्वारा।

(i) दहन प्रक्रिया द्वारा

ऊर्जा आज के जीवन की महती आवश्यकता है। ऊर्जा के बिना वर्तमन के क्रिया-कलाप सम्भव नहीं। खाना पकाने से लेकर ईंट-सीमेन्ट आदि के निर्माण में ऊर्जा की आवश्यकता होती है। वाहनों एवं मशीनों आदि के चालन में भी ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह ऊर्जा विभिन्न प्रकार के ईंधनों के दहन से प्राप्त होती है। दहन की प्रक्रिया को निम्न तीन वर्गों में बांट सकते हैं—

(क) घरेलू कार्यों में दहन
(ख) वाहनों में दहन
(ग) ताप-विद्युत ऊर्जा हेतु दहन।

(क) घरेलू कार्यों में दहन—घरेलू कार्यों के लिए जो ऊर्जा प्रयोग की जाती है, वह कोयले, लकड़ी, कुकिंग गैस, मिट्टी के तेल आदि से प्राप्त होती है। इन ईंधनों के दहन से कार्बन डाई-ऑक्साइड, कार्बन मोनो-ऑक्साइड, सल्फर डाई-ऑक्साइड आदि गैसे उत्पन्न होती है। ईंधनो के अपूर्ण दहन से कई प्रकार के हाइड्रोकार्बन एवं साइक्लिक पाइरीन यौगिक उत्पन्न होते है। इस प्रकार के दहन से वायुमण्डल में दो प्रकार का प्रभाव पड़ता है। एक तो यह कि अनेक हानिकारक गैसें वायु में मिलकर उसे प्रदूषित करती है और दूसरी तरफ वायु में उपस्थित ऑक्सीजन की मात्रा में कमी आती है, जो कि जीवन के लिए खतरनाक है। देश की कुल ऊर्जा का आधा भाग केवल रसोईघरों में खर्च होता है तथा देश के कुल प्रदूषण का 1/3 भाग केवल रसोईघरों में उत्पन्न होता है।

(ख) वाहनों में दहन—वायु प्रदूषण के लिए वाहन भी कम उत्तरदायी नहीं है। बसों, ट्रकों, कारों, मोटर साइकिल, स्कूटर, डीजल रेलों आदि सभी में दहन के लिए पेट्रोल अथवा डीजल ईंधन के रूप में प्रयोग किये जाते हैं। इनसे भारी मात्रा में

दम घुटने वाला काला धुँआ निकलता है, जो वायु को प्रदूषित करता है। डीजल वाहनों से जो धुंआ निकलता है, उसमें हाइड्रोकार्बन, नाइट्रोजन एव सल्फर के ऑक्साइड एवं सूक्ष्म कार्बनमयी कणिकायें मौजूद रहती हैं। लेड एक वायु प्रदूषक पदार्थ है। ध्यातव्य है कि डीजल चालित वाहनो की अपेक्षा पेट्रोल चालित वाहनों में प्रदूषण अधिक होता है। एक अनुमान के अनुसार एक मोटरगाड़ी एक मिनट में इतनी अधिक मात्रा में ऑक्सीजन खर्च करती है, जितनी 1135 व्यक्ति सांस लेने में प्रयोग करते हैं। डीजल एवं पेट्रोल चालित वाहनो से होने वाले दहन में नाइट्रोजन ऑक्साइड व नाइट्रोजन डाई ऑक्साइड भी उत्पन्न होती है, जो सूर्य के प्रकाश मे हाइड्रोकार्बन से क्रिया करके रासायनिक धूम कोहरे को जन्म देते हैं। यह रासायनिक धूम कोहरा मानव के लिए बहुत हानिकारक है। सन् 1952 में पाँच दिनों तक लंदन शहर धूम कुहरे से घिरा रहा, जिससे 4000 लोग मौत के शिकार हो गये तथा करोड़ों लोग ह्रदय रोग तथा ब्रोंकाइटिस के शिकार हो गये थे।

एक हजार गैलन पैंट्रोल का प्रयोग करने वाले वाहनों द्वारा उत्सर्जित पदार्थ

क्रमांक	उत्सर्जी पदार्थ	मात्रा (किलोग्राम में)
1.	कार्बन मोनोऑक्साइड	1280
2.	कार्बनिक वाष्प	80 से 160
3.	नाइट्रोजन के ऑक्साइड	8 से 30
4.	विभिन्न एल्डिहाइड	7·2
5.	गन्धक के यौगिक	6·8
6.	कार्बनिक अम्ल	0·8
7.	अमोनिया	0·8
8.	जस्ता तथा अन्य धातुओ के ऑक्साइड	0·13

दिल्ली विश्व का तीसरा व भारत का सर्वाधिक प्रदूषित शहर है। इसकी गम्भीरता को देखते हुए उच्चतम न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश डॉ० ए० एस० आनन्द, न्यायमूर्ति श्री बी० एन० कृपाल और न्यायमूर्ति श्री ए० के० खरे की खण्डपीठ ने महेश चन्द्र मेहता की जनहित याचिका पर सुनवाई करते हुए 12 सितम्बर 1988 को दिल्ली सरकार को यह निर्देश दिया था कि सरकार लॉस एंजिल्स की तर्ज पर दिल्ली मे ऑक्साइड स्तर को नियन्त्रित करे।

देश के प्रमुख शहरों में मोटर वाहनों द्वारा उत्सर्जित प्रदूषक (टन प्रतिदिन)

क्रमांक	शहर	सूक्ष्म कण	सल्फर डाई ऑक्साइड	नाइट्रोजन ऑक्साइड	कार्बन मोनो ऑक्साइड
1.	दिल्ली	8·58	7·4	105·38	452·51
2.	मुम्बई	4·66	3·36	59·02	391·6
3.	बेंगलुरू	12·18	1·47	21·85	162·8
4.	कोलकाता	2·71	3·04	45·58	156·87
5.	चेन्नई	1·95	1·68	23·91	119·35
6.	भारत (अनुमानित)	60	630	270	2040

देश में वाहनो से प्रतिदिन 60 टन सूक्ष्म कण, 630 टन सल्फर डाई-ऑक्साइड, 270 टन नाइट्रोजन ऑक्साइड तथा 2040 टन कार्बन डाई-ऑक्साइड उत्सर्जित होती है।

(ग) ताप-विद्युत ऊर्जा हेतु दहन—देश के अधिकांश ताप विद्युत गृहों में ईंधन के रूप में कोयला प्रयुक्त किया जाता है जिसके जलने से कार्बन डाई-ऑक्साइड, सल्फर डाई-ऑक्साइड, धुँआ तथा अन्य गैसे उत्पन्न होती है। भारतीय कोयले में अन्य देशों के कोयले की तुलना मे 25% से 40% तक फ्लाई एश होता है और गन्धक की मात्रा सामान्य से एक प्रतिशत तक

Scanned by CamScanner

कम होती है, जिसकी वजह से 200 मेगावाट का बिजली घर लगभग 50 टन सल्फर डाई-ऑक्साइड तथा 50 टन से अधिक कालिख बाहर फेंकता है। कोयले को जलाने पर अवशिष्ट के रूप में जो राख बाहर निकलती है, वह राख हवा के साथ उड़कर वायु को दूषित करती है।

(ii) कृषि कार्यों द्वारा

कृषि कार्यों में कीटनाशी व जीवाणुनाशी का प्रयोग निरन्तर बढ़ता जा रहा है। विश्व में भारत सर्वाधिक पेस्टीसाइड उत्पादक देश है। एक अनुमान के अनुसार 1933 में देश में लगभग 84045 टन कीटनाशक दवाओं का प्रयोग किया गया था। जब ये कीटनाशक दवायें छिड़की जाती हैं तो ये कण उड़कर हवा में मिल जाती हैं और वायु प्रदूषण का कारण बनती हैं। कभी-कभी इनका छिड़काव वायुयानों द्वारा भी किया जाता है।

(iii) औद्योगिक निर्माणों द्वारा

कल-कारखानों से धुँआ, गैस तथा कुछ कणयुक्त पदार्थ निकलते हैं, जो वायु प्रदूषण का कारण बनते हैं। वायु प्रदूषण कागज बनाने के कारखानों, तेल शोधक कारखानों, रासायनिक उद्योगों, चीनी बनाने के कारखानों, धातुकर्म एवं गत्ता निर्माण करने वाले कारखानों से सर्वाधिक होता है। इन कारखानों से कार्बन डाई-ऑक्साइड, सल्फर, सीसा, बेरीलियम, जिंक, कैडमियम पारा तथा धूल वायुमण्डल में पहुँचती है, जिससे वायु दूषित होती है।

पूर्वी अमेरिका तथा उत्तर पश्चिमी यूरोप में औद्योगिक क्षेत्रों के वायुमण्डल में इतनी मात्रा में सल्फर डाई-ऑक्साइड मौजूद है कि वर्षा के समय गिरने वाला जल, जल न होकर सल्फ्यूरिक अम्ल होता है। इसे ही तेजाबी वर्षा कहते हैं। वायु प्रदूषण की स्थिति इतनी गम्भीर है कि अन्य देशों में इसके घातक परिणामों से बचाव के लिए चेतावनी दी जा रही है। यू० एस० अमेरिका में लास एंजिल्स की स्थिति इतनी भयावह थी कि यहाँ के स्कूलों के क्रीड़ा मैदानों में यह चेतावनी दी गयी थी कि 'सावधान अत्यधिक धुएँ की स्थिति में व्यायाम न करें और न ही गहरी साँस लें।' भारत में वायु प्रदूषण की स्थिति भयावह है। यहाँ के वायुमण्डल में सल्फर डाई-ऑक्साइड एवं धूल कणों की मात्रा बहुत अधिक है। देश के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में दिल्ली, अहमदाबाद, मुम्बई, कानपुर आदि हैं। दिल्ली की वायु में धूलकणों की सान्द्रता 700 माइक्रोग्राम/घन मी० आंकी गयी है जो देश के अन्य महानगरों की तुलना में सबसे अधिक है। अहमदाबाद में कपड़े की मिलें हैं, जिनसे अधिक मात्रा में धुआँ निकलता है। इसके अतिरिक्त यहाँ धुएँ के बादल छाये रहते हैं। यहाँ के लोग दमा एवं श्वसन सम्बन्धी बीमारियों से अधिक पीड़ित रहते हैं। मुम्बई की अधिकांश औद्योगिक इकाइयाँ चेम्बूर ट्राम्बे में स्थित हैं। यहाँ के वायुमण्डल में धूल कणों की सान्द्रता 238 माइक्रोग्राम/घन मी० है। कानपुर में चर्मशालायें, कपड़ा मिलें, रसायन एवं दवा बनाने वाले कारखाने अधिक हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार शहर के स्वच्छ वायु वाले क्षेत्रों की तुलना में वायु प्रदूषित वाले क्षेत्रों में एक बच्चे की लम्बाई 4 सेमी तथा वजन 3 kg कम पाया गया है।

(iv) विलायकों के उपयोग द्वारा

फर्नीचरों पर की जाने वाली पॉलिश एवं स्प्रे पेन्ट बनाने में विलायक इस्तेमाल किये जाते हैं और इनमें अधिकतर वाष्पशील हाइड्रोकार्बन होते हैं। जब फर्नीचर पर स्प्रे पॉलिश अथवा पेन्ट किया जाता है तो ये हाइड्रोकार्बन उड़कर वायु में मिलकर वायु को प्रदूषित करते हैं।

(v) आण्विक ऊर्जा सम्बन्धी परियोजनाओं द्वारा

परमाणु बमों एवं परमाणु विद्युत के उत्पादन में जिन रेडियोएक्टिव पदार्थों का प्रयोग किया जाता है, इनकी स्थिति खतरनाक होती है। विस्फोट के समय ये रेडियोधर्मिक कण दूर-दूर तक वायुमण्डल में फैल जाते हैं तथा बाद में पृथ्वी पर अवपात के रूप में गिरते हैं, जो अपना घातक प्रभाव छोड़ते हैं। हिरोशिमा एवं नागासाकी पर गिराये गए परमाणु बमों का प्रभाव वहाँ लम्बे समय तक रहा है।

(vi) वायु प्रदूषण के अन्य कारण

(क) जानवरों के शवों द्वारा—भारत में मृत जानवरों की खाल निकालने की परम्परा है। मृत जानवरों को बस्तियों से [illegible] खुले में छोड़ देते हैं। जब ये शव सड़ते हैं तो अत्यधिक दुर्गन्ध निकलती है।

(ख) शौचालयों की सफाई न होना—सार्वजनिक व व्यक्तिगत शौचालयों की सफाई न होने से क्षेत्र विशेष की वायु प्रदूषित होती है।

(ग) कूड़े-कचरे का सड़ना एवं नालियों की सफाई न होना—लोग प्रायः अपने घर के बाहर एवं सड़क पर कूड़ा कचरा फेंक देते हैं जो दुर्गन्ध फैलाता है व इसमें विभिन्न बीमारियों के विषाणु पनपते हैं जिससे मानव स्वास्थ्य प्रभावित होता है। धूम्रपान, धूल, कूड़े करकट का जलाया जाना आदि भी प्रदूषण के प्रमुख कारण हैं।

वायु प्रदूषण का प्रभाव (Effect of Air Pollution)

वैसे सभी प्रकार के प्रदूषणों का प्रभाव खतरनाक होता है, परन्तु वायु प्रदूषण का प्रभाव काफी व्यापक है। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से वायु प्रदूषण के प्रभाव को निम्न प्रकार से वर्गीकृत कर सकते हैं—

(1) मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव।
(2) जीव-जन्तुओं पर प्रभाव।
(3) पेड़-पौधों एवं वनस्पतियों पर प्रभाव।
(4) जलवायु एवं मौसम पर प्रभाव।
(5) [illegible] पर प्रभाव।
(6) इमारतों पर प्रभाव।
(7) अन्य प्रभाव।

(1) मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव (Effect on Human Health)

वायु प्रदूषण का मानव स्वास्थ्य पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। इससे मानव का श्वसन तन्त्र प्रभावित होता है, वायु प्रदूषण से दमा, ब्रोंकाइटिस, सिरदर्द, फेफड़े का कैंसर, खाँसी, आँखों में जलन, गले का दर्द, निमोनिया, हृदय रोग, उल्टी, जुकाम आदि रोग हो सकते हैं। सल्फर डाइ-ऑक्साइड से श्वसन सम्बन्धी घातक रोग होते हैं। अमेरिका में प्रतिवर्ष 32000 लोग इस रोग से मर जाते हैं।

(2) जीव-जन्तुओं पर प्रभाव (Effect on Animals)

वायु प्रदूषण का प्रभाव जीव-जन्तुओं पर भी मनुष्य की तरह ही पड़ता है। इसकी वजह से जीव-जन्तुओं का श्वसन तन्त्र एवं केन्द्रीय तन्त्रिका तन्त्र प्रभावित होता है। ओजोन परत के क्षरण से पृथ्वी पर सूर्य से आने वाली पराबैंगनी किरणों की मात्रा बढ़ जाती है और जीव-जन्तु प्रभावित होते हैं। वायु प्रदूषण से [illegible] मर जाते हैं। इसके अतिरिक्त जब घास आदि पशुओं के चारे और फ्लोराइड यौगिकों का अनुपात होता है और जब पशु इस प्रकार के चारे को खाते हैं तो इनके शरीर में फ्लोराइड यौगिकों की मात्रा बढ़ जाती है, जिससे इनके दाँतों व हड्डियों में फ्लोरोसिस रोग हो जाता है। परिणामस्वरूप इनका वजन घटने लगता है और पैरों में लंगड़ापन आ जाता है।

(3) पेड़-पौधों एवं वनस्पतियों पर प्रभाव (Effect on Trees and Plants)

वायु प्रदूषण से वृक्ष, फल, फूल एवं पत्तियाँ व्यापक रूप से प्रभावित होती हैं। प्रदूषित वायु के कारण सूर्य के प्रकाश की मात्रा में कमी आ जाती है जिससे पौधों के प्रकाश संश्लेषण की क्रिया प्रभावित होती है। वायु प्रदूषित क्षेत्रों में जब वर्षा होती है तो वर्षा जल में विभिन्न प्रकार की गैसें एवं विषैले पदार्थ मिलकर धरती पर आ जाते हैं तथा पौधों की जड़ों में मिलकर उन्हें नष्ट कर देते हैं।

कार्बन मोनो-ऑक्साइड, सल्फर डाई-ऑक्साइड, फ्लोराइड व ओजोन जैसे प्रदूषक पौधों को बुरी तरह प्रभावित करते हैं। जब ओजोन का स्तर 0.12 ppm हो जाता है, तो टमाटर, मटर, तम्बाकू, गेहूँ तथा अन्य प्रकार के पौधों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। सल्फर डाई-ऑक्साइड की अधिकता से पौधों की पत्तियाँ पीली होकर नष्ट हो जाती हैं। प्रायः देखा गया है कि जिन क्षेत्रों में ईंट के भट्टे होते हैं वहाँ आम की फसल बुरी तरह प्रभावित होती है क्योंकि इनकी चिमनियों से निकलने वाले धुएँ पेड़-पौधों के लिए हानिकारक होते हैं। वायु प्रदूषण जहाँ एक ओर पेड़-पौधों की वृद्धि को प्रभावित करता है वहीं फसलों के

उत्पादन पर भी अपना कुप्रभाव डालता है। इसी प्रकार मोटर वाहनों के धुँए में मौजूद इथीलीन से वृक्षों में गले की करोनेशन पंखुड़ियाँ अन्दर की ओर मुड़ जाती हैं जिससे ऑरकिड के बाह्य दल सूख जाते हैं और फूल नष्ट हो जाते हैं।

(4) जलवायु एवं मौसम पर प्रभाव (Effect on Climate and Weather)

वायु प्रदूषण से विश्व की जलवायु काफी प्रदूषित हुई है। कुछ वर्षों में ठण्डी जलवायु वाले क्षेत्र काफी गर्म हो गये हैं और गर्म स्थान ठण्डे हो गए हैं। बाढ़ एवं सूखे का एक प्रमुख कारण वायु प्रदूषण ही है।

वैज्ञानिकों के अनुसार वायुमण्डल में प्रतिवर्ष कार्बन डाई-ऑक्साइड की मात्रा 2% की दर से बढ़ रही है तथा पिछले 50 वर्षों में पृथ्वी के औसत तापमान में 10°C की वृद्धि हुई है। वैज्ञानिकों का कहना है कि यदि पृथ्वी का तापमान 3·6°C और बढ़ जाता है तो इसका परिणाम यह होगा कि अन्टार्कटिका तथा आर्कटिक ध्रुवों पर जमी बर्फ पिघल जायेगी और समुद्र की सतह 100 m ऊँची हो जायेगी परिणामस्वरूप सारी पृथ्वी जलमग्न हो जायेगी। यदि तापमान वृद्धि की यही दर विद्यमान रही तो जल प्रलय की स्थिति 108 वर्षों बाद आ जायेगी।

ऐसा महसूस किया जा रहा है कि पिछले कुछ वर्षों से जाड़ों में पहले की तुलना में अधिक ठण्ड व गर्मियों में अधिक गर्म पड़ रही है। शहरी क्षेत्रों का दैनिक तापमान ग्रामीण क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक होता है। इसका एक कारण यह है कि वायु प्रदूषक तापमान का परावर्तन करते हैं।

(5) द्रव्यता पर प्रभाव (Effect on LIquidity)

वायु में उपस्थित प्रदूषक पदार्थों के छोटे-छोटे कण प्रकाश की किरणों को प्रकीर्णित कर देते हैं जिससे दृश्यता कम हो जाती है। ठण्डे प्रदेशों में वायुमण्डल की नमी एवं नम तापमान के कारण हाइड्रोकार्बन वायुमण्डल में जम जाते हैं जिससे धूम कुहासा बन जाता है। परिणामस्वरूप दुर्घटना की सम्भावना बढ़ जाती है।

(6) इमारतों पर प्रभाव (Effect on Buildings)

वायु प्रदूषण से ऐतिहासिक इमारतें प्रभावित होती हैं क्योंकि वे विशेषकर संगमरमर की बनी होती हैं अथवा उनमें कांसे का प्रयोग किया गया होता है। भारत में मथुरा रिफाइनरी की एसिड लपटों से ताजमहल एवं वहाँ के प्राचीन मन्दिर प्रभावित हो रहे हैं। इन्द्रप्रस्थ बिजलीघर में प्रयुक्त कोयले की राख से लाल किले के पत्थर प्रभावित हो रहे हैं।

ताजमहल पर विपरीत प्रभाव का कारण यह है कि मथुरा रिफाइनरी से जो धुँआ निकलता है उसमें सल्फर डाई ऑक्साइड (SO_2) की मात्रा अधिक होती है जो वर्षा के जल के साथ अभिक्रिया कर सल्फ्यूरिक अम्ल में परिवर्तित हो जाता है। सल्फ्यूरिक अम्ल का संगमरमर पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

(7) अन्य प्रभाव (Other Effects)

वायु प्रदूषण के कुछ अन्य प्रभाव निम्न हैं—

(i) प्रदूषित वायु में हाइड्रोजन सल्फाइड (SO_2) की मात्रा निर्धारित मात्रा से अधिक होती है, जिससे चाँदी की चमक कम हो जाती है और सीसे से बनी वस्तुएँ काली पड़ जाती हैं।

(ii) अम्लीय वायु प्रदूषकों से धातुओं की चमक कम हो जाती है एवं उनमें जंग लग जाता है, जिससे वे कमजोर हो जाती हैं।

(iii) प्रदूषित वायु का प्रभाव इस्पात पर भी पड़ता है। शहरी क्षेत्रों में प्रदूषण अधिक होने के कारण इस क्षेत्रों का इस्पात ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में अधिक घिसता है।

वायु प्रदूषण को नियन्त्रित करने के उपाय (Remedisl Control of Air Pollution)

(1) कल-कारखानों की चिमनियों की ऊँचाई अधिक होनी चाहिए।

(2) रेल यातायात में कोयले एवं डीजल के इंजनों के स्थान पर बिजली के इंजनों का प्रयोग किया जाए।

(3) मोटर वाहनों का रख-रखाव ठीक रखा जाय। कार्बोरेटर की सफाई कर कार्बन मोनो-ऑक्साइड का उत्सर्जन कम किया जा सकता है तथा लेड रहित पेट्रोल का ईंधन के रूप में उपयोग किया जाय।

(4) पुराने वाहनों के संचालन पर प्रतिबन्ध लगाया जाय क्योंकि उनसे वायु प्रदूषण ज्यादा होता है।

(5) घरों में सौर ऊर्जा चालक कुकरों का प्रयोग किया जाय।

(6) यूरो-I व यूरो-II मानकों का कड़ाई से पालन कराया जाये।

यूरो मानक (EURO Standards)

वायु की गुणवत्ता को निर्धारित करने के लिए एवं उसमें सुधार करने के लिए यूरोपीय संघ द्वारा कुछ मानकों का निर्धारण किया गया है, जो यूरो मानक के रूप में जाने जाते हैं। यूरो "यूरोपियन यूनियन स्टैण्ड्डर्स ऑफ पैसेंजर" का संक्षिप्त रूप है। मोटर वाहनों से निकलने वाले धुएँ से वायु प्रदूषण होता है, जिसे रोकने के लिए यूरोपीय संघ ने 1992 में यूरो-I मानक और यूरो-II 1996 में तथा वर्ष 2000 में यूरो-III मानक लागू किया है। वायु प्रदूषण रोकने के लिए इन मानकों का पालन आवश्यक है।

यूरो-I में तीन तथा यूरो-II में चार प्रदूषक पदार्थों का वर्णन किया गया है। यूरो में चार वायु प्रदूषकों में कार्बन मोनो ऑक्साइड, हाइड्रोकार्बन, नाइट्रस ऑक्साइड व धूल कण का समावेश किया गया है। धूल कण की गणना यूरो-III में भी की जाती है और यह केवल डीजल चालित वाहनों के लिए है। यूरो-I और यूरो-II दोनों ही मानकों में सीसा रहित ईंधन का उपयोग किया जाना अनिवार्य है।

29 अप्रैल, 1999 को भारतीय उच्चतम न्यायालय ने एक लोकहित याचिका पर अपना निर्णय देते हुए यूरो मानकों को पूरा करने का आदेश दिया है। न्यायालय ने यह आदेश जारी किया था कि 1 अप्रैल 2000 से ऐसे गैर वाणिज्यिक वाहनों का रजिस्ट्रेशन राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली में नहीं किया जाना चाहिए जो यूरो मानकों को पूरा नहीं करते हैं। इसके अतिरिक्त न्यायालय ने यह भी आदेश दिया कि ऐसे प्राइवेट गैस वाणिज्यिक वाहन, जो यूरो-I मानकों को पूरा करते हैं, उनका रजिस्ट्रेशन 1 मई 1999 से 31 मार्च 2000 तक किया जाय। उच्चतम न्यायालय ने डीजल चालित वाहनों के लिए 250 वाहन प्रतिमाह की जो सीमा निर्धारित की थी, उसे हटा लिया गया है। इसके अतिरिक्त यह संपीडित प्राकृतिक गैस से चलने वाले वाहनों पर नहीं लगाया गया है।

मारुति उद्योग लिमिटेड के वाहन यूरो-I के मानकों को पूरा नहीं करते थे। इसलिए राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली में 1 मई 1999 से इनका रजिस्ट्रेशन प्रतिबन्धित हो गया। ध्यातव्य है कि यूरो-II के मानकों को पूरा करने के लिए उच्चतम न्यायालय द्वारा सन् 2005 निर्धारित किया गया था जिसे बाद में 1 अप्रैल 2000 निर्धारित कर दिया गया।

उल्लेखनीय है कि मॉटिज कारों का उत्पादन करने वाली देवू कम्पनी ने दावा किया था कि उसकी कार यूरो-II के मानकों को पूरा करती है। टाटा कम्पनी ने भी दावा किया था कि उसकी इण्डिका कार यूरो-I के मानकों को पूरा करती है। इसी क्रम में सेंट्रो का उत्पादन करने वाली हुंडई मोटर इण्डिया लिमिटेड ने मई 1999 तक यूरो-II के मानकों को पूरा करने वाले वाहनों के उत्पादन का लक्ष्य रखा था। इसी प्रकार मारुति उद्योग लिमिटेड ने जून, 1999 से यूरो-I के मानकों को पूरा करने की घोषणा की थी।

वायु प्रदूषण नियन्त्रण के कुछ अन्य उपाय (Other Remedial Controls of Air Pollution)

(1) ओजोन परत को क्षतिग्रस्त करने वाले क्लोरोफ्लोरो कार्बन (CFC-फ्रियॉन 11 तथा फ्रियॉन 12) के उत्पादन एवं उपयोग पर कटौती की जानी चाहिए।

(2) कारखानों की चिमनियों में बैग फिल्टर का उपयोग किया जाना चाहिए जिससे धुँए में निकलने वाली कालिख एवं कणिकामय पदार्थ चिमनी के नीचे बैठ जायें तथा गैस फिल्टर से होकर निकल जाये।

(3) विभिन्न उद्योगों से निकलने वाले 50 माइक्रोमीटर से बड़े आकार के कणिकामयी पदार्थों को फिल्टर करने के लिए अनेक प्रकार के उपकरणों का प्रयोग किया जाता है। ये उपकरण अग्र प्रकार है—

Scanned by CamScanner

(1) गुरुत्व अवसादन कक्ष।
(2) फैब्रिक फिल्टर।
(3) लूवर कलेक्टर।
(4) अपकेन्द्री संग्राहक या साइक्लोन।
(5) आर्द्र संग्राहक या स्क्रबर।
(6) स्थिर विद्युत अवक्षेपक।
(7) बोरा छन्नक या वस्त्र छन्नक।

(1) गुरुत्व अवसादन कक्ष (Gravity Settling Chamber)

इसके द्वारा 50μm से बड़े आकार के कण प्रदूषित वायु से पृथक किये जाते हैं। इसमें प्रदूषित वायु के निकास पर अधिक व्यास का पाइप लगा दिया जाता है जिससे गैस का भार घट जाता है और कणों को तली में बैठने के लिए अधिक समय मिल जाता है। इस पाइप में वायु का वेग सामान्यत: 0·5 से 2·5 m/sec तक रखा जाता है। इसकी तली में धूल हॉपर लगा दिए जाते हैं, जो धूल को समय-समय पर निकालते रहते हैं। निम्न दाब पर कार्य करते हैं तथा इनका रख-रखाव आसान होता है। इनका प्रयोग कोयले के उद्योगों में किया जाता है।

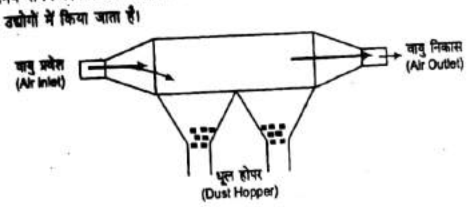

चित्र 4.1 : क्षैतिज बहाव वाला गुरुत्व अवसादन कक्ष

हावर्ड के अवसादन कक्ष में कई ट्रे क्षैतिज स्थिति में लगी होती हैं। इनके बीच की दूरी 2·5cm रखी जाती है। इससे कणों का अवसादन काल घट जाता है। साथ ही कणों का जमाव भी अधिक हो जाता है, जिससे इसकी तली भी हॉपर आकार में बनायी जाती है।

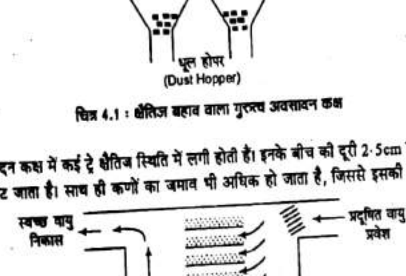

चित्र 4.2 : हावर्ड अवसादन कक्ष

(2) फैब्रिक फिल्टर (Fabric Filter)

धूल कणों का संग्रह करने में इस विधि का प्रयोग किया जाता है। इस विधि में फैब्रिक फिल्टर को धूलों की धारा में लाते हैं, जिससे 0·01 mm से 0·05 mm माप तक के कण Sedimentation क्रिया द्वारा नीचे बैठते जाते हैं। 0·01 mm से कम ... फैब्रिक फिल्टर पर चिपक जाते हैं।

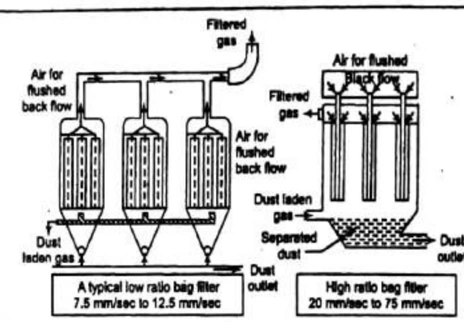

चित्र 4.3

फैब्रिक फिल्टर में धूल भरी गैसें हॉपर की तली से प्रवेश करती हैं, जहाँ पर भारी कण गुरुत्वाकर्षण बल से नीचे की ओर Settle हो जाते हैं और हल्के कण Fabric filter की आन्तरिक सतह पर चिपक जाते हैं। अब इस फैब्रिक फिल्टर की सफाई के लिए सम्पीडित वायु को उल्टी दिशा में फैब्रिक फिल्टर के पीछे से भेजते हैं जिससे सभी filter पर चिपके कण नीचे गिर जाते हैं जो Dust outlet से बाहर निकाल लिए जाते हैं। फैब्रिक फिल्टर में एक कपड़ा होता है जिस पर Felt की एक या दो तह रासायनिक या यान्त्रिक विधि से चिपकी रहती हैं।

(3) लूवर कलेक्टर (Louver Collector)

इसका सिद्धान्त यह है कि जब गैसीय धारा की दिशा बदल दी जाय तो गैस के कण अपने जड़त्व के कारण अपनी दिशा नहीं बदल पाते जिससे ये कण गैसों से अलग हो जाते हैं।

लूवर कलेक्टर में कुछ ब्लेड एक निश्चित कोण पर गैसीय धारा के पथ में बनाये जाते हैं। ये ब्लेड ही वायु की दिशा में एकदम परिवर्तन लाते हैं, जिससे धूल के कण इन ब्लेड़ों से टकराकर नीचे इकट्ठे हो जाते हैं। Blades को कम Spacing पर सेट करके अधिकतम धूल कणों का सान्द्रण किया जाता है।

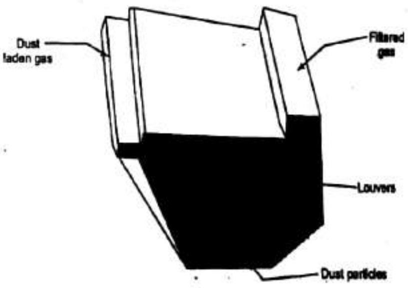

चित्र 4.4

(4) अपकेन्द्री संग्राहक या साइक्लोन (Centrifugal Collector or Cyclone)

इनका प्रयोग 25μm तक के कणों को अलग करने के लिए होता है। इसमें एक बेलनाकार खोल होता है जिसकी तली शंक्वाकार होती है। प्रदूषित वायु खोल के ऊपर की ओर से स्पर्शीय प्रवेश करती है। गैस का निकास बेलन के मध्य भाग में लगे निकास पाइप के ऊपर की ओर होता है और धूल तली में एकत्र हो जाती है।

जब दूषित वायु बेलन में प्रवेश करती है तो यह तेजी से बेलन की भीतरी दीवारों के साथ घूमती हुई नीचे को आ जाती है। गैसों की इस वृत्तीय गति के कारण धूल कणों पर अपकेन्द्रीय बल कार्य करने लगता है और ...

Scanned by CamScanner

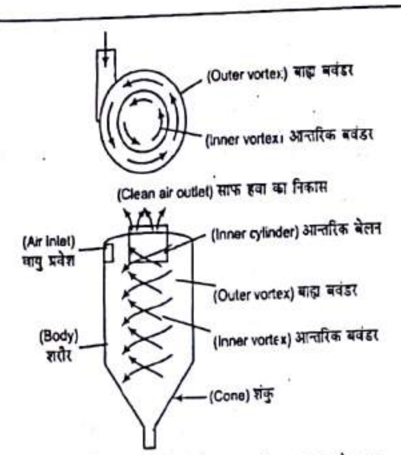

चित्र 4.5 : विपरीत बहाव वाला चक्रवात बवंडर पृथक् करने वाला
(Reverse flow cyclone separator)

चिपक जाते हैं, यह गैस नीचे जाकर पुन: विपरीत दिशा में चक्रवात की तरह घूमती हुई मध्य भाग मे लगे निकास पाइप से होकर बाहर आ जाती है। धूल धीरे-धीरे नीचे शंकु की तली में गिरती रहती है और बाहर निकल जाती है। ये प्राय: समूह मे लगाये जाते हैं इनका प्रयोग सीमेन्ट फास्फेट, लोहा एवं बॉक्साइट के उद्योगों में किया जाता है।

(5) आर्द्र संग्राहक या स्क्रबर (Wet Collector or Scrubber)

विविक्त द्रव्य कणों को अलग करने के लिए तीन प्रकार के आर्द्र संग्राहक प्रयोग किये जाते हैं—

(i) स्प्रे टावर

(ii) अपकेन्द्रीय संग्राहक

(iii) वेन्चुरी स्क्रबर

(i) स्प्रे टावर (Spray tower)

ये सस्ते स्क्रबर हैं। विविक्त द्रव्य एवं दूषित गैसें दोनों अलग किये जा सकते हैं। चित्र 4.6 के अनुसार ऊपर पानी का फुआरा एक कक्ष में छोड़ा जाता है जो नीचे से आती हुई गैसों के सम्पर्क में आता है। गैसों के धूल कण पानी या द्रव बूँदों की सतह से चिपक जाते है और विलायक द्रव का प्रयोग करने पर दूषित गैसें इनमें घुल जाती हैं। इस प्रकार साफ गैसें बाहर निकल जाती है।

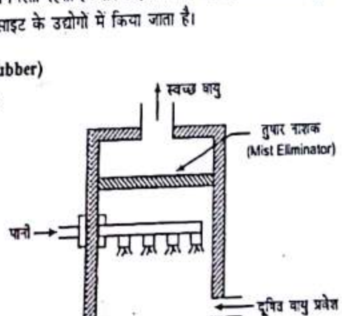

चित्र 4.6 : स्प्रे टावर (Spray Tower)

(ii) अपकेन्द्रीय संग्राहक या स्क्रबर (Centrifugal Collector or Scrubber)

चक्रवात कक्ष के मध्य में एक जल प्रवेश पाइप लगा होता है जिसमें चित्रानुसार कार्य उच्च स्प्रे नॉजल लगे रहते है। पाइप के शीर्ष पर एक कोर बस्टर डिस्क लगी होती है। Cyclone कक्ष के निचले सिरे से स्पर्शीय दिशा में दूषित वायु प्रवेश कराते है। यह वायु घूमती हुई ऊपर को उठती है। अपकेन्द्री क्रिया द्वारा धूल कण कक्ष से चिपक जाते हैं जो नॉजल से निकले फुहारे से धुलकर जल निकास से होकर बाहर निकल जाते हैं जिससे शुद्ध वायु कक्ष के ऊपरी भाग से बाहर निकल जाती है। 100 µm की बूँदों वाले स्क्रबर की क्षमता 100% तक पायी जाती है।

(iii) वेन्चुरी स्क्रबर (Venturi Scrubber)

इसका प्रयोग 0·5µm से 5µm आकार के धूल कणों को अलग करने में किया जाता है। दूषित वायु के प्रवेश के आगे एक वेन्चुरी आकार का कण्ठ बना होता है जिसमें से होकर वायु 60 से 180 m/sec के वेग से प्रवाहित होती है। पानी की तेज फुहार कण्ट की लम्ब दिशा में डालते है जो तेज गति होने के कारण अत्यन्त सूक्ष्म आकार की बूंदों में परिवर्तित हो जाती है ये सूक्ष्म बूँदे वायु के धूल कणो से मिलकर गाढा घोल बना लेती हैं और शुद्ध वायु बाहर निकल जाती है। इसकी दक्षता 90% होती है परन्तु यह महंगा होता है।

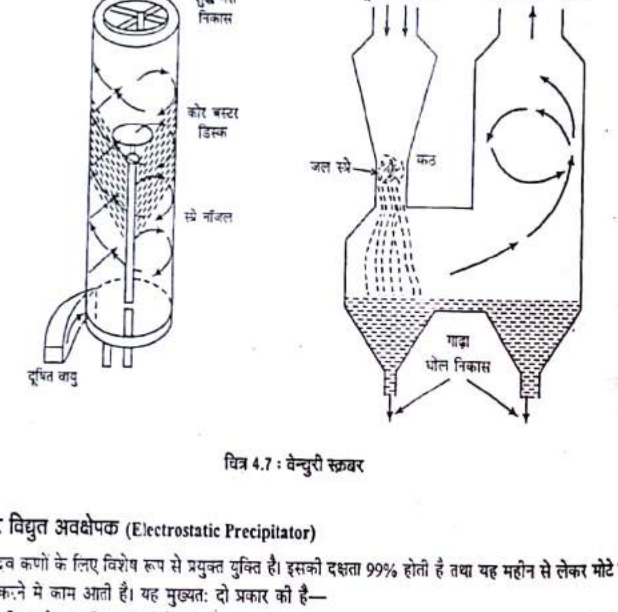

चित्र 4.7 : वेन्चुरी स्क्रबर

(6) स्थिर विद्युत अवक्षेपक (Electrostatic Precipitator)

यह द्रव कणों के लिए विशेष रूप से प्रयुक्त युक्ति है। इसकी दक्षता 99% होती है तथा यह महीन से लेकर मोटे कणों को पृथक करने मे काम आती है। यह मुख्यत: दो प्रकार की है—

(i) निम्न वोल्टता द्विचरण अवक्षेपक

(ii) उच्च वोल्टता एकल चरण अवक्षेपक

चूँकि आजकल उच्च वोल्टता एकल चरण अवक्षेपक ही प्रचलन में है, इसलिए इसका वर्णन नीचे कुछ इस प्रकार है—
यह 300000 से 100000 वोल्ट पर कार्य करता है। ये भी दो प्रकार के होते है—

Scanned by CamScanner

(a) प्लेट टाइप

(b) पाइप या ट्यूब टाइप

चित्रानुसार हम एक संग्राहक प्लेट या उसके स्थान पर संग्राहक पाइप किसी का भी प्रयोग कर सकते है। कभी प्लेटें अथवा पाइप समान्तर में लगाकर उनके मध्य में कभी ऋणावेशित तार भार द्वारा लटकाये जाते हैं तथा पाइपों के मध्य में एक-एक तार लटका देते हैं। अब प्लेटों एवं पाइपों को धनावेशित कर देते है। स्थिर विद्युत अवक्षेपक की कार्यविधि निम्न चरणों में पूरी होती है—

विविक्त द्रव्य कणों को विद्युत आवेशित किया जाता है। आवेशित कण विद्युत क्षेत्र के प्रभाव से संग्राहक सतह पर एकत्र होते हैं। संग्राहक सतह पर एकत्र आवेशित कण उदासीन हो जाते हैं व विसर्जन हेतु संग्राहक सतह पर कणों को अलग कर लिया जाता है।

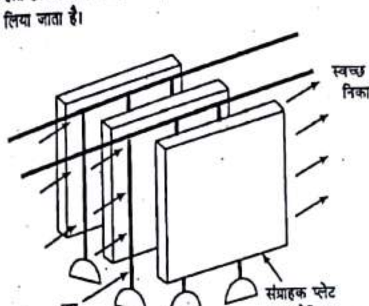

चित्र 4.8 : (a) प्लेट पाइप

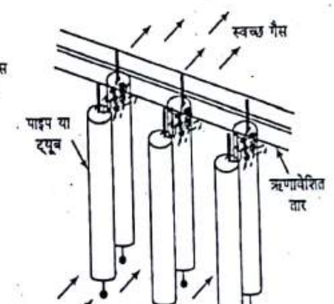

चित्र 4.8 : (b) पाइप

प्लेटों एवं तारों के मध्य उच्च वोल्टता होने की वजह से विद्युत क्षेत्र उत्पन्न हो जाता है। जब इस क्षेत्र से दूषित वायु प्रवेश करती है तो इसका आयनीकरण हो जाता है जिससे ऋण आवेश कणों पर आ जाता है तथा ये कण धन आवेशित संग्राहक प्लेट की ओर आकर्षित होकर एकत्रित हो जाते हैं। जहाँ इनका ऋण आवेश प्लेट पर चला जाता है और कण उदासीन हो जाते हैं। इन कणों को पानी से धुलाई करके अथवा झटके से चोट मारकर अलग कर लिया जाता है। इसका उपयोग बड़े उद्योगों को, बॉयलर पल्प व पेपर मिल, पत्थर उत्पाद, लोहा एवं स्टील उद्योग, रासायनिक उद्योग एवं खनन उद्योग आदि में किया जाता है।

(7) बोरा छन्नक या वस्त्र छन्नक (Bag Filter or Fabric Filter)

एक कक्ष में एक फ्रेम के द्वारा बेलनाकार बुने हुए कपड़े लटकाये जाते हैं। ये ऊपरी सिरे पर बन्द तथा नीचे खुले रहते हैं। निचले सिरे से दूषित गैस प्रवेश कराते हैं। गैस के कण कपड़े से चिपक जाते हैं व शुद्ध वायु बाहर आ जाती है। कुछ समय पश्चात् कपड़ों की निचली सतह पर अत्यधिक धूल जमने के कारण गैसों का छनना रुक जाता है। इन थैलों को झटके से हिलाकर इनकी धूल झाड़कर नीचे लगे हॉपर में गिरा दिया जाता है। इसके द्वारा 0·1 से 0·5μm आकार तक के कणों को अलग किया जा सकता है। दूषित गैसों में नमी नहीं होनी चाहिए। इनका प्रयोग पत्थर उत्पादक एवं आटा मिल आदि में किया जाता है।

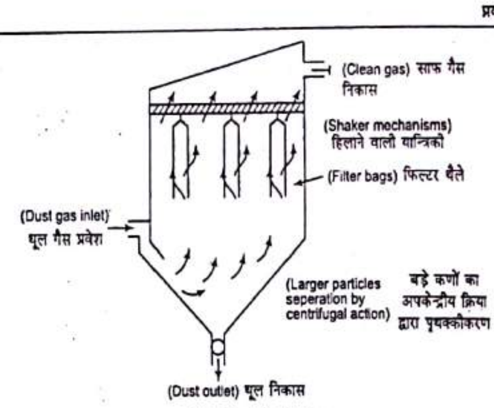

चित्र 4.8 : (c) बोरा घर

ओजोन परत (Ozone Layer)

ओजोन (O_3) ऑक्सीजन के तीन परमाणुओं से मिलकर बनने वाली गैस है जो कि वातावरण में बहुत कम मात्रा में पायी जाती है। जहाँ निचले वातावरण में इसकी उपस्थिति प्रदूषण को बढ़ाने वाली व जीवों के एवं मानव के ऊतक के लिए नुकसानदेह है, वहीं ऊपरी वायुमण्डल में इसकी उपस्थिति परम आवश्यक है। इसकी सघनता 10 लाख में 10वां हिस्सा है। यह गैस प्राकृतिक रूप से बनती है। जब सूर्य को किरणें वायुमण्डल के ऊपरी सतह के O_2 से टकराती हैं तो उच्च ऊर्जा विकिरण से इसका कुछ हिस्सा ओजोन में परिवर्तित हो जाता है। साथ ही विद्युत विकास क्रिया, बादल आकाशीय विद्युत एवं मोटरों के विद्युत स्पार्क से भी ऑक्सीजन ओजोन में बदल जाती है। पृथ्वी के धरातल से 20-30 किमी ऊँचाई पर वायुमण्डल के समताप मण्डल क्षेत्र में ओजोन गैस का एक झीना सा आवरण है, जिसे ओजोन परत कहते हैं। वायुमण्डल के आयतन के सन्दर्भ में ओजोन परत की सान्द्रता लगभग 10 पीपीएम है। यह ओजोन परत पर्यावरण की रक्षक है। ओजोन परत हानिकारक पराबैंगनी किरणों को पृथ्वी पर आने से रोकती है।

ओजोन परत का क्षरण

बढ़ते औद्योगीकरण के फलस्वरूप वायुमण्डल में कुछ ऐसे रसायनों की मात्रा बढ़ गयी जिनके दुष्प्रभाव से ओजोन परत को खतरा उत्पन्न हो गया। ऐसे रसायनों में क्लोरोफ्लोरो कार्बन (सी०एफ०सी०) क्लोरीन एवं नाइट्रस ऑक्साइड गैसें प्रमुख हैं। ये रसायन ओजोन गैस को ऑक्सीजन में विघटित कर देते हैं जिसकी वजह से ओजोन परत पतली हो जाती है और उसमें छिद्र हो जाता है यहाँ तक कि ओजोन परत में छिद्र का आकार यूरोप के कुल आकार के बराबर हो गया है।

ओजोन परत में छिद्र हो जाने के कारण सूर्य की हानिकारक पराबैंगनी किरणें व रेडियो विकिरण धरती पर पहुँच जाते हैं तथा जीव-जन्तुओं एवं वनस्पतियों पर अपना कुप्रभाव छोड़ते हैं।

पराबैंगनी किरणों से त्वचा कैंसर एवं मोतियाबिंद आदि बीमारियों का खतरा बनता है। शरीर की रोगों से लड़ने की क्षमता कम हो जाती है, कृषि में पैदावार कम हो जाती है व वन सम्पदा क्षतिग्रस्त हो जाती है। पराबैंगनी किरणों का कुप्रभाव समुद्री जीवों पर भी पड़ता है।

ओजोन परत के संरक्षण के उपाय

ओजोन परत का संरक्षण एक वैश्विक समस्या है। विश्व के वैज्ञानिकों ने एवं पर्यावरणविदों ने इसके संरक्षण के उपायों को गम्भीरता से लिया है। ओजोन परत को बचाने के सार्वभौमिक प्रयासों के तहत सर्वप्रथम 1985 में वियना सम्मेलन तथा

Scanned by CamScanner

1987 मे 'मांट्रियल प्रोटोकाल' के रूप मे राष्ट्रों द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय समझौते को मंजूरी दी गयी। सी० एफ० सी० पर समयबद्ध तरीके से रोक लगाना ही मांट्रियल प्रोटोकाल का प्रमुख उद्देश्य था, मांट्रियल में 48 देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया था। मांट्रियल प्रोटोकाल मे वर्ष 2000 तक क्लोरोफ्लोरो कार्बन के उपयोग पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाना शामिल था। भारत ने भी इस प्रोटोकाल के अनुरूप समस्या से निपटने के लिए वचनबद्धता व्यक्त की थी। मांट्रियल प्रोटोकाल के बाद 1989 में फ्रांस के तत्कालीन प्रधानमन्त्री ने पुनः ओजोन परत की सुरक्षा के सम्बन्ध में विचार-विमर्श करने के लिए 24 देशों का एक सम्मेलन बुलाया, जिसमे संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के तत्कालीन राष्ट्रपति जार्ज बुश सहित भारत के तत्कालीन प्रधानमन्त्री राजीव गांधी ने भी भाग लिया था।

वायु प्रदूषण से उभरी संकटग्रस्त त्रासदियाँ
(Disasters Genesised through Air Pollution)

दिल्ली मे रोहतक रोड़ पर 1949 में श्री राम फूड एवं खाद एक उद्योग ओलियम (H_2SO_4) को संरक्षित (Store) करने के लिए स्थापित किया गया। 10-09-1985 को 40 टन क्षमता वाले टैंकों से रिसाव शुरू हुआ था। कोई दुर्घटना न हो, इसके लिए Plant को Shift करने की शिकायत पर कोई ध्यान न दिया गया और धीरे-धीरे Plant की Store क्षमता बढ़ा दी। मार्च 1985 में सरकारी निरीक्षण मे सुरक्षाकर्मियों के चलते Plant को बन्द करने की संस्तुति की गई। परन्तु इसके चलते 4-12-1985 को सुबह 10 बजे लगभग, टैंक का पाइप फट गया जिससे क्षेत्र गैसो के बादल से ढक गया। पानी स्प्रे करने से तेजी से धुआँ उठने लगा जिससे कर्मचारी दर्द एवं अकफ से छटपटाने लगे। लगभग 350 लोग अस्पताल में भर्ती हुए जो अब भी अस्वस्थ एवं पूर्णता के शिकार हैं। इस घटना के बाद सर्वोच्च न्यायालय में याचिका दायर हुई और न्यायालय के आदेश पर केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड को प्रदूषण-सम्बन्धी सीमा नियमो एवं कानूनों का प्रावधान लागू करना सुनिश्चित हुआ और लोगों को क्षतिपूर्ति के लिए Plant मालिक से 20,00,000 का हर्जाना वसूला गया। यह भी एक बहुत बड़ी दुर्घटना है।

एक और घटना के तहत विशाखापतनम, आन्ध्र-प्रदेश में HPCL की एक परियोजना के अन्तर्गत 25000 टन LPG प्रति सप्ताह आयातित होती है। HPCL का भवन उत्तर-दक्षिण हवा की दिशा की ओर मुख्य मार्ग से बना हुआ है तथा भवन निर्माण Design Safety Measure को ध्यान में रखकर नहीं बनाया गया है। इसके चलते दिनांक 14/09/1997 को 6·40 AM पर जहाज से फैक्ट्री के लिए LPG उतारते समय गैस लीक की वजह से भयानक एवं प्रचण्ड आग लगी, जिससे न केवल 20 LPG स्टोर करने वाले टैंक जले बल्कि 33 KV की पावर (Power) लाईन भी पिघल गई। प्रशासनिक भवन का सारा सामान स्वाहा हो गया और एक किमी तक खिड़कियों के शीशे चूर-चूर हो गये। 14,000 किलोमीटर पैट्रालियम, डीजल व नेप्था ज्वलनशील पदार्थ जलकर नष्ट हो गये। 55 कर्मचारी तुरन्त हो स्वाहा हो गये और अधिकतर भगदड़ की वजह से मर गये। कुछ लोग आग की ही दिशा में दौड़ कर भागने से मरे तो कुछ हाइड्रोकार्बन एवं काले-काले धुएं की घुटन से मर गये। मनुष्य की जरा-सी लापरवाही कितनी भयावह हो सकती है, प्रत्यक्षदर्शी ही नहीं इस घटना को पढ़ने वाले सहज ही अनुमान लगा सकते हैं कि ज्वलनशील पदार्थ कितनी तेजी से आग पकड़ते हैं।

इसके अलावा एक और घटना है जो पेनसिलवेनिया के डोनोरा एक छोटे से कस्बे में स्टील और रासायनिक Plant है। डोनोरा कस्बा भी लन्दन की तरह घाटी मे बसा हुआ है, इसी तरह यहाँ भी अक्टूबर 1948 में H_2SO_4 प्लांट से निकली SO_2, NO_x धात्विक अमोनिया सल्फेट, जिंक सल्फेट आदि की धुन्ध एवं धुएं से बने कुहासे के बीच चार दिनों तक डोनोरावासियों को काटने पड़े। हवा के रुकने एवं ताप अनुक्रम की वजह से हवा का संचरण मन्द पड़ गया था जिससे आँखों में जलन, नाक-कान व गला अवरुद्ध, सिरदर्द, उल्टी व श्वसन बाधा के चलते दम घुटने से लगभग 20 लोग मौके पर ही मर गये व 14,000 आवसित लोगों के कस्बे में 8,600 लोग बुरी तरह बीमार हो गये तथा 140 अन्य लोग बुरी हालत में पहुँच गये थे। इस हादसे से दुर्घटना के दस वर्ष बाद भी डोनेरा निवासियो की बीमारी की दर बढ़ी हुई है और लोग शीघ्र ही मौत के मुँह में जा रहे हैं। हमें इन हादसों से सबक लेकर लापरवाही एवं असावधानियों पर रोक लगानी होगी तथा सुरक्षा कारण अपनाने होंगे।

उपरोक्त घटनाओं के साथ हम हाल ही मे हुई घटना को कैसे भूल सकते हैं। मेरठ के विक्टोरिया पार्क में 6 अप्रैल से 10 अप्रैल 2006 तक लगे कन्जयूमर मेले में 10 अप्रैल को सांय 5 बजकर 5 मिनट पर शार्ट सर्किट की वजह से लगी भयानक आग से [illegible] और पर लगभग 50-60 लोग जलकर मर गये थे हालाँकि मेले का आखिरी दिन था एवं भीड़ (High Gentry)

काफी थी। लगभग 400-500 लोग इसमे हताहत हुए हैं। सभी स्टॉल, उनमें रखे सुसज्जित सामान, सभी कुछ जलकर राख हो गया था। पडाल पूरी तरह से वातानुकुलन की वजह से निकास व प्रवेश द्वारा छोटे एवं एक-एक ही बनाये गये थे। पंडाल प्लास्टिक शीट का इन्सूलेटिड बना होने के कारण कहीं से शार्ट सर्किट हुआ और तेजी से फैलती आग ने कईयों को अपनी चपेट में लेकर मौत के मुँह मे सुला दिया तथा कईयो को झुलसा कर धीमी मौत के दरवाजे पर छोड़ दिया। प्रशासन ने आयोजको को गिरफ्तार कर लिया था। सरकार द्वारा मृतको को दो-दो लाख का व झुलसों को 25,000-25,000 रुपये की आर्थिक मदद के साथ-साथ फ्री इलाज घोषित किया गया। यह घटना भी हृदय-विदारक एवं एक हादसा है लेकिन इससे वायु प्रदूषण हुआ, परन्तु जलने से जनित प्रदूषण से भी दम घुटने की वजह भी रही है, इसलिए हमें इसका जिक्र करना उचित लगा। कुछ तो भगदड़ एवं निकलने की जगह न मिलने से दब कर मरे और कुछ लोग धुंए एव गैसों के गुब्बार से दम घुटने से मौत के कगार पर पहुँचे। इस प्रकार देश मे कई जगहों पर वायु प्रदूषण सम्बन्धी त्रासदियाँ मानवीय भूल-चूक से हुई हैं जिनका यहां जिक्र करना लिखने की सीमितता को ध्यान में रखकर स्पष्ट करना काफी समझा गया है।

वायु प्रदूषण त्रासदियाँ तालिका

क्रम सं०	समय	स्थान	मृत्य (प्रभावित)
1.	दिसम्बर 1930	म्यूज वैली बैल्जियम	63
2.	अक्टूबर 1948	डोनोरा (पेनसिलवेनिया)	20
3.	नवम्बर 1950	पोंजारिका (मैक्सिको)	22
4.	दिसम्बर 1952	लन्दन	4000
5.	दिसम्बर 1953	न्यूयार्क	220
6.	जनवरी 1956	लन्दन	1000
7.	दिसम्बर 1957	लन्दन	750
8.	दिसम्बर 1962	लन्दन	700
9.	जनवरी 1963	न्यूयार्क	300
10.	नवम्बर 1966	न्यूयार्क	168
11.	दिसम्बर 1984	भोपाल (इंडिया)	20,000

वायु प्रदूषण का ऐतिहासिक संरचाओं पर प्रभाव

हमारे देश-विदेश मे अनेक ऐतिहासिक संरचाएं हैं जो अपने बेजोड़ स्थापत्य कला, सौन्दर्य एवं सांस्कृतिक धरोहर के रूप में प्रसिद्ध हैं। इनमें आगरा का ताजमहल जो सफेद मकराना पत्थर से बना हुआ भव्य एवं प्रेम व कला का प्रतीक स्वरूप है, कर्नाटक राज्य के हसन जिले मे बेलूर मंदिर, रोम में कोलोजियम, इटली के वेनिस में सानमाटको व मिस्र में अलेक्जेन्ड्रिया, भव्य इमारतों/स्मारकों के रूप मे प्रसिद्ध है।

आगरा के ताजमहल से 40 km दूर स्थित मथुरा रिफाइनरी से निकलने वाले SO_2, NO_x, Lead उक्त हाइड्रोकार्बन मिश्रित धुएं व धुन्ध के प्रभाव से उक्त ऐतिहासिक स्मारक कान्तिहीन हो रहा है। इस स्मारक की सफेदी पीलेपन में बदल रही है एवं इस संरचना का पृष्ठ धीरे-धीरे नष्ट हो रहा है। इसके पृष्ठ पर काले व ब्राउन रंग के धब्बे (Patches) बन रहे हैं तथा पृष्ठ पपड़ियो (Flåkes) के रूप में गिर कर समाप्त हो रहा है।

इसी प्रकार कर्नाटक के हसन जिले में बेलूर मंदिर, अपने पास स्थित प्लाईवुड फैक्ट्री से निकलने वाले काजल (Soot) व फ्यूम (Hot gases) की वजह से इस मंदिर का रंग उड़ता (Fade) जा रहा है एव Soot Deposit होकर इसकी सुन्दरता को नष्ट कर रहा है।

भोपाल गैस काण्ड (Bhopal Disaster)

भोपाल गैस दुर्घटना कार्बाइड फैक्ट्री, जो कार्बोरिल कीटनाशक का निर्माण करती थी, में घटी। यह मध्य प्रदेश के भोपाल शहर में 3 दिसम्बर 1984 को एक बहुत बड़ी त्रासदी के रूप में घटित हुई।

Scanned by CamScanner

3 दिसम्बर रात्रि के 11.30 बजे कम्पनी के कर्मचारियों को महसूस हुआ कि गैस का लीकेज हो रहा है। एक कर्मचारी को 50 फीट की ऊँचाई से गैस निकलती हुई दिखाई दी। उसने MIC टैंक में 25°C का तापमान एवं 40 psi का दाब नोट किया फिर वह MIC टैंक पर चढ़ गया। उसे टैंक के अन्दर तेजी से खौलते हुए जल जैसी ध्वनि सुनाई दी। चूँकि टैंक गर्म हो रहा था इसलिए वह सुरक्षा की दृष्टि से वहाँ से भागा और भागते हुए उसे गैस और अधिक तेजी से निकलती हुई सुनाई दी। इस गैस का रिसाव इतना अधिक था कि प्लांट के ऊपर सफेद बादल जैसे छा गये। ये बादल फिर आबादी की ओर बढ़ने लगे। इस समय गैस का दाब 55 psi तक पहुँच चुका था। टैंक का वाल्व खुल गया था, जिससे गैस रिस रही थी। यह रिसने वाली गैस MIC गैस थी।

किसी दुर्घटना से बचने के लिए प्लांट में दो प्रकार की सुरक्षा व्यवस्था अपनायी जाती है—1-स्क्रबर, 2-जल का फव्वारा। प्लांट के सुपरवाइजर ने पानी छिड़कने का आदेश दिया परन्तु पानी की धार गैस लीकेज के स्थान तक नहीं पहुँच सकी। फिर वेन्ट गैस स्क्रबर को रिसती हुई गैस को उदासीन करने के लिए छोड़ा गया परन्तु वह भी खराब निकला। लोगों को चेतावनी देने के लिए जब तक सायरन बजाये गए तब तक लोग गैस की चपेट में आ चुके थे और खांसी, फेफड़ो की जकड़न आदि से व्यथित होकर इधर-उधर भागने लगे। दो घण्टे तक सुरक्षा वाल्व के खुले रहने से लगभग 50000 पौण्ड MIC गैस अपने द्रव रूप से बाहर आ चुका था साथ ही इसमें $COCl_2$ एवं HCl गैस भी मिली हुई थी। लगभग 2 बजे तक टैंक दाब घटकर 40 psi से कम हो गया तथा सुरक्षा वाल्व स्वत: बन्द हो गया। 3.00 बजे प्रात: फैक्ट्री का वर्क मैनेजर पहुँचा। उसने पुन: चेतावनी सायरन बजवाया लेकिन तब तक सैकड़ों लोग मर चुके थे और हजारों मौत की कगार पर थे।

गैस की विषात्मकता

कार्बेनिल कीटनाशक के उत्पादन में मिथाइल आइसो सायनेट का प्रयोग किया जाता है।

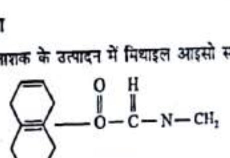

Carbaryl

CH_3NCO
Methyl Isocynate

MIC गैस को प्रशीतन प्रणाली द्वारा 0°C पर रखा जाता है क्योंकि यह अत्यन्त वाष्पीकृत होने वाली गैस है। यह नमी के प्रति भी बहुत अधिक सक्रिय है। इसका क्वथनांक 43°-45°C है। निर्माण प्रक्रिया के समय इसमें फॉस्जीन गैस अर्थात् $COCl_2$ 2 प्रतिशत तक मिली रहती है। MIC गैस के उत्पादन की क्रिया निम्न प्रकार है—

$$\underset{\text{(Primary Amine)}}{CH_3NH_3Cl} + \underset{\text{(Phosgene)}}{COCl_2} \longrightarrow CH_3NHCOCl + 2HCl$$

Or

(Carbonyl Chloride)

$$2\,CH_3HNCOCl + 2\,CaO \longrightarrow \underset{\text{(MIC)}}{2\,CH_3NCO} + CaCl_2 + Ca(OH)_3$$

MIC गैस के सम्पर्क में रहने वाले कर्मचारी की छाती में जकड़न एवं श्वसन तंत्रिका में कमी आ जाने के कारण श्वास लेने में परेशानी का अनुभव करता है। फॉस्जीन गैस एक तीव्र जहर है, इसका प्रयोग प्रथम विश्व युद्ध में किया गया था। फॉस्जीन गैस फेफड़ों में सिकुड़न, खांसी आना तथा छाती में सिकुड़न एवं दर्द उत्पन्न करती है। जब MIC व फॉस्जीन गैस संयुक्त हो जाती है तब इनका सम्मिलित प्रभाव अत्यन्त विनाशकारी हो जाता है। 24 घण्टे के अन्दर यह मिश्रण जीवों को लगभग 80% तक जान ले लेता है व इसके सम्पर्क में आँखों के आने पर आँखों में जलन होने लगती है। इस गैस की वजह से भोपाल के हिमदिया अस्पताल में 2000 लोग मारे गये और एक हफ्ते के अन्दर लगभग 10000 लोग मारे गये, लगभग 10000 व्यक्ति अन्धे हो गए। सड़कों, गलियों आदि में लाशें सड़ने लगी। लगभग एक लाख लोग शहर छोड़कर जा चुके थे। इस प्रकार MIC गैस की विनाशलीला का अन्त हुआ। भारत सरकार ने अपने देश में तथा अमेरिका में इस कम्पनी पर मुकदमा चलाया। कम्पनी

लन्दन में छाया धूम्र कुहासा

लन्दन शहर के ऊपर धूम्र कुहासा (Smog) लगभग पाँच दिनों तक छाया रहा जिसके कारण चार हजार लोगों की मौत हो गयी।

लन्दन शहर मे ऐसे उद्योग बहुतायत मात्रा में हैं जिनकी वजह से वायुमण्डल में धुँआ व सल्फर डाई-ऑक्साइड की मात्रा में बढ़ोत्तरी होती है। अधिकांश ठण्डे प्रदेशों मे वायुमण्डल में ताप के प्रतिक्रमण के कारण वायुमण्डल का ताप धरातल के ऊपर की ओर अधिक हो जाता है। चिमनी से निकला धुँआ ठण्डी हवा के सम्पर्क में आने से भारी होकर हवा में उठना बन्द कर देता है। ठण्डे मौसम में वायुमण्डल में पर्याप्त कुहास (Fog) रहता है। यह कुहासा धुएँ के कणों पर संहनित होने लगता है। कुहास व धुँए के मिलने से कुहासा बनता है। घाटी पर स्थित शहर लन्दन इसी धूम्र कुहासे से पूरी तरह ढक गया। धुएं के साथ-साथ चिमनियों से बहुत अधिक मात्रा में सल्फर डाई-ऑक्साइड भी निकलती है। यह गैस धूम्र कुहासे की पर्त के नीचे एकत्र हो जाती है।

इस कुहासे से लन्दन शहर पाँच दिनो तक ढका रहा। वहाँ के लोगों का वायुमण्डल से सम्पर्क टूट चुका था उन्हें शुद्ध हवा नहीं मिल पा रही थी। सल्फर डाई-ऑक्साइड व अन्य दूषित गैसो मे ही वे सांस ले रहे थे जिसकी वजह से धुएं के कण उनके मुंह में जा रहे थे जिससे उन्हें घुटन हो रही थी। प्रदूषक गैसो की सान्द्रता बढ़ती जा रही थी। SO_2 गैस के कारण लोगों की श्वसन तन्त्रिका पर हानिकारक प्रभाव पड़ रहा था। वे सब ब्रोन्काइटिस, निमोनिया, फेफड़ों के कैन्सर आदि कई बीमारियों की चपेट में आ चुके थे। विभिन्न बीमारियों से मरने वालों की संख्या इस प्रकार थी—

कारण	घटना के एक सप्ताह बाद मरने वालों की संख्या
Bronchitis	704
Coronary disease	281
Myocardial degeneration	244
Pnuemonia	168
Vascular Lesions of CNS	128
Respiratory Tuberculosis	77
Cancer of Lung	69
Other Respiratory deseases	52
Other Causes	761
All Causes	2484

ग्रीन हाउस गैसें (Green House Gases)

जलवायु परिवर्तन व तापमान वृद्धि का अध्ययन संयुक्त राष्ट्र की संस्था Intergovernmental Panel on Climate Change (IPCC) द्वारा किया जाता है। इसने अपनी चौथी समीक्षा रिपोर्ट वर्ष 2007 में प्रस्तुत की थी। इस रिपोर्ट के अनुसार यदि पर्यावरण में कार्बन की मात्रा 400 भाग प्रति मिलियन से अधिक हो जाती है, तो विश्व का तापमान 2°C की सीमा पार कर जायेगा। वर्तमान मे पर्यावरण में कार्बन की मात्रा 380 प्रति मिलियन है। रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2100 तक विश्व तापमान में परिस्थितियों के अनुसार 1·1°C से 4·6°C तक वृद्धि हो सकती है। अत: वर्तमान में विश्व के तापमान में वृद्धि 2°C से कम होते हुए भी उसके आस-पास होगी।

विश्व तापमान में वृद्धि का प्रमुख कारण ग्रीन हाउस गैसों जैसे—कार्बन डाई-ऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रियस ऑक्साइड, हाइड्रोफ्लोरो कार्बन, सल्फर डाई-ऑक्साइड आदि की मात्रा में वृद्धि होना है। इनकी मात्रा में वृद्धि का मुख्य कारन विकास कार्य, यातायात, औद्योगीकरण एवं वनों की कमी होना है। जब पर्यावरण में इन गैसों की मात्रा अधिक होती है तो ये गैसें सूर्य से आने वाली ऊष्मा को वापस आकाश में नहीं जाने देती जिससे पृथ्वी के तापमान में वृद्धि हो जाती है। इस घटना को ग्रीन हाउस प्रभाव भी कहते हैं।

अमेरिका सहित अन्य विकसित देश ग्रीन हाउस गैसों में कटौती के लिए किसी बाध्यकारी लक्ष्य को स्वीकार करने के लिए तब तक तैयार नहीं है, जब तक बड़े विकासशील देश जैसे भारत, चीन भी बाध्यकारी कटौती के लक्ष्य को स्वीकार नहीं

Scanned by CamScanner

करते। दूसरी तरफ विकासशील देशों का यह तर्क है कि अभी तक तापमान वृद्धि व कार्बन उत्सर्जन में सबसे अधिक योगदान विकसित देशों का है। अत: सबसे पहले विकसित देशों को कटौती करनी चाहिए। कार्बन वृद्धि में उनकी ऐतिहासिक जिम्मेदारी है दूसरी तरफ विकासशील देश अभी विकास के लक्ष्य से दूर है। अत: कार्बन कटौती की बाध्यता बाद में थोपी जानी चाहिए। इन चारों देशों ने कोपेनहेगन सम्मेलन के दौरान जिस समूह का निर्माण किया था उसे BASIC समूह (Brazil, India, South Africa, China) के नाम से जाना जाता है।

प्रश्नावली

1. वायु प्रदूषण क्या है? प्रकृति में वायु प्रदूषण क्यों होता है?
2. शुद्ध वायु में अगर SO_2 की अधिकता है तो आप वायु से SO_2 किन-किन विधियों से दूर करेंगे? स्पष्ट करें।
3. सन्तुलन की अवस्था में वायु में विभिन्न गैसीय अवयवों की मात्रा स्पष्ट करे। (B.T.E. 2006)
4. आटोमोबाइल प्रदूषण पर एक विस्तृत टिप्पणी लिखें। (B.T.E. 2007, 15, 16, 17)
5. ग्लोबल वार्मिंग पर टिप्पणी लिखे। (B.T.E. 2008)
6. ESP व Wet Scrubber के कार्य रेखाचित्र सहित समझायें। (B.T.E. 2009, 14, 15)
7. अम्ल वर्षा के कारण एवं परिणामों को समझायें। (B.T.E. 2007, 15)
8. ग्रीन हाउस प्रभाव क्या है व वायु प्रदूषण के विभिन्न स्रोतों का वर्णन करें।
9. घरेलू उत्सर्जन नियन्त्रण कैसे किया जाता है?
10. स्थिर वैद्युत अवक्षेप का सचित्र वर्णन कीजिये। (B.T.E. 2010)
11. नाइट्रोजन व गंधक से होने वाले प्रदूषण को समझायें एवं Cyclonic Scrubbu:s को समझायें। (B.T.E. 1999)
12. वायु को दूषित करने वाले विभिन्न पदार्थ कौन-कौन से हैं और इनका स्रोत क्या है? स्पष्ट करें। (B.T.E. 2009)
13. Fabric Filter की कार्य विधि समझायें। इसके उपयोगों में आने वाली उपयोगों की सूची बनायें। (B.T.E. 1999)
14. वायु संचालन से आप क्या समझते है? यान्त्रिक दृष्टि से यह क्यों आवश्यक है? कारण दीजिए। (B.T.E. 2007, 17)
15. वायु प्रदूषणों की मॉनीटरिंग व नियन्त्रण पर टिप्पणी लिखें। (B.T.E. 2006, 12, 16)
16. वायु गुणवत्ता मापन पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें।
17. ''कणिक प्रदूषण'' उत्सर्जन के नियन्त्रण हेतु प्रयोग में लाये गये विभिन्न उपकरणों का उल्लेख कीजिए। किसी एक सिद्धान्त के सचित्र समझाये। (B.T.E. 2000)
18. वायु-प्रदूषण नियन्त्रण के लिये निरोधक उपायों का सुझाव दीजिये। (B.T.E. 2002)
19. अन्तर बताओ—(A) धुँआ और स्मोग (B.T.E. 2001)
20. टिप्पणी लिखो—
    (a) Photochemical Smog (B.T.E. 2001)
21. उद्योगों में प्रयोग होने वाले विभिन्न वायु प्रदूषण नियन्त्रण संयन्त्रों की परिगणना कीजिए। उनमें से किसी एक का कार्य (Function) चित्र के साथ स्पष्ट कीजिए। (B.T.E. 2012, 14, 16)
22. वायु प्रदूषण के तकनीकी नियन्त्रण उपाय पर टिप्पणी लिखिए। (B.T.E. 2013)
23. वायु प्रदूषकों के प्रकार पर टिप्पणी लिखें। (BTE-2014, 17)
24. उद्योगों में वायु प्रदूषण नियन्त्रण हेतु Electro-static-precipitators की कार्यविधि स्पष्ट कीजिए। (BTE-2015, 17)
25. अम्लीय वर्षा (Acid Rain) पद स्पष्ट करें। (BTE-2016)
26. वायु प्रदूषण के कारण तथा पर्यावरण पर उसके प्रभावों की विवेचना करें। (BTE-2017)
27. ओजोन परत का अपक्षय पद स्पष्ट करें। (BTE-2017)
28. यांत्रीय प्रदूषण के नियन्त्रण में Euro III तथा Euro IV की भूमिका पर टिप्पणी लिखें। (BTE-2017)

❑

3 जल-प्रदूषण (Water-Pollution)

3.1 परिचय (Introduction)

जल प्रत्येक जीव एवं जन्तु के जीवन का अत्यन्त ही आवश्यक अवयव है। बिना जल के पृथ्वी पर जीवन सम्भव नहीं होता। तभी तो हमारे खगोलविद् मंगल ग्रह पर जल की उपस्थिति के लिए उत्सुक दिखते हैं। जल जीवों के कोशिकीय संगठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। औसतन जीव कोशिकाओं में जल का प्रतिशत 70-90% तक होता है। जल पौधों के अन्दर होने वाली समस्त उपापचय क्रियाओं के लिए आवश्यक होता है। यह प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया, जो कि समस्त ब्रह्माण्ड की इकलौती उत्पादक प्रक्रिया है, के लिए कच्चे पदार्थ का काम करने के साथ-ही-साथ पोषक तत्वों एवं खाद्य पदार्थों के वितरण के लिए माध्यम का काम करता है। इसके अलावा जल औद्योगिक उत्पादन, ऊर्जा स्रोत एवं यातायात में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

पहाड़ों पर से बर्फ पिघलने एवं वर्षा से नदियों में पानी आ जाता है। नदियों पर बाँध बनाकर तथा इन बाँधों से नहरें निकालकर समूचे क्षेत्र में पानी पहुँचाया जाता है। इस पानी का शोधन एवं पूर्णतया उपचार करने के पश्चात ही घरेलू एवं उद्योगों आदि में आपूर्ति किया जाता है। मनुष्य के पीने के लिए स्वच्छ एवं स्वास्थ्यवर्धक जल की आवश्यकता होती है परन्तु पर्यावरण प्रदूषण के कारण पृथ्वी के जल स्रोतों का जल अणु दूषित होने लगा है। जल प्रदूषण के बारे में अज्ञानता के कारण हम जल के साथ-साथ कितने ही जानलेवा तत्व शरीर में पहुँचा देते हैं जो हमारे शरीर को धीरे-धीरे कमज़ोर एवं बीमार बना देते हैं। प्रदूषित जल शरीर के अलावा अन्य भौतिक सम्पत्तियों को भी नष्ट करता रहता है।

हम जानते है कि उद्योगों एवं घरेलू पानी का उपयोग होने के पश्चात् पानी गन्दा हो जाता है। पानी गन्दा होने से इसके pH मान में परिवर्तन हो जाता है जिससे पानी अम्लीय या क्षारीय हो जाता है। जल को प्रदूषित करने में अन्य बहुत से कारक जैसे—सड़े-गले पदार्थ, आँधी, तूफान, वायुमण्डल में उपस्थित गैसें आदि संयोग करते हैं। पानी में ऑक्सीजन की कमी होने से पानी विषकारी हो जाता है। भारतवर्ष में जल प्रदूषण की स्थिति भयावह होती जा रही है। लोग अब इसके प्रति सजग होने लगे है। लखनऊ, कानपुर, कोलकाता, वाराणसी, दिल्ली आदि शहरों में जल प्रदूषण अपनी चरम सीमा पर है। एक अनुमान के अनुसार विश्व के लगभग 25,000 व्यक्ति प्रतिदिन प्रदूषित जल का सेवन करते है और अनेक बीमारियों जैसे-पेचिश, हैजा, पीलिया, तपेदिक, ग्रैस्टोइन्टाइटिस आदि से ग्रसित हो जाते है और निवारण न होने की दशा में मर भी जाते हैं। भारत सरकार की ओर से पर्यावरण प्रदूषण नियन्त्रण की दिशा में केन्द्रीय एवं राज्य स्तर पर भी प्रयास किये गये है। सन् 1980 में भारतीय योजना आयोग के डिप्टी मिनिस्टर माननीय नारायण दत्त तिवारी की संस्तुति पर पर्यावरण विभाग की स्थापना हुई, जो 1985 में नये विभाग ''पर्यावरण एवं जन विभाग'' में परिवर्तित हुआ।

3.1-1 प्रदूषक (Pollutants)

प्रदूषक ठोस, द्रव अथवा गैस के रूप में हो सकते है, ये वे पदार्थ होते है जिनसे माध्यम भौतिक या रासायनिक अथवा जैविक रूप से या तीनो तरह से प्रभावित होता है। भौतिक प्रदूषक ऐसे होते हैं जिनकी वजह से माध्यम में प्रदूषण देखकर, सूंघने से अथवा महसूस किया जा सकता है। ऊष्मा, गन्ध और ठोस पदार्थ आदि रासायनिक प्रदूषणों को देखकर तो नहीं बल्कि उनका प्रभाव त्वचा एवं जीभ पर एवं सांस लेते हुए आसानी से महसूस किया जा सकता है। प्रदूषक ही माध्यम में प्रदूषण उत्पन्न करते हैं। माध्यम पानी, हवा, मिट्टी आदि कुछ भी हो सकता है। प्रदूषण कई प्रकार के होते हैं, जैसे—जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, ऊष्मा, रेडियोधर्मी प्रदूषण एवं ठोस अपशिष्ट आदि। अब हम जल प्रदूषण पर विचार करते हैं।

3.1-2 जल प्रदूषण के स्रोत (Sources of Water Pollution)

विभिन्न स्रोतों में उपलब्ध पानी प्राकृतिक अथवा मनुष्य की क्रियाओं से प्रदूषित होता रहता है। यथा आँधी, तूफान आदि के द्वारा धूल के कण खुले जल स्रोतों में मिलकर उनका जल दूषित कर देते हैं। पानी के अन्दर स्वयं घोलक (Solvent) का

Scanned by CamScanner

गुण होता है जिसकी वजह से पानी सम्पर्क क्षेत्रों में रहने से अनेकानेक HYDROLYTIC क्रिया से अति प्रदूषित होता रहता है। विभिन्न निचले स्थानों में पानी के अधिक समय तक भरे रहने से उसमें अनेक रोगाणु, काई (Algae), विषाणु आदि उत्पन्न हो जाते है जिससे आस-पास का वातावरण प्रदूषित हो जाता है और वर्षा के समय यह पानी वर्षा जल के साथ बहकर स्वच्छ जल स्रोतों में मिल जाता है जिससे स्वच्छ जल प्रदूषित हो जाता है। हालांकि बहते पानी में स्वशोधी (Self Cleaning) क्रिया चलती रहती है। लेकिन जब गन्दगी का स्तर एक सीमा से अधिक हो जाये जिससे पानी के भौतिक गुण यथा रंग, गन्ध, स्वाद, ताप व गंदलापन आदि ज्यादा प्रभावित होने लगे तो बहते पानी की स्वशोधन क्षमता स्वयं क्षीण (Dormant) हो जाती है। जब पानी में रासायनिक जैविक अवगुण यथा फॉस्फेट, नाइट्रेट, pH, B.O.D. व C.O.D. आदि व शैवाल, कवक, जीवाणु, विषाणु, प्रोटोजोआ, कीट और रोटीफर्स आदि समाने लगे जिनसे तात्क्षणिक (Instant) अथवा धीरे-धीरे रोगग्रसित होने की सम्भावना अथवा निश्चितता बनी रहती है तो यह पानी प्रदूषित पानी की श्रेणी में आता है। एक अनुमान के अनुसार देश के अधिकतर जल स्रोत यथा नदी, नहर आदि इतनी प्रदूषित हो चुकी है कि इनका पानी पीना खतरे से खाली नहीं है। यमुना में अकेले राजधानी दिल्ली क्षेत्र से 20,000 क्यूसेक सीवेज, एक हजार टन गोबर व 300 टन ठोस कचरा प्रतिदिन गिराया एवं मिलाया जाता है। इसके अलावा औद्योगिक स्राव भी अत्यधिक मात्रा में, जो खतरनाक श्रेणी का है, इस नदी में मिल जाता है। अत: राजधानी दिल्ली से गुजर रही यमुना का पानी, प्रदूषण की वजह से जहरीला हो गया है।

3.2 जल प्रदूषण उत्पन्न करने वाले कारक (Factors Contributing Water Pollution)

जल को प्रदूषित करने वाले कारक निम्न है—

3.2-1 प्राकृतिक प्रदूषण (Natural Pollution)

प्राकृतिक क्रियाओं के कारण जल दूषित हो जाता है। जब हवा मे मिले हुए धूल कण वर्षा के समय वर्षा जल के साथ घुलकर जमीन पर आते है तो वर्षा जल अम्लीय हो जाता है तथा अशुद्ध हो जाता है। सल्फर डाई ऑक्साइड (SO_2 एवं SO_3) वर्षा जल एवं बर्फ के साथ घुलकर सल्फ्यूरस अम्ल (H_2SO_3) एवं सल्फ्यूरिक अम्ल (H_2SO_4) बनाते हैं। उक्त वर्षा में जल का pH मान कम हो जाता है। जब वर्षा जल का pH मान 5·7 से कम हो जाता है तब यह वर्षा अम्ल वर्षा कहलाती है। कार्बन मोनो-ऑक्साइड (CO) एवं कार्बन डाई-ऑक्साइड (CO_2) भी वर्षा जल के साथ कार्बोनिक अम्ल बनाते है जो जल को अम्लीय बना देते है। इस अम्लीय वर्षा का जीव-जन्तुओं, पेड़-पौधे, प्राकृतिक सन्तुलन एवं पदार्थों पर बहुत ही विनाशकारी प्रभाव पड़ता है। जल में रहने वाले जीव 4 से कम pH मान की वर्षा की एक बूंद भी सहन नहीं कर सकते है। सामान्यतय: 6 से कम pH मान पर कई अल्गाई (Algae) जैसी कोमल वनस्पतियां भी समाप्त हो जाती हैं।

बर्फ पिघलने से एवं तेज वर्षा के समय सिल्ट और बालू जल के साथ बहकर तालाबों, झीलों और नदियों के पानी में मिल जाती है बहते जल में मृदा के घुलनशील लवण भी मिल जाते हैं। जानवरों का मलमूत्र तथा मृत पेड़ एवं जानवर भी जल को दूषित करते हैं।

जिन क्षेत्रों में ज्वालामुखी फूटते हैं, वहां से धूल एवं अन्य गैसो का गुब्बार पृथ्वी के अन्दर पिघले मेग्मा के साथ बाहर निकलता है। ये धूल एवं गैसों का गुब्बार वायु प्रदूषित तो करता ही है, अप्रत्यक्ष रूप से जल प्रदूषण का कारण भी बनता है। जल योजन क्रिया में जल में उपस्थित विभिन्न अवयवों की मात्रा सामान्य ताप पर Dormant रहती है। परन्तु अधिक ताप पर ये अवयव आपस में मिलकर Complex अवयव बनाते है जिनसे H^+ व OH^- भी संयोग करते है जिससे अवयवों की आपसी क्रिया के परिणामस्वरूप उपजे तीसरे अवयव से जल प्रदूषण होता है।

3.2-2 कृषि सम्बन्धी प्रदूषण (Agricultural Pollution)

पृथ्वी के बड़े भू-भाग पर कृषि-कार्य सम्पन्न होता है जिसमें अनेक प्रकार के अनाज व खाद्यान्न उगाये जाते है। फसलों की उपज बढ़ाने के लिए आजकल रासायनिक खादों और कीटनाशकों का प्रयोग किया जाने लगा है जिसमें फॉस्फेट, नाइट्रेट व यूरिया आदि मुख्यत: उपयोग में लायी जा रही है और कीटनाशकों में D.D.T. Aldrin, BHC, Chlorade, Heptachlor, Methoxychlor, Hexachlorobenzenl, Benomyl व Carbofuran आदि का प्रयोग किया जाता है। इन खादों और कीट नाशकों की कुछ मात्रा अन्न में चली जाती है और कुछ अंश मिट्टी में घुला रह जाता है। वर्षा जल के साथ ये पदार्थ भी घुल जाते हैं और वर्षा जल के साथ बहकर ये पृष्ठीय जल स्रोतों को प्रदूषित ही नहीं वरन् उनको जहरीला भी बनाते हैं। इनका प्रभाव मनुष्यों पर अत्यन्त घातक होता है। यही जल जब बहकर नदियों में मिलता है तो कई प्रजाति की मछलियां कीटनाशकों के प्रभाव से मर जाती है। वर्षा जल रिसकर भूमिगत जल को भी प्रदूषित कर देता है।

3.2-3 खनन प्रदूषण (Mining Pollution)

भूगर्भ में असंख्य खनिज पदार्थ विद्यमान हैं। मनुष्य इनका उपयोग अन्य विकास कार्यों में करता है। खनिजों को प्राप्त करने के लिये खुदाई करनी पड़ती है। ये खनिज जमीन में विभिन्न गहराईयों पर मिलते हैं। इनके साथ-साथ मिट्टी एवं अन्य अशुद्धियां भी बाहर आ जाती है। शुद्ध खनिज प्राप्त करने के लिये इसकी धुलाई करनी पड़ती है। धुलाई की क्रिया में धूल, मिट्टी एवं अन्य घुलनशील तथा अघुलनशील लवण पानी के साथ बहकर निस्राव नालियों में मिल जाते हैं जिससे निस्राव नालियों का जल प्रदूषित हो जाता है। इसका ज्वलन्त उदाहरण कोयले की खानों से प्राप्त अम्लीय निस्राव है। इस समस्या का समाधान अभी तक नहीं निकाला जा सका है। कोयले की खानों में कोयले के साथ कुछ मात्रा पायराइट (FeS_2) की मिली रहती है। यही पायराइट जल से संयुक्त होकर फेरिक सल्फेट और सल्फ्यूरिक अम्ल बनाता है। खानों की निकास नालियों के साथ सल्फ्यूरिक अम्ल और फेरिक सल्फेट बहकर निकलता रहता है। कोयले की खानों से निकलने वाले पानी का निस्तारण काफी विषकारी होता है।

3.2-4 नगरपालिका प्रदूषण (Municipal Pollution)

नगरों में मकानों से निकला Excreta कूड़ा-करकट भूमिगत नालियों द्वारा नदियों व झीलों में गिराया जाता है। इसी प्रकार कारखानों द्वारा विसर्जित पदार्थ नदियों के जल में मिलते रहते हैं। वर्षा जल के साथ सड़कों, गलियों की गन्दगी भी बहकर सीधे ही या सीवर पाइपों से बहकर नदी में मिल जाती है। Urine में यूरिया होती है जो पानी के साथ मिलकर NH_3 उत्पन्न करता है। अन्य कार्बनिक पदार्थों के अपघटन से नाइट्रोजनित पदार्थ बनते हैं जिससे जल दूषित हो जाता है। चूँकि सीवेज मे कार्बनिक पदार्थ, अकार्बनिक पदार्थ, रोगाणुजनक पदार्थ एवं अन्य जहरीले पदार्थ मिले रहते हैं। कार्बनिक पदार्थ के अपघटन में ऑक्सीजन खर्च होती है। इसकी आपूर्ति नदी जल में घुली ऑक्सीजन द्वारा होती है। कार्बनिक पदार्थों की अधिकता होने पर नदी जल में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है, जिससे B.O.D. बढ़ जाती है तथा नदी की स्वशोधी क्षमता नष्ट हो जाती है और जल दुर्गन्ध युक्त हो जाता है जिससे संक्रामक रोग फैलने की सम्भावना हो जाती है। इसके साथ ही ऐसे जल में रहने वाले जीव भी नष्ट हो जाते हैं।

3.2-5 औद्योगिक प्रदूषण (Industrial Pollution)

अधिकतर उद्योग अपने उत्पाद निर्माण प्रक्रिया में जल का प्रयोग करते हैं। रसायन उद्योग मे भी जल का प्रयोग होता है। रसायन उद्योगों का निस्राव अधिक घातक होता है क्योंकि इनमे कई तीव्र अम्ल, क्षार, लवण जहरीले पदार्थ होते है। इनसे कार्बनिक पदार्थों के अपघटन क्रिया के लिए जरूरी जीवाणु प्रभावित होते है और ये नष्ट हो जाते हैं जिससे कार्बनिक पदार्थों की अपघटन की क्रिया रुक जाती है। पारा, क्लोरीन एवं कास्टिक सोडा कल-कारखानों से जल मे आता है जो जलीय प्राणियों के खाद्य शृंखला के द्वारा मनुष्य के शरीर में पहुँचता है जिसके कारण तन्त्रिका में विकास उत्पन्न हो जाते है और पागलपन उत्पन्न हो जाता है। कई छोटे-छोटे उद्योग निस्राव को भूमि में अन्दर बोरिंग के द्वारा पहुँचा देते हैं जिससे भूमिगत जल दूषित होता है। पारा, लेड, कैडमियम, आर्सेनिक, जस्ता, ताँबा आदि की मात्रा जल को विषैला बना रही है। लेड प्राणियों के ऊतकों में एकत्रित होकर हानि पहुँचाता है। कॉपर एवं जिंक (Cu व Zn) प्राणियों की क्रियाओं को प्रभावित करता है।

3.3 जल प्रदूषण के प्रभाव (Effects of Water Pollution)

मनुष्यों, जीव-जन्तुओं, पेड़-पौधो, पदार्थों आदि पर जल प्रदूषण के हानिकारक प्रभाव पड़ते है। विस्तृत रूप में जल प्रदूषण से होने वाले दुष्प्रभाव अग्रलिखित है—

Scanned by CamScanner

3.3-1 मनुष्यों पर प्रभाव (Effect of Human)

दूषित जल का मनुष्य के स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है। दूषित जल से होने वाली बीमारियाँ जल में प्रदूषण सान्द्रण की मात्रा (Quantity) पर निर्भर करती है। पीलिया, हैजा, दस्त, टाइफाइड, अपच, जठर, आंत्रशोथ एवं पैराटाइफाइड जैसी बीमारियां प्रदूषित जल के सेवन से पनपती हैं। औद्योगिक व निस्राव में सीसा, कैडमियम, पारा व अन्य विषैले रसायन अम्ल क्षार आदि पानी को जहरीला बनाते हैं। अगर इनकी सूक्ष्म मात्रा भी शरीर में पहुँच जाये तो घातक बीमारियाँ जैसे—गुर्दा फेल होना, फेफड़े खराब होना, कैंसर एवं हृदय सम्बन्धी अनेक बीमारियाँ घर करने लगती है और उपचार न हो पाने पर ये मनुष्य को मृत्यु के मुँह में धकेलती रहती है। जलीय जीव मछली, केकड़े, कछुए आदि जहरीले हो जाते हैं जिनका मनुष्यों द्वारा सेवन विभिन्न रूपों में किये जाने से दूषित तत्व शरीर में प्रवेश कर जाते हैं और मनुष्यों को मौत के मुँह में ले जाते हैं।

सन् 1953 में जापान की मिनमाता खाड़ी के गाँवों में मछली खाने से लगभग 52 लोग मारे गये क्योंकि खाड़ी में एक प्लास्टिक फैक्ट्री का पारायुक्त निस्राव खाड़ी में गिरता था। इस पारे से खाड़ी की मछलियाँ प्रदूषित हो गयी थीं।

3.3-2 जलीय पारितन्त्र पर प्रभाव (Effect on Aquatic Ecosystem)

तालाबों, नदियों, झीलों, नहरों व जलाशयों आदि का जलीय पारितन्त्र होता है। इसमें जीवों की अनेक प्रजातियाँ, वनस्पतियाँ होती हैं जो दूषित जल के कारण नष्ट हो जाती हैं। कुछ प्रजातियाँ तो सीधे ही नष्ट हो जाती हैं तथा बचे जीवों के लिए खाद्य शृंखला में कमी होने से वे भी नष्ट हो जाते है तथा जलीय जीवों की अनेक प्रजातियाँ विलुप्त हो जाती है। अतः इन प्रजातियों को विलुप्त होने से बचाने के लिए दूषित जल को प्राकृतिक जल स्रोतों मिलने से रोका जाना चाहिए।

डॉल्फिन को निगल गया गंगा का प्रदूषण—बाँधों और प्रदूषण ने डॉल्फिन को लगभग निगल लिया है। वर्ष 1995 तक गंगा और सहायक नदियों में डॉल्फिन की संख्या 40,000 से भी ज्यादा थी उनकी अब घटकर 2000 हजार रह गई। ब्रह्मपुत्र नदी में भी कभी हजारों डाल्फिन थीं, लेकिन अब 300 रह गई है। विशेषज्ञों के अनुसार जलीय प्रदूषण के कारण डॉल्फिन की प्रजनन क्षमता भी कम हो गई है। गंगा के अलावा युमना, सोन, केन, बेतवा, घाघरा, गेरुवा और रामगंगा में भी सर्वे के दौरान डॉल्फिन मिली हैं। गंगा और सहायक नदियों में 2012 में कराई गई गणना में 671 डॉल्फिन दर्ज हुई थीं। रामगंगा में भी मुरादाबाद से बिजनौर तक 12 डॉल्फिन बताई गई हैं।

2009 में बनी राष्ट्रीय जलीय जीव—डॉल्फिन को सरकार ने वर्ष 2009 में जलीय जीव घोषित किया था। शिकारियों पर कार्यवाही करने के निर्देश भी हुए। लेकिन शिकार अभी भी जारी है। माना जाता रहा है कि हर साल 100 डाल्फिन का शिकार हो जाता है।

बिहार में बनी है सेंचुरी—डाल्फिन को संरक्षित करने के लिए वर्ष 1991 में बिहार के भागलपुर में एक डॉल्फिन सेंचुरी बनाई गई। यह सेंचुरी गंगा में 50 किमी० के दायरे में बनाई गई है। यह सुल्तानपुर से पाहल गांव तक फैली है।

3.3-3 पेड़-पौधों पर प्रभाव (Effect on Plants)

यदि सिंचाई के लिए प्रदूषित जल का प्रयोग किया जाये तो प्रदूषक पदार्थ पेड़-पौधों में भोजन के साथ पहुँच जाते हैं, जिसके कारण उनकी वृद्धि रुक जाती है तथा पत्ते पीले पड़ जाते हैं। फलों में प्रदूषक पदार्थ पहुँचकर उन्हें जहरीला बना देते हैं। मनुष्य जब इन फलों का सेवन करता है तो वह बीमार पड़ जाता है। समुद्री घास भी प्रदूषण से नष्ट हो जाती है (चित्र 3.1)। दूषित जल से उस पेड़ अथवा पौधे के आस-पास की मृदा की सतह पर काई (Algae) की पर्त बन जाती है जिससे वृक्ष के जल में हवा एवं प्रकाश का आवागमन रुक जाता है। फलस्वरूप पेड़ सड़कर नष्ट हो जाता है।

3.3-4 जीव-जन्तुओं पर प्रभाव (Effect on Animals)

प्रदूषित जल में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है जिससे कार्बनिक पदार्थों का विघटन नहीं होने पाता जिससे उसमें दुर्गन्ध आने लगती है। इसमें कई हानिकारक पदार्थ मिल जाते हैं। औद्योगिक स्राव में जहरीले तत्व होने की वजह से जलीय जीव प्रतिकूल भोजन (जहरीला भोजन) करते है जिसको सहन न कर पाने की स्थिति मे उनकी मृत्यु तक हो जाती है। उनकी मृत्यु से जल में पड़े रहने से जल में प्रदूषण की सान्द्रता बढ़ जाती है जिससे जलीय जीवों का अस्तित्व खतरे में आ जाता है। प्रदूषक

पदार्थों के तली में बैठने से शैवाल आदि घासें नष्ट हो जाती हैं जिससे प्रकाश संश्लेषण बन्द हो जाने से जल में ऑक्सीजन की कमी आ जाती है। जल मे ऑक्सीजन की कमी होने से पूरा जलीय पारितन्त्र दुर्गन्धयुक्त हो जाता है जिससे जीवधारियों की आपस में परस्पर निर्भरता समाप्त होने लगती है।

3.3-5 पदार्थों पर प्रभाव (Effect on Materials)

प्रदूषित पानी के सम्पर्क में पदार्थों के आने से उनका संक्षारण होने लगता है। संक्षारण होने से पदार्थों की आयु घटने लगती है। दूषित जल से पानी के पाइप, पम्प, वाल्व व अन्य उपकरण खराब हो जाते हैं। प्रदूषित जल का प्रयोग कंक्रीट में होने से उसकी सामर्थ्य प्रभावित होती है तथा बन्धक गुण भी समाप्त हो जाते है। अम्ल वर्षा से पत्थर की बनी ऐतिहासिक इमारतें कांतिहीन एवं खुरदरी हो जाती हैं। इसी कारण ताजमहल की चमक अब फीकी पड़ गयी है। जब यही अम्ल वर्षा धात्विक पदार्थों पर पड़ती है तो रासायनिक क्रिया के फलस्वरूप पदार्थों की सतह खराब हो जाती है। कुछ उद्योगों के निस्राव में पायी जाने वाली भारी धातुयें तथा/इससे प्रभावित अंग निम्न तालिका में दर्शाये गये है—

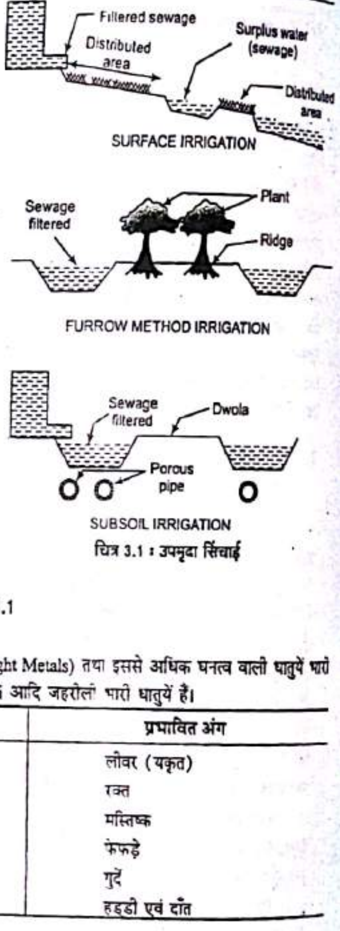

चित्र 3.1 : उपमृदा सिंचाई

तालिका 3.1

भारी धातुओं का प्रभाव

15 gm/cm^3 से कम घनत्व वाली धातुयें हल्की धातुयें (Light Metals) तथा इससे अधिक घनत्व वाली धातुयें भारी धातुयें (Heavy Metals) कहलाती है। Hg, Pb, Cu, Cd, Zn, Ni आदि जहरीली भारी धातुयें हैं।

क्रमांक	भारी धातुयें	प्रभावित अंग
1.	As, Hg, Mo, Se	लीवर (यकृत)
2.	As, Cd, Hg, Pb	रक्त
3.	As, Pb, Hg	मस्तिष्क
4.	As, Cd, Hg	फेफड़े
5.	As, Pb, Hg, Cd	गुर्दे
6.	Cd, Se	हड्डी एवं दाँत

3.4 सूक्ष्म जीवाणु (Microbes)

वे जीवाणु जिनको हम आँखों से सीधे नहीं देख सकते है, अर्थात इनको देखने के लिए किसी उपकरण की आवश्यकता पड़ती है, सूक्ष्म जीवाणु कहलाते है। ये जीवाणु रोगजनक (Pathogenic) भी हो सकते हैं। ये सरल रचना के एक कोशिकीय जीवित प्राणी होते हैं जो जीवाणु रोग जनक होते है। ये हैजा, पेचिस, टी० बी०, मलेरिया आदि बीमारियां उत्पन्न करते है। कुछ जीवाणु वायुजीवी तथा कुछ अवायुजीवी होते है। वायुजीवी जीवाणु ऑक्सीजन की उपस्थिति में कार्बनिक पदार्थों का विघटन कर देते हैं। अवायुजीवी जीवाणु वहाँ पनपते हैं, जहाँ ऑक्सीजन की अनुपस्थिति होती है। ये जटिल यौगिकों को सरल यौगिकों में विघटित कर देते हैं। इनकी वृद्धि के लिए अवायुजीवी परिस्थितियाँ होना आवश्यक है।

Scanned by CamScanner

हमारे वातावरण को प्रदूषित करने वालों में जीवाणु भी पीछे नहीं हैं। ये हमारे वायुमण्डल, जल, मृदा, अन्न, फल आदि को प्रदूषित करते हैं। ये सूक्ष्म जीव विषैले होते हैं। ये भोजन को जहरीला बना देते हैं। कुछ जीवाणु भोजन पकाने पर भी जीवित बने रहते हैं। इनमें डायरिया, उबकाई आना, दस्त एवं उल्टी आना आदि कई बीमारियाँ होने का खतरा रहता है।

जीवाणु प्रकृति के सन्तुलन को बनाये रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं क्योंकि वातावरण में ऑक्सीजन, सल्फर, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, कार्बन आदि का सन्तुलन बनाये रखने के लिए जैव अपघटन क्रिया अति आवश्यक है।

3.5 लीचिंग मेटल (Leaching Metal)

विभिन्न उद्योगों एवं घरों से निकलने वाला कूड़ा-करकट आदि ठोस अपशिष्ट को खुले में छोड़ दिया जाता है। इसमें विभिन्न जहरीली धातुओं के कण भी मिले रहते हैं। जब यह ठोस अपशिष्ट एक ही स्थान पर काफी समय तक पड़ा रहता है और जब वर्षा होती है तो कचरे के ढेर के रन्धों से होकर पानी बाहर बहने लगता है। इसमें कचरे के ढेर की गन्दगी मिली रहती है तथा बहुत सी विषैली धातुओं के शून्य कण भी मिले रहते हैं। इस बहाव में धात्विक कणों को ही लीचिंग मेटल कहते हैं। यह गन्दा जल बहकर नदियों में मिल जाता है तथा कुछ भाग रिसकर भौम जल में मिल जाता है जिससे ये जल स्रोत जहरीले हो जाते हैं। नदियों के जल में जहरीली धातुओं के मिलने से मछलियाँ मरने लगती हैं तथा कुछ जहरीली हो जाती है और जब मनुष्यों द्वारा इनका सेवन किया जाता है तो वे बीमार पड़ जाते हैं।

3.6 घरेलू अपशिष्ट जल (Domestic Waste Water)

घरों में पानी के विभिन्न कार्यों मे प्रयोग करने के बाद घरों से निकलने वाला गन्दा जल घरेलू अपशिष्ट जल कहलाता है। यह स्नानग्रह, रसोईघर, शौचालयों, पेशाबघरों से निकलने के कारण इसमें मलमूत्र, सड़े-गले खाद्य पदार्थ, सब्जियों के छिलके एवं जीवाणु मिले रहते हैं। यह जल घरों की नालियों से छोटे नालों में होकर फिर सीवर लाइन से होते हुए नदियों में गिरा दिया जाता है, जिससे नदियों का पानी दूषित हो जाता है।

3.7 औद्योगिक अपशिष्ट जल (Industrial Waste Water)

उद्योगों से निकले अपशिष्ट पदार्थों जैसे—धूल, कोयला, अम्ल, क्षार, फीनोल, सल्फाइड, सल्फेट, पारा, लेड व जिंक आदि सीधे ही नदी व नहरों में छोड़ दिये जाते हैं तथा कई उद्योगों से ये जहरीली धातुयें व्यर्थ जल के साथ बाहर निकलती हैं। जब उद्योगों से निकलने वाले व्यर्थ जल में हानिकारक धातुओं के कण मिलकर बाहर निकलते हैं तो यह जल ही औद्योगिक अपशिष्ट जल कहलाता है। इस पानी में कई प्रकार के प्रदूषक मिले रहते हैं। बहुत से उद्योग जैसे—चर्मशाला (Tannery), बूचड़खाना (Slaughter house), धुलाईघर (Laundries), कागज एवं लुग्दी उद्योग (Paper and Pulp mill), खाद कारखाने (Fertilizer) आदि से निकलने वाला निस्राव बहुत ही घातक होता है। जब यह निस्राव जलधाराओं (नदियों) में डाल दिया जाता है तो जल धाराओं का जल जहरीला हो जाने से मछलियाँ मरने की घटना हमारे सामने आने लगती है। इसमें रोगजनक शून्य जीवाणु भी होते हैं जो कई प्रकार की बीमारियाँ उत्पन्न करते हैं जिससे महामारी फैलने का डर रहता है।

3.8 सीवेज (Sewage)

घरों से निकला दूषित जल व फैक्ट्री, चर्मशाला, बूचड़खाना, धुलाईघरों, अस्पतालों एवं रासायनिक उद्योगों से निकलने वाला दूषित जल ही Sanitary sewage कहलाता है। जब यह सीवेज वर्षा जल के साथ बहता है तो इसे वर्षा ऋतु बहाव कहते हैं और जब यह सीवेज वर्षा जल के साथ नहीं बहता है तो इसे शुष्क ऋतु बहाव (dry weather flow) कहते हैं। अन्य कई विषैले पदार्थ भी इसके साथ मिले रहते हैं।

3.9 अपशिष्ट जल के लक्षण (Chracteristics of Waste Water)

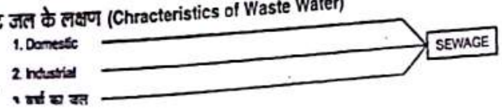

प्रदूषित जल के लक्षणों को हम तीन उपवर्गों में बाँट सकते हैं जो कि तालिका 3.2 में दर्शाये गये हैं।

तालिका 3.2–अपशिष्ट जल के लक्षण

क्रम सं०	भौतिक	रासायनिक	जैविक
1.	तापमान	1. घुलित ऑक्सीजन (D.O.)	1. बैक्टीरिया
2.	रंग	2. बी० ओ० डी० (B.O.D.)	2. कोलीफार्म
3.	प्रकाश मेघता	3. सी०. ओ० डी० (C.O.D.)	3. अल्गाई
4.	संवाहन	4. pH	4. वायरस
5.	कुछ ठोस पदार्थ	5. अमोनिया, नाइट्रेट, नाइट्राइट	
		6. क्षारीयता/अम्लीयता	
		7. सल्फेट	
		8. भारी धातुयें, मरकरी, सीसा, क्रोमियम, क्लोराइड, कार्बनिक कीटनाशक, डिटरजेन्ट	
		9. रेडियोधर्मी पदार्थ	

3.10 पेयजल के मानक (Standards for Drinking Water)

विभिन्न संस्थानों द्वारा पेयजल के मानक निर्धारित किये गये हैं। इन मानकों में प्रदूषकों की अनुमेय सीमा (Permissible Limit) तथा अधिकतम या सहनशील सीमा (Tolerable or excessive Limit) निर्धारित की गई है। तालिका 3.3 में ये मानक दर्शाये गये हैं। पहले स्तम्भ में भारतीय मानक संस्थान द्वारा निर्धारित मानक हैं तथा दूसरे स्तम्भ में I.C.M.R. (Indian Council of Medical Research) द्वारा निर्धारित मानक है तथा तीसरे स्तम्भ में विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा निर्धारित मानक दिये गये हैं।

तालिका 3.3

पेयजल के मानक (Standards for drinking water)

मानदण्ड (Parameter)	भारतीय मानक IS : 10500 - 1983		I.C.M.R.		विश्व स्वास्थ्य संगठन W.H.O	
भौतिक						
रंग	10	50	5	25	5	50
स्वाद एवं गन्ध	आपत्तिजनक		आपत्तिजनक		आपत्तिजनक	
गंदलापन	10	25	5	25	5	25
रासायनिक						
पी० एच०	6·5–8·5	6·5–9·5	7–8·5	6·5–9·2	7–8·5	6·5–9·2
कुल ठोस कण	—	—	—	—	—	—
कुल कठोरता	300	600	300	600	—	—
कैल्शियम	75	200	75	200	75	200
मैग्नीशियम	30	100	50	150	50	150
कॉपर	0·05	1·5	1·0	3·0	1·0	1·5
मैंगनीज	0·1	0·5	0·1	0·5	0·1	0·5
क्लोराइड	250	1000	250	1000	250	600
फ्लोराइड	0·6–1·2	—	1·0	2·0	0·5	1·0–1·5
विषैले पदार्थ						
आर्सेनिक	0·05	—	—	0·2	—	0·2

Scanned by CamScanner

कैडमियम	0·05	—	—	0·05	—	0·05
सायनाइड	0·05	—	—	0·01	—	0·01
सीसा (लेड)	0·1	—	—	0·1	—	0·1
सेलेनियम	0·01	—	—	0·05	—	0·01
जिंक	5·0	10·0	—	—	—	—
पारा	0·01	—	—	—	—	—
जैविक						
कॉलीफार्म	1 कॉलीफार्म/100 ml		1 कॉलीफार्म/100 ml		1 कॉलीफार्म/100 ml	
रेडियोधर्मिता						
अल्फा उत्सर्जक (uc/ml)	10^{-8}	—	—	10^{-9}	—	10^{-9}
बीटा उत्सर्जक (uc/ml)	10^{-7}	—	—	10^{-8}	—	10^{-8}

3.11 उपचारित अपशिष्ट जल के मानक (Standards For Treated Waste Water)

जल बहुत से कार्यों में प्रयोग होने के बाद दूषित हो जाता है। इस जल को नदियों में गिराने से पहले इसका उपचार आवश्यक होता है। अत: उपचारित जल के मानक निम्न तालिका में दर्शाये गये है—

तालिका 3.4

उपचारित अपशिष्ट जल के मानक

क्रमांक	प्रदूषक	अधि० सीमा
1.	पी० एच०	5·5 – 9·0
2.	B.O.D.	30 ppm
3.	C.O.D.	250 ppm
4.	कुल निलम्बित ठोस	100 ppm
5.	ताप	40°C
6.	सोडियम	0·2%
7.	क्लोराइड	600 ppm
8.	फ्लोराइड	2 ppm
9.	जिंक	5 ppm
10.	कॉपर	3 ppm
11.	निकिल	2 ppm
12.	कैडमियम	2 ppm
13.	क्रोमियम	0·1ppm
14.	लेड	0·1ppm
15.	आर्सेनिक	0·2ppm
16.	सायनाइड	0·2ppm
17.	मरकरी	0·01ppm
18.	सेलेनियम	0·05ppm

3.12 उपचार (Treatment)

सीवेज को नदियों मे मिलाने से पहले इसका उपचार करना चाहिए। उपचारित जल को ही नदियों (प्राकृतिक जलधाराओं) मे मिलाना चाहिए जिससे प्रकृतिक जल धारायें जो मानव के विकास में बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान देती है, जहरीली न हो सके। अपशिष्ट जल का शोधन हम निम्न उद्देश्यों के लिए करते है—

(i) सीवेज के आयतन को कम करना।

(ii) तेलीय पदार्थों को दूर करना।

(iii) रोगजनक जीवाणु, विषाणु आदि को दूर करना।

(iv) निलम्बित कणो तथा कोलाइडल कणों को दूर करना।

(v) उपचारित सीवेज को सिचाई के लिए प्रयोग करना।

(vi) सीवेज की तीव्रता कम करना।

(vii) सीवेज को सुरक्षित तथा सन्तोषजनक करना।

3.12-1 अपशिष्ट जल के उपचार की विधियाँ (Treatments Methods of Waste Water)

उपचार प्रक्रम का खाका (Layout of Treatment System) चित्र 3.3 मे दर्शाया गया है।

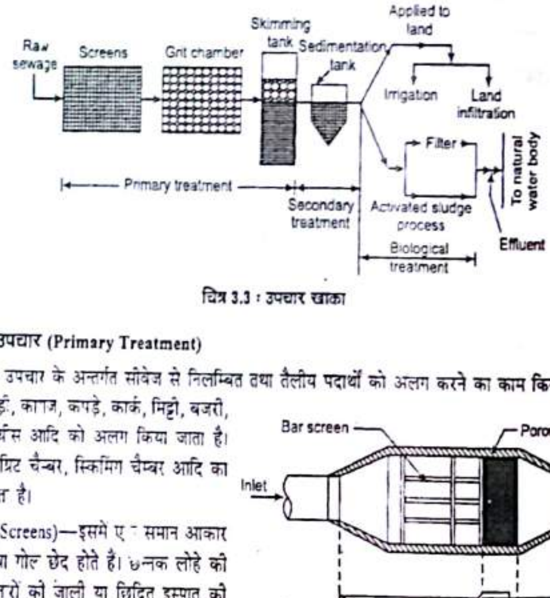

चित्र 3.3 : उपचार खाका

1. प्रारम्भिक उपचार (Primary Treatment)

प्रारम्भिक उपचार के अन्तर्गत सीवेज से निलम्बित तथा तैलीय पदार्थों को अलग करने का काम किया जाता है। इस उपचार से लकड़ी, कागज, कपड़े, कार्क, मिट्टी, बजरी, रेत, चिकनाई, ग्रीस आदि को अलग किया जाता है। इसमें स्क्रीनिंग, ग्रिट चैम्बर, स्किमिंग चैम्बर आदि का प्रयोग किया जाता है।

(i) छन्नें (Screens)—इसमे ए ¯ समान आकार के चौकोर अथवा गोल छेद होते है। छन्नक लोहे की समान्तर छड़ों, तरों को जाली या छिद्रित इस्पात की चादर का बना होता है। इस पर रुके हुए पदार्थों को समय-समय पर हटाते रहना चाहिए और उसका उचित निपटान कर दिया जाना चाहिए। (चित्र 3.4)।

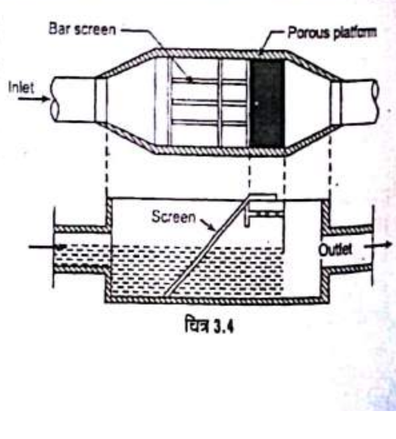

चित्र 3.4

Scanned by CamScanner

(ii) ग्रिट कक्ष (Grit Chamber)—सीवेज से 6 mm से कम माप के अकार्बनिक पदार्थों के कणों को दूर करने के लिए ग्रिट कक्ष का प्रयोग किया जाता है। इससे बजरी, बालू, गिट्टी आदि को अलग किया जाता है। जब पहली वर्षा होती है तो सीवेज में ग्रिट की मात्रा बढ़ जाती है। गलियों की सफाई, रसोईघर के निस्राव, गैराज व सर्विस स्टेशनों आदि से सीवेज में ग्रिट आ जाती है। इसको अलग करने के लिए दो कक्ष बनाये जाते हैं। जब एक कक्ष प्रयोग में होता है, तब दूसरा कक्ष साफ किया जाता है। ग्रिट कक्ष में सीवेज का वेग कम कर दिया जाता है जिससे कम वेग के कारण ग्रिट आसानी से तली में बैठ जाती है। फिर इसे अलग कर लिया जाता है (चित्र 3.5)।

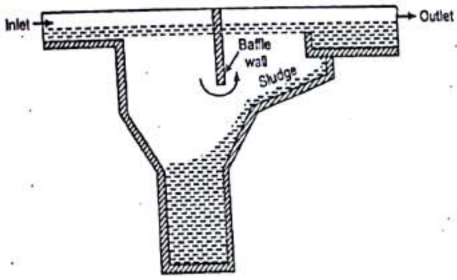

चित्र 3.5 : ग्रिट कक्ष (Grit Chamber)

(iii) स्किमिंग टैंक (Skimming Tank)—विभिन्न तेलीय पदार्थों को दूर करने के लिए स्किमिंग टैंक का प्रयोग किया जाता है। सीवेज में साबुन, चिकनाई, ग्रीस आदि तैरती अवस्था में होते हैं। इनको अलग करने के लिए टैंक में बैफल दीवारें बनी होती हैं और टैंक की तली में वायु डिफ्यूजर (Air diffuser) लगे होते हैं। जो नीचे से वायु को तीव्रता से टैंक में ऊपर की ओर भेजते हैं जिससे चिकनाईयुक्त पदार्थ झाग के रूप में बदल जाते हैं। जिनको फेन कुण्ड में अलग कर लिया जाता है। इस प्रकार इनलेट (Inlet) से सीवेज प्रवेश करता रहता है और फेन टैंक में चिकनाई दूर होती रहती है तथा चिकनाई रहित सीवेज Outlet से बाहर पहुँचता रहता है और फिर पेन टैंक से चिकनाई को बाहर निकाल लिया जाता है (चित्र 3.6)।

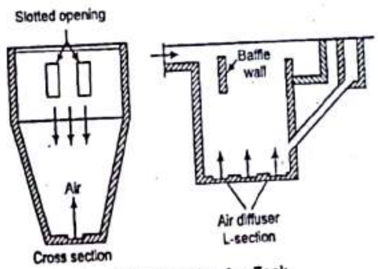

चित्र 3.6 : Skimming Tank

2. द्वितीयक उपचार (Secondary Treatment)

इस उपचार द्वारा सीवेज से महीन निलम्बित मृदा कणों एवं कोलाइडल कणों को पृथक किया जाता है। इसके अन्तर्गत रासायनिक अवसादन या साधा अवसाधन क्रिया आती है। इस उपचार का उद्देश्य 80-90% तक बैठने वाले पदार्थों को सीवेज

और इस क्रिया में किसी स्कन्दक का प्रयोग नहीं किया जाता है। कोलाइडल कण अपने भार के कारण नहीं बैठ पाते हैं। इन पर पानी द्वारा उत्थापक बल इनके भार से अधिक होता है जिससे ये तली में नहीं बैठ पाते हैं। यदि इन कोलाइडल कणों को संयुक्त कर दिया जाये तो भार पड़ने के कारण ये गुच्छों के रूप में तली में बैठने लगते हैं।

कोलाइडल कणों को संयुक्त करने के लिए स्कन्दकों का प्रयोग किया जाता है। स्कन्दकों से ये कण आपस में बड़े-बड़े गुच्छों का रूप ले लेते हैं और भार के कारण नीचे बैठ जाते हैं। इस प्रकार कोलाइडल कणों को दूर कर देते हैं। स्कन्दन क्रिया हेतु निम्न स्कन्दकों का प्रयोग किया जाता है—

(i) फिटकरी $[Al_2(SO_4)_3]$	(ii) $FeCl_2$
(iii) H_2SO_4	(iv) चूना $[Ca(OH)_2]$
(v) $FeCl_3$	(vi) $[Fe_2(SO_4)_2]$

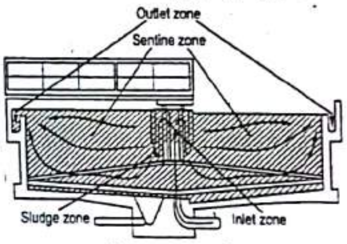

चित्र 3.7 : अवसादन टैंक

निस्यंदन (Filtration)—अवसादी टैंक से निकले हुए वाहित मल से तैरते हुए तथा हल्के ठोस पदार्थ अलग हो जाते हैं परन्तु बहुत महीन निलम्बित पदार्थ तथा घुले हुए पदार्थ कोलाइडी अवस्था में रह जाते हैं जिसके लिए फिल्टरेशन क्रिया की जाती है। इस क्रिया से पदार्थों का ऑक्सीकरण भी होता है। चित्र 3.8 में सीवेज फिल्टरों का प्रारूप दिखाया गया है।

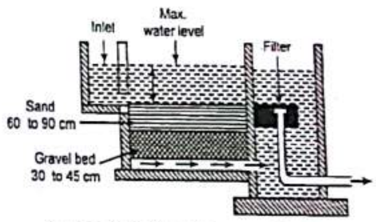

चित्र 3.8 : सीवरेज फिल्टर (Sewerage Filtration)

3. रोगाणुनाशक (Disinfectant)

अवसादन व फिल्टर क्रिया में रोगाणुओं को दूर नहीं किया जा सकता है जबकि सीवरेज से रोगाणुओं को दूर करना बहुत आवश्यक होता है। अतः रोगजनक कीटाणुओं को दूर करने के लिए रोगाणुनाशक क्रिया अपनाई जाती है। सीवेज में कुछ रासायनिक अवयव जैसे—क्लोरीन, ब्लीचिंग पाउडर, लाल दवा आदि मिलाकर सीवेज को रोगाणुओं से मुक्त कर लिया जाता है। क्लोरीन चूर्ण अथवा द्रव के रूप में मिलायी जा सकती है। सीवेज मे क्लोरीन की मात्रा इतनी मिलायी जानी चाहिए कि रोग जनक जीवाणु पूरी तरह से नष्ट हो जायें तथा इतनी अधिक मात्रा न मिलायी जाये जो कि उसमें क्लोरीन शेष रह जाये। रोगाणुनाशन के बाद सीवेज को किसी नदी या झील में छोड़ दिया जाता है अथवा सिंचाई हेतु प्रयोग में लाया जा सकता है।

Scanned by CamScanner

3.13 निस्राव उपचार संयन्त्र के भागों के मुख्य कार्य
(Main Functions of Parts of Effluent Treatment Plant)

3.13-1 स्क्रीनिंग चैम्बर (Screening Chamber)

निस्राव में निलम्बित तथा तैरते हुए पदार्थ जैसे कागज, लकड़ी के टुकड़े, रसोई का कचरा, कपड़ों के टुकड़े, कॉर्क, बालू, बजरी आदि को इसमें छानकर अलग किया जाता है।

3.13-2 ग्रिट चैम्बर (Grit Chamber)

रेत, राख, काँच के टुकड़े, छोटे अकार्बनिक पदार्थ के महीन कण, खनिज पदार्थ आदि ग्रिट चैम्बर द्वारा अलग हो जाते हैं। जैसे कि पहले बता चुके हैं कि इसमें निस्राव का वेग कम कर दिया जाता है। इसके लिए चैनल का परिच्छेद बढ़ा दिया जता है। कम वेग के कारण ग्रिट तली में बैठ जाती है।

3.13-3 स्किमिंग टैंक (Skimming Tank)

इस टैंक का कार्य तैलीय पदार्थों को अलग करना होता है। Air diffuser के द्वारा ग्रीस, तेल आदि को झाग में परिवर्तित कर दिया जाता है और फिर इसे अलग कर लिया जाता है।

3.13-4 अवसादन कक्ष (Sedimentation Tank)

इस कक्ष में अवसादन क्रिया होती है। इसमें निस्राव का वेग बहुत ही कम कर दिया जाता है और उसमें रासायनिक अवयव मिलाकर महीन कोलाइडल कणों को गुच्छों के रूप में अलग कर लिया जाता है।

3.13-5 सीवेज फिल्टर (Sewage Filter)

अत्यन्त महीन कणों वाले निस्राव को जैविक उपचार के लिए फिल्टर में भेजा जाता है। फिल्टर के छोटे-छोटे बेसिनों में जीवाणुओं की क्रिया से कार्बनिक पदार्थ विघटित हो जाते हैं। यह क्रिया ही जैविक क्रिया कहलाती है। जीवाणु कार्बनिक पदार्थों को सरल यौगिकों (H_2O तथा CO_2) में परिवर्तित कर देते हैं तथा निस्राव साफ होकर फिल्टर से बाहर निकल जाता है। जीवाणु कुछ अकार्बनिक पदार्थों का भी ऑक्सीकरण कर देते हैं।

3.14 उपचारित अपशिष्ट का पुनःप्रयोग एवं सुरक्षित निस्तारण
(Reuse and Safe Disposal of Treated Effluent)

शोधित अपशिष्ट जल या शोधित सीवेज प्रायः नदी, नालों आदि मे मिला दिया जाता है, इसे सीवेज का तनुकरण (Dilution) कहते हैं। बिना शोधन के सीवेज को नदी आदि में नहीं गिराना चाहिए। उपचारित सीवेज या बहुत कम प्रदूषित सीवेज ही नदी मे गिराना चाहिए और इसके अतिरिक्त कम प्रदूषित सीवेज या उपचारित सीवेज को खेती की सिंचाई के काम में लाया जाता है। इससे फसलों को काफी उपजाऊ तत्व सीवेज से ही प्राप्त हो जाते हैं और सीवेज का निस्तारण भी हो जाता है। अत्यधिक मात्रा में प्रदूषित सीवेज को सिंचाई के काम में नहीं लाना चाहिए। इस प्रकार से पता चलता है कि एक व्यर्थ पदार्थ का उचित पुनःउपयोग हो जाता है और साथ ही साथ उसका सुरक्षित निस्तारण भी हो जाता है।

खेतों की सिंचाई सीवेज द्वारा बार-बार लगातार नहीं करनी चाहिए क्योंकि इससे मृदा के रन्ध्र सीवेज की मिट्टी से बन्द हो जाते हैं और खेत की मृदा की फसल की उपजाऊ क्षमता कम हो जाती है। इसे सीवेज सिकनेस (Sewage sickness) कहते हैं।

3.15 जल प्रदूषण नियंत्रण के उपाय (Control of Water Pollution)

जल प्रदूषण को रोकना बहुत ही गम्भीर समस्या है। इसे रोकने के निम्न उपाय करना चाहिए—

1. अपशिष्ट जल को उपचारित करके ही नदियों (प्राकृतिक जलधाराओं) में मिलाना चाहिए।
2. ठोस अपशिष्ट को खुले स्थानों पर निपटान को रोका जाना चाहिए।
3. रासायनिक कीटनाशकों के स्थान पर जैव कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए।

4. कुओं में क्लोरीन डालकर या पोटेशियम परमैग्नेट ($KMnO_4$) का प्रयोग करके, पानी में रोगाणुनाशी का प्रयोग करके उसे प्रयोग में लाया जाना चाहिए।
5. मलजल के साथ वर्षा जल को नहीं जाने देना चाहिए। इसके लिए मलजल व वर्षाजल के लिए अलग-अलग सीवरेज सिस्टम अपनाना चाहिए।
6. नदियों में शवों व अधजले शवों को नहीं बहाया जाना चाहिए।
7. उर्वरको एवं कृषि मे उपयोग होने वाले रसायनों का बुद्धिमता से उपयोग हो। ढलान वाले क्षेत्रों में इनका प्रयोग न्यूनतम हो।
8. उर्वरकों के स्थान पर नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करने वाले पौधों का इस्तेमाल हो।
9. जल क्षेत्रों के आस-पास गंदगी करने, उसमें नहाने, कपड़े धोने तथा जानवरों को भी नहलाने आदि को रोकना भी आवश्यक है।
10. कुछ उद्योग, जो कम मात्रा मे निस्राव निकालते है, वे बोरवेल में अपशिष्ट जल को डाल देते हैं जिससे भूगर्भ जल दूषित हो रहा है। ये मामले प्रकाश मे आने लगे हैं। सरकार को इन पर रोक लगानी चाहिए।

प्रश्नावली

1. जल प्रदूषण उत्पन्न करने वाले कारक कौन-कौन-से है? वर्णन करो। **(B.T.E. 2016)**
2. प्रदूषक क्या होते है? ये माध्यम पर कैसे प्रभाव डालते है?
3. जल मे प्रदूषण पैदा करने वाले प्रदूषक तथा इनके सामान्य जीवन पर प्रभावो का वर्णन करो।
4. भारी धातुओ के हानिकारक प्रभावों को सारणीबद्ध कीजिए।
5. सूक्ष्म जीवाणुओ पर संक्षिप्त नोट लिखिये।
6. घरेलू अपशिष्ट जल पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो।
7. लीचिंग मेटल्स (Leaching metals) क्या है? वर्णन कीजिए।
8. औद्योगिक अपशिष्ट जल प्राकृतिक जल धाराओं को किस प्रकार प्रदूषित करता है? यह भी बताइये।
9. सीवेज के बारे मे नोट लिखिये।
10. अपशिष्ट जल के मानकों को लिखिये।
11. किन्हीं 10 पेयजल के मानकों को लिखिए।
12. निस्राव की उपचार विधियों को समझाइये। **(B.T.E. 2012)**
13. उपचारित अपशिष्ट जल का पुनःप्रयोग कैसे किया जाता है?
14. जल प्रदूषण के प्रभावो का विस्तृत वर्णन कीजिए।
15. जल प्रदूषण को रोकने के उपाय बताइये।
16. निस्राव उपचार संयन्त्र के भागों के कार्य बताइये।
17. निम्न पर टिप्पणी लिखिये—
    (a) घरेलू अपशिष्ट जल (b) निस्यंदन (c) लीचिंग मेटल
    (d) नगरपालिका प्रदूषण (e) जल धाराओं का स्वशोधन
18. एक प्रवाह चित्र की सहायता से अपशिष्ट जल शोधन संयन्त्र में विभिन्न इकाईयाँ जिस क्रम में लगाई जाती हैं, प्रस्तुत कीजिए। प्रत्येक इकाई का उद्देश्य लिखिए। **(BTE 2012, 15)**
19. पीने के पानी की गुणवत्ता के भारतीय मानक पर टिप्पणी लिखिए। **(BTE 2013, 15, 17)**
20. शोधित अपशिष्ट जल के भारतीय मानक क्या है? **(BTE 2014)**
21. जल प्रदूषण के क्या कारण है? भविष्य मे जल प्रदूषण कम करने हेतु सम्भव उपाय बतायें। **(BTE 2015)**
22. अपशिष्ट जल (Waste water) के भौतिक, रासायनिक तथा जैवणिक (Biological) लक्षण लिखिए। **(BTE 2016)**
23. जल स्तर का नीचे होना पर टिप्पणी लिखिए। **(BTE 2016)**
24. घरेलू तथा औद्योगिक अपशिष्ट जल (Waste water) के प्रमुख लक्षण (Characteristics) स्पष्ट करें। **(BTE 2017)**

Scanned by CamScanner

अध्याय

4

ठोस अपशिष्ट प्रबन्ध
(Solid Waste Management)

परिचय (Introduction)

आज देश की लगभग 30% आबादी शहरों में विद्यमान है। अनुमान है कि शहरी आबादी में 50% वृद्धि गाँवों से पलायन के चलते हुई है। जहाँ शहरों की आबादी बढ़ी, वहीं इस आबादी को संभालने की जरूरी क्षमता का विकास नहीं हुआ। बढ़ती आबादी ने बुनियादी ढाँचे तथा सुविधाओं पर खासा दबाव डाला। हालात ऐसे हैं कि शहर की बहुत बड़ी आबादी को जन-सुविधाएँ श्रेयस्कर नहीं हैं। नगरपालिकाएं धन, कर्मचारियों, टेक्नोलॉजी व कार्यक्षमता के अभाव के चलते पर्याप्त सुविधाएं उपलब्ध नहीं करा पातीं। शहरों में मकानों की संख्या अधिक है जिनमें छोटे-बड़े, ऊंचे-नीचे, कच्चे-पक्के मकानों में आबादी वासित है। शहर की लगभग 25% आबादी झुग्गी बस्तियों में रहती है। शहरी मामलों के राष्ट्रीय संस्थान के अनुमान के मुताबिक कुल शहरी आबादी के 80% को पानी सुविधा प्राप्त है जबकि स्वच्छता सेवा मात्रा 4% है। एक अनुमान के मुताबिक शहरी कचरे में से करीब 30% कचरा असंग्रहित ही पड़ा रहता है। इस तरह का कचरा जिसे वर्तमान में ठोस व्यर्थ कहते हैं मनुष्यों एवं जानवरों के क्रियाकलापों से उत्पन्न व्यर्थ एवं अनावश्यक ठोस पदार्थ जो बेकार समझकर फेंक दिये जाते है, ठोस अपशिष्ट कहलाते हैं। शहरों एवं गाँवों में घरों से कूड़ा-करकट इकट्ठा करके बाहर कूड़ा पात्रों में फेंक दिया जाता है। गलियों आदि में झाड़ू लगाने से भी काफी ठोस अपशिष्ट प्राप्त होता है। उद्योगों से भी कई प्रकार का ठोस व्यर्थ पदार्थ निकलता है। इन सबका उचित समापन न करने पर ये वातावरण को दूषित करते हैं और भयंकर प्रदूषण उत्पन्न कर देते हैं। अतः इसके सम्बन्ध में पूरी जानकारी होना जरूरी हो गया है।

ठोस अपशिष्ट के प्रकार (Types of Solid Waste)

ठोस अपशिष्ट तीन प्रकार के होते हैं—

(1) नगरपालिका अपशिष्ट (Municipal Waste)

(2) औद्योगिक अपशिष्ट (Industrial Waste)

(3) भयावह अपशिष्ट (Hazardous Waste)

(4) जैव चिकित्सीय अपशिष्ट (Biomedical Waste)

(1) नगरपालिका अपशिष्ट (Municipal Waste)

इस प्रकार के अपशिष्ट में, कूड़ा-करकट, राख, नये-नये भवनों के निर्माण एवं पुराने भवनों के क्षय से प्राप्त अपशिष्ट, उपचार संयन्त्रों से प्राप्त अपशिष्ट एवं विशेष अपशिष्ट सम्मिलित हैं।

(i) भोज्य पदार्थ अपशिष्ट (Food Waste)—खाद्य व्यर्थ ऐसा व्यर्थ है जो कि फलों, तरकारियों, खाना पकाने एवं खाने में हुए व्यर्थ के रूप में होता है। ऐसा व्यर्थ शीघ्रता से गर्म मौसम में अपघटित हो जाता है और दुर्गन्ध पैदा करता है। इसके ऊपर मक्खी, मच्छर, पिस्सू व चूहे आदि पनपते हैं।

(ii) राख (Ashes)—लकड़ी, कोयले, कोक एवं अन्य ज्वलनशील पदार्थों को जलाने से जो पाउडर या क्लिंकर आदि के रूप में प्राप्त होती है, उसे राख कहते हैं।

(iii) सूखा कचरा (Rubbish)—भोज्य पदार्थों के अपशिष्ट को छोड़कर सभी प्रकार के ज्वलनशील एवं अज्वलनशील ठोस अपशिष्ट ही सूखा कचरा कहलाता है। ज्वलनशील व्यर्थ जैसे—कागज, कार्ड बोर्ड, कपड़ा, प्लास्टिक, रबर, चमड़ा, फर्नीचर आदि है। अज्वलनशील पदार्थ जैसे—क्रॉकरी, काँच, टिन, ऐलुमिनियम, कनस्तर आदि हैं।

(iv) निर्माण एवं ढहा अपशिष्ट (Construction and Demolition Waste)—मकान एवं संरचना आदि के बनाने में ईंट, पत्थर, रोड़ी सीमेन्ट, विद्युत अवयव आदि व्यर्थ के रूप में प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार संरचना के तोड़ने आदि से भी प्लास्तर पाइपों की टूट-फूट आदि के रूप में ठोस पदार्थ व्यर्थ प्राप्त होता है।

(v) उपचार संयन्त्र अपशिष्ट (Treatment Plant Waste)—विभिन्न सीवेज उपचार संयन्त्रों से प्राप्त ठोस एवं अर्द्ध ठोस अपशिष्ट भी नगरपालिका अपशिष्ट के अन्तर्गत आता है।

(vi) विशेष अपशिष्ट (Special Waste)—इसके अतिरिक्त गलियों में झाड़ू लगाना, कैच बेसिन का अपशिष्ट, मृत जानवर, वाहनों के टूटे हुए पुर्जे आदि सब Municipal Wastes के अन्तर्गत आते हैं।

(2) औद्योगिक अपशिष्ट (Industrial Waste)

उद्योगों से Solid Waste कच्चे पदार्थों से, उत्पादों से, मशीनों के टूटे-फूटे भागों, संरचनाओं के निर्माण, मरम्मत एवं Demolition आदि से इकट्ठा होता है। औद्योगिक ठोस व्यर्थ की प्रकृति, उद्योगो की किस्म, उनके उत्पाद, मात्रा व स्थिति आदि के आधार पर होती है। औद्योगिक व्यर्थ स्वतः ज्वलनशील विस्फोटक, विषैला (Toxic) या रेडियोधर्मी हो सकता है। रसायन उद्योगों से कार्बनिक और अकार्बनिक दोनों प्रकार का अपशिष्ट प्राप्त होता है।

(3) भयावह अपशिष्ट (Hazardous Waste)

भयावह अपशिष्ट वह होते हैं जो तुरन्त अपना प्रभाव डालते हैं या दीर्घ काल तक इनका असर बना रहता है। इसमें प्रमुख रूप से चार प्रकार के अपशिष्ट इस श्रेणी में आते हैं।

1. स्वतः ज्वलनशील
2. अपक्षयकारी पदार्थ
3. अति सक्रिय पदार्थ
4. जहरीले पदार्थ।

भयावह अपशिष्टों में रसायन, रेडियोधर्मी पदार्थ, जैविक अपशिष्ट, विस्फोटक एवं अत्यधिक-ज्वलनशील पदार्थ ही सम्मिलित समझे जाते थे। जैविक अपशिष्ट पदार्थों के मुख्य स्रोत अस्पताल एवं जैविक अन्वेषण केन्द्र हैं।

प्रमुख भारतीय नगरों में ठोस अपशिष्ट की मात्रा

क्रम संख्या	नगर	ठोस अपशिष्ट (टन प्रतिदिन)
1.	दिल्ली	7480
2.	लखनऊ	600
3.	मुम्बई	3200
4.	अहमदाबाद	1200
5.	चेन्नई	1819
6.	कानपुर	2142
7.	पुणे	1000
8.	बंगलुरू	1800

(4) जैव चिकित्सीय अपशिष्ट (Biomedical Waste)

कोई भी ठोस अथवा द्रव अपशिष्ट (बर्तन सहित), जोकि मनुष्यों एवं जानवरों के परीक्षण (diagnosis), उपचार (treatment) अथवा जैविक खोज के कार्यों से उत्पन्न होता है, जैव चिकित्सीय अपशिष्ट कहलाते है।

Scanned by CamScanner

जैव चिकित्सीय अपशिष्ट की मात्रा का आकलन निम्न उदाहरण से किया जा सकता है। कानपुर के तीन अस्पतालों के अपशिष्ट निम्नवत् हैं—

क्र० सं०	अस्पताल	बिस्तरों की संख्या	मात्रा
1.	लाला लाजपतराय अस्पताल	1055	216 ग्राम/बिस्तर/दिन
2.	रीजेन्सी मेडिकल डाइग्नोस्टिक सेन्टर	61	651 ग्राम/बिस्तर/दिन
3.	मरियमपुर अस्पताल	210	110 ग्राम/बिस्तर/दिन

यू० पी० में सभी अस्पतालो मे कुल 63,000 बिस्तर है जिनसे लगभग 42,000 किग्रा जैव चिकित्सीय अपशिष्ट उत्पन्न होता है। इस अपशिष्ट से कई प्रकार की बीमारियाँ फैलने का खतरा बना रहता है। ऐसे कचरे को इकट्ठा करते समय ही इसे अलग-अलग पात्रों में छाँटकर एकत्र करना चाहिये जिससे इनका समापन अलग-अलग तरीके से किया जा सके। सुइयों को तोड़कर ही फेंकना चाहिये। इसके उपचार की निम्न विधियाँ है—

1. जलाना (Incineration)
2. कीटनाशन (Sterilization)
3. रसायनों के प्रयोग से (By Chemicals)

आजकल इस तरह के कचरे को अधिक गहराई में खोदकर दबा देने (burial) तथा जलाने के (incineration) द्वारा इसका समापन (disposal) किया जा रहा है।

स्रोत (Sources)

अलग-अलग प्रकार के ठोस अपशिष्ट पदार्थों के स्रोतों का वर्णन निम्न प्रकार है—

1. नगरपालिका अपशिष्ट के स्रोत (Sources of Municipal Waste)

नगरपालिका अपशिष्ट के स्रोत निम्न हैं—

(i) खुले क्षेत्र का अपशिष्ट,

(ii) व्यापारिक अपशिष्ट,

(iii) घरेलू अपशिष्ट,

(iv) उपचार संयन्त्र का अपशिष्ट।

(i) खुले क्षेत्र का अपशिष्ट—गलियों, सड़कों, खेल के मैदानों, समुद्री किनारों, मुख्य सड़क मार्गों, पार्कों एवं मनोरंजन स्थलों से प्राप्त अपशिष्ट इस श्रेणी मे आता है।

(ii) व्यापारिक अपशिष्ट—व्यापार सम्बन्धी अपशिष्ट स्थलों जैसे बाजार, दुकानों, भण्डारगृहों, कार्यालयों, होटलों, अस्पतालों, लघु उद्योगों, कुटीर उद्योगों आदि से निकलने वाला कूड़ा, कचरा व्यापारिक अपशिष्ट कहलाता है।

(iii) घरेलू अपशिष्ट—घरेलू अपशिष्ट घरों में खाना पकाने में, घर की सफाई एवं अन्य प्रक्रियाओं में खाद्य, व्यर्थ कूड़ा-करकट, राख, कागज, टिन के डब्बे आदि कूड़ा-करकट घरेलू अपशिष्ट में आता है।

(iv) उपचार संयन्त्र का अपशिष्ट—अलग-अलग तरह के उद्योगों से निकले द्रव अपशिष्ट के उपचार हेतु लगाये गये संयन्त्रों से प्राप्त स्लज (ठोस पदार्थ) नगरपालिका अपशिष्ट में ही मिला लिया जाता है।

2. औद्योगिक अपशिष्ट के स्रोत (Sources of Industrial Waste)

उद्योगों की संख्या असीमित है। इनमें कुछ बड़े उद्योग हैं और कुछ छोटे-छोटे उद्योग। प्राय: छोटे उद्योग अपने अपशिष्ट का उपचार नहीं करते और इसे नगरपालिका अपशिष्ट में ही मिला देते हैं। कई बार नगरपालिका क्षेत्रों में खतरनाक प्रकार का

व्यर्थ सीमित मात्रा मे सभी औद्योगिक क्रियाओं के बाद पैदा होता है। जिन विभिन्न औद्योगिक एवं व्यापारिक स्रोतों से यह मिलता है इसका प्रकार भी इसी तरह का होता है। इस प्रकार का व्यर्थ वातावरण मे जब अधिक समय तक रहता है, तब यह काफी क्रियाशील हो जाता है एवं आस-पास के सम्पर्क क्षेत्रों को भी दुर्गन्धयुक्त बनाता है। इसके साथ ही ऐसे वातावरण मे मक्खी, मच्छर आदि कीटाणु जल्दी पैदा होते है। ये एक स्थान से उड़कर दूसरे स्थान पर बैठकर मनुष्य एवं जानवरों को रोगग्रस्त कर देते हैं। इस प्रकार का व्यर्थ अधिकतर कसाईघरो, बूचड़घरों व रसायनिक उद्योगों से प्राप्त होता है। अत: इस व्यर्थ का जल्दी ही निपटारा करना अनिवार्य होता है।

3. भयावह अपशिष्ट के स्रोत (Sources of Hazardous Waste)

भयावह अपशिष्ट अत्यन्त अल्प मात्रा में पाये जाते हैं। ऐसे कई उद्योगों से प्राप्त ठोस अपशिष्ट में कई प्रकार के भयावह अपशिष्ट पाये गये है। लेकिन इसमें अभी तक पर्याप्त विवरण उपलब्ध नहीं है कि किस उद्योग से कौन-सा भयावह अपशिष्ट कितनी मात्रा मे निकलता है। प्राय: ये अपशिष्ट द्रव निस्राव के साथ नदियो या नालों में बहा दिये जाते हैं। कुछ ठोस अपशिष्ट द्रव में भी मिले रहते है। परन्तु इनकी समुचित जानकारी अति आवश्यक है। इसी तरह कुछ जहरीले एवं रेडियोधर्मी प्रदूषक मृदा में रिसकर मिल जाते है, पता लगने पर उस स्थान की मिट्टी को खोदकर सुरक्षित स्थल पर फेंक देनी चाहिये क्योंकि इसके सम्पर्क में आने पर इसके परिणाम अत्यन्त भयानक होते है।

ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन (Solid Waste Management)

ठोस अपशिष्ट के उचित समापन के लिए विभिन्न प्रक्रियायें निम्न प्रकार अपनायी जाती हैं—

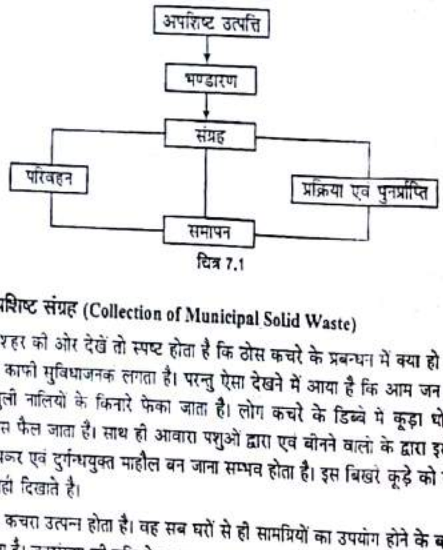

चित्र 7.1

नगरपालिका ठोस अपशिष्ट संग्रह (Collection of Municipal Solid Waste)

देश के किसी भी शहर की ओर देखें तो स्पष्ट होता है कि ठोस कचरे के प्रबन्धन में क्या हो रहा है? कचरे को नियत (Container) में डालना काफी सुविधाजनक लगता है। परन्तु ऐसा देखने में आया है कि आम जन द्वारा सारी गंदगी का ढेर फुटपाथों, गलियो या खुली नालियो के किनारे फेंका जाता है। लोग कचरे के डिब्बे मे कूड़ा थोड़ी दूर से फेंकते हैं जो Container के आस-पास फैल जाता है। साथ ही आवारा पशुओं द्वारा एवं बीनने वालों के द्वारा इसे चारों तरफ फैला दिया जाता है। इससे अस्वास्थ्यकर एवं दुर्गन्धयुक्त माहौल बन जाना सम्भव होता है। इस बिखरे कूड़े को नगरपालिका कर्मचारी भी पूर्णत: उठाने मे लापरवाही दिखाते है।

शहर में जितना भी कचरा उत्पन्न होता है। वह सब घरों से ही सामग्रियों का उपयोग होने के बाद व्यर्थ के रूप में बाहर गलियों में फेंक दिया जाता है। जनसंख्या की वृद्धि के साथ-साथ मनुष्य द्वारा उपयोगित सामग्री में भी वृद्धि हुई है जिसके कारण गलियों में यह कचरा (Garbage) प्रतिदिन मात्रा मे बढ़ जाता है। प्रत्येक घर का कचरा, घर के सामने एकत्रित किया जाता है। यहाँ से कचरा Wheel Barrow (Hand) की सहायता से गलियों के बाहर लाया जाता है तथा एक बड़े एवं बन्द धातु के संग्राहक (Container) में बन्द कर दिया जाता है और फिर नगरपालिका के वाहनों द्वारा इसे समापन स्थल तक पहुँचा दिया जाता है।

Scanned by CamScanner

विकसित देशों में घरेलू कूड़ा पात्रों के बड़े पात्र सड़कों के किनारे कर्ब (Curb) पर कुछ अन्तराल से रख देते हैं। नगरपालिका के वाहन आकर स्वचालित युक्ति द्वारा इन पात्रों का कूड़ा अपने वाहन में उलट कर खाली पात्रों को पुनः यथा स्थान पर रख देते हैं। इन पात्रों में ही आस-पास के घरों का कूड़ा डाला जाता है।

औद्योगिक अपशिष्ट संग्रह (Industrial Waste Collection)

बड़े व्यावसायिक एवं औद्योगिक केन्द्रों का कूड़ा चल या अचल पात्र में एकत्रित किया जाता है। कुछ तरह के उद्योगों का कूड़ा सीधे ही बड़े-बड़े (Compactors) संघनकों में डाल दिया जाता है जो कूड़े को संपीड़ित करके गोलों (balls) में बदल देते हैं। ये संघनित गोले फिर से बड़े पात्रों में एकत्र कर लिये जाते है जहां से इन्हें समापन स्थल पर भेज दिया जाता है।

संग्रह पद्धतियाँ (Collection Systems)

1. स्थिर पात्र पद्धति
2. चल पात्र पद्धति

1. स्थिर पात्र पद्धति (Stationary Container System)—इस पद्धति के अनुसार कूड़ा पात्र एक स्थान पर स्थिर रहता है। इसके भर जाने पर जितना भी कचरा एकत्रित हो उसे ट्रकों में, ट्रैक्टरों एवं बैलगाड़ियों आदि में लादकर शीघ्रता से शहर के बाहर ले जाया जाता है।

2. चल पात्र पद्धति (Hauled Container System)—इस पद्धति में कूड़ा पात्र को भर के जाने पर संग्रह वाहन द्वारा समापन स्थल पर ले जाकर खाली कर देते हैं और दुबारा वापस लाकर यथा स्थान कूड़ा संग्रह के लिये रख देते हैं।

समापन उपकरण (Disposal Equipment)

संग्रह स्थल पर कूड़ा-करकट समापन स्थान तक पहुँचाने के लिये कई प्रकार के वाहन प्रयोग किये जाते हैं जो कि निम्न प्रकार के होते है—

(1) बैलगाड़ी (Bullock Cart)—ऐसे कुछ नगर या कस्बे है जिनमें छोटी बन्द ढक्कनदार एक बैल या भैसें से चलने वाली गाड़ी प्रयोग की जाती है, इसमें लगभग 2 टन कूड़ा-करकट आ जाता है।

(2) ऑटो रिक्शा (Auto Rickshaw)—जिन कस्बों या नगरो में गलियाँ बहुत संकरी होती हैं वहाँ पर आटो रिक्शा का प्रयोग किया जाता है। ये 3 या 4 पहियों के ढक्कनदार पात्र (Container) होते हैं। इनमें लगभग 0.50 से 0.75 टन तक वजन आता है। इन ऑटो रिक्शा को मनुष्यों द्वारा चलाया जाता है।

(3) ट्रेलर (Trailer)—यह एक ऐसा वाहन है जो पीछे को झुका रहता है। जहाँ भारी वाहन नहीं जा सकते वहाँ इनका प्रयोग किया जाता है। ट्रेलर की क्षमता 2 से 3 टन तक की होती है। इनको मजदूरों के जरिये हाथों से भरा जाता है और समापन वाले स्थान पर ले जाकर स्वचालित हाइड्रोलिक जैक (Hydraulic Jack) द्वारा भरे हुए पात्र को पीछे की ओर झुका देते हैं। ऐसा करने से कूड़ा गुरुत्व बल के कारण स्वतः ही नीचे गिर जाता है।

(4) ट्रक (Trucks)—इस तरह के ट्रक भी प्रायः झुकाव प्रकार के बनाये जाते हैं। इनकी क्षमता 5 से 10 टन तक की होती है। विकसित देशों में विशेष प्रकार के वाहन प्रयोग किये जाते हैं। इस तरह के वाहन ज्यादा शक्तिशाली होते हैं। वहाँ पर खुले कूड़ा पात्रों के स्थान पर बन्द पात्रों का प्रयोग किया जाता है। ये वाहन द्वारा सीधे ही उठाकर समापन स्थल तक पहुँचा दिये जाते है। बन्द कूड़ा पात्रों के प्रयोग से रास्ते में गन्दगी एवं दुर्गन्ध नहीं फैलती है।

समापन विधियाँ (Disposal Methods)

ठोस व्यर्थ एवं कचरे में कार्बनिक पदार्थ होते है, जिनका थोड़े समय में अपघटन होने लगता है, जिसके कारण दुर्गन्ध पैदा होती है। अतः ठोस व्यर्थ एवं कचरे को समापन स्थल तक यथा समय ले जाना चाहिये अन्यथा इस व्यर्थ से उत्पन्न दुर्गन्ध जनस्वास्थ्य के साथ-साथ पर्यावरण को भी दूषित करती है। अतः इस ठोस व्यर्थ का बड़ी सावधानीपूर्वक से समापन करना चाहिये।

ठोस अपशिष्ट के समापन की निम्न विधियाँ है—

(1) जलाना (Incineration)
(2) पीसना (Grinding or Pulverizing)
(3) स्वच्छ भूमि भराव (Sanitary land fill or Controlled tipping)
(4) ढेर लगाना (Dumping)
(5) प्रंशोद्धार (Salvaging)
(6) कम्पोस्ट बनाना (Composting)
(7) न्यूनीकरण (Reduction)
(8) समुद्र में समापन (Disposal into sea)

(1) जलाना (Incineration)

ठोस कार्य अपशिष्ट को जलाकर भी समाप्त किया जाता है। इस विधि में ठोस अपशिष्ट भण्मक (Incinerator) में जलाया जाता है। इसमे एक भट्टी होती है तथा इसके बीच में एक जाली तथा ऊपरी सिरे पर एक चिमनी बनी होती है। कूड़ा भरने के लिये एक भरणा द्वार (Feed door) तथा राख निकालने के लिये एक निकास द्वार (Ash door) बनाया जाता है।

इस विधि को ज्यादा आबादी वाले शहरों मे ज्यादा अपनाया जाता है क्योंकि इन शहरों मे ठोस अपशिष्ट के समापन के लिये उपयुक्त स्थल की अत्यन्त कमी रहती है और कूड़ा लाने ले जाने में भी गन्दगी एवं रोगाणुओं के फैलने का डर रहता है। ठोस अपशिष्ट को जलाने से कीड़े मकोड़े एवं रोगाणु पूर्ण रूप से नष्ट हो जाते हैं तथा इसकी राख का आयतन भी बहुत कम होता है जिससे इसके समापन पर अधिक व्यय नहीं आता। जलाने की क्रिया में अत्यधिक ऊष्मा उत्पन्न होती है। इस ऊष्मा का प्रयोग बॉयलर गर्म करने आदि में किया जा सकता है। जलाने की प्रक्रिया से वायु में CO_2, H_2O, N_2 व SO_2 आदि अन्य अवयवों की वृद्धि होती है तथा इससे आस-पास के वातावरण के तापमान मे भी वृद्धि हो जाती है परन्तु इसकी मात्रा इतनी अधिक नहीं होती कि इसके परिणाम भयंकर हों। इसमें अधजले कार्बन की मात्रा कम पायी जाती है क्योंकि इन भण्मक में तापमान 1400°F से 1800°F तक हो जाता है। इस विधि के प्रयोग से ठोस अपशिष्ट की उपजाऊ शक्ति (खाद के रूप में) नष्ट हो जाती है। भण्मकों की पहली लागत काफी अधिक होती है तथा इसकी परिचालन लागत भी अधिक होती है।

यदि वायु प्रदूषण कम करने के लिये चिमनी के मुख पर आर्द्र स्क्रबर (Wet Scruber) या स्थिर वैद्युत अवक्षेपक (Electrostatic Precipitator) लगा दिया जाये तो प्रदूषण काफी हद तक कम होता है। भण्मक ऊष्मा का प्रयोग अन्य किसी कार्य में करने पर इसकी लागत भी प्राप्त की जा सकती है।

(2) पीसना (Grinding or Pulverizing)

इस विधि में सूखा कचरा महीन पीस लिया जाता है। जैसे थर्मोसेट प्लास्टिक के टुकड़े अथवा टूटे-फूटे सामान भी जैसे बिजली के स्विच, रेडियो, टी०वी०, ट्रान्जिस्टर आदि की कैबिनैट, बटन Buckels (बकसुए) तथा Hair Clips आदि को ठोस व्यर्थ के साथ ही रहने दिया जाता है ताकि इनको ठोस व्यर्थ के साथ पीसकर इनका अन्तिम निपटारा किया जा सके। इस महीन पाउडर में कोई रासायनिक क्रिया नहीं होती, मूल रूप मे सूखा कचरा ही महीन पाउडर बन जाता है। इस पाउडर का प्रयोग खाद के रूप में किया जा सकता है। परन्तु इसमें खाद निम्न श्रेणी की प्राप्त होती है। इसकी माँग न होने पर यह विधि मितव्ययी नहीं होती।

(3) स्वच्छ भूमि भराव (Sanitary Land Fill or Controlled Tipping)

यह विधि उन स्थानों पर अपनाई जाती है जहाँ भूमि सुधार हेतु पर्याप्त स्थल उपलब्ध हों। कूड़ा-करकट गहरे गड्ढों वाले स्थान पर 1 से 2 मी० की मोटाई में अच्छी तरह फैला दिया जाता है। इसके लिए सबसे पहले नीचे मोटा कूड़ा और ऊपर महीन कूड़ा बिछाना चाहिये। इसके बाद इसे 15 सेमी मोटी मिट्टी की पर्त से ढक दिया जाता है। फिर मिट्टी की पर्त की कुटाई कर देनी चाहिये जिससे चूहों एवं दूसरे जानवरों द्वारा उसे खोदा न जा सके। मिटी की पर्त के [illegible]

Scanned by CamScanner

अपघटन होता है और यह अपघटन लगभग 1 वर्ष में पूरा हो जाता है। इस कार्य को पूरा होने के बाद ऊपर की मिट्टी लगभग 30 सेमी तक धंस जाती है। इसके बाद स्थल पुनर्विकास के लिये उपलब्ध हो जाता है।

ऐसी विधि में सतत् निरीक्षण की आवश्यकता होती है क्योंकि चूहों द्वारा खोद देने से तथा धूप में दरारें पड़ जाने से गैसों एवं वाष्पशील पदार्थों का रिसाव होने लगता है जो कि मनुष्यों के लिए हानिकारक होता है।

(4) ढेर लगाना (Dumping)

भारत में यह विधि बहुत प्रचलित है, क्योंकि यह विधि सबसे आसान और कम खर्चीली है। कस्बों और नगरों के आस-पास जहाँ कहीं भी नीची भूमि या बड़ा सा गड्ढा दिखाई देता है। वहीं पर कूड़ा-करकट ले जाकर ढेर लग देते हैं जिससे निचली भूमि में वर्षा जल के इकट्ठे होने पर यह सड़ व गलकर ठोस हो जाता है परन्तु इसके खुला रहने के कारण अस्वास्थ्यकर परिस्थितियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। मक्खी-मच्छर एवं कीड़े-मकोड़े फैलते हैं जिससे बीमारियाँ फैल जाती हैं, जैसे हैजा, मलेरिया आदि। कागज एवं प्लास्टिक की थैलियाँ या हल्की चीजें हवा के साथ उड़कर इधर-उधर बिखर जाती है।

(5) भ्रंशोद्धार (Salvaging)

ठोस अपशिष्ट में अनेक पदार्थ होते हैं जैसे धातु के टुकड़े, काँच के टुकड़े, प्लास्टिक के टुकड़े, भोजन कार्य, कृषि कार्य आदि। एक स्थान से प्राप्त ठोस अपशिष्ट का दूसरी जगह लाभदायक उपयोग किया जा सकता है। ताप विद्युत गृह से निकली धूल फ्लाई ऐश (Fly ash) का उपयोग कंक्रीट, ईंटें आदि बनाने में किया जा सकता है। धातु के टुकड़े, प्लास्टिक के टुकड़े आदि को अलग करके इन्हें गलाकार इनसे नयी वस्तुएँ बनायी जा सकती हैं। कृषि व्यर्थ जैसे गन्ने के छिलके से कागज के उत्पाद बनाये जा सकते हैं। अन्यथा इनको जलाकर ऊष्मा प्राप्त की जा सकती है। कार्बनिक पदार्थों को सड़ाकर इससे खाद बनायी जा सकती है। इसी तरह जहाँ तक भी सम्भव हो ठोस अपशिष्ट से लाभदायक वस्तुओं को अलग कर लेना चाहिये। इससे ठोस अपशिष्ट की मात्रा तो कम होती ही है। साथ ही इससे मूल्य भी प्राप्त किया जा सकता है।

कूड़ा-करकट के ढेरों से कई गरीब बच्चों को ऐसे पदार्थ एकत्र करते हुए देखा जा सकता है। परन्तु यह कार्य उनके स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है। इसलिये यह विधि औचित्यपूर्ण नहीं है।

(6) कम्पोस्ट बनाना (Composting)

कूड़ा-करकट में मौजूद कार्बनिक पदार्थों का जैव रासायनिक क्रिया द्वारा अपघटन करने पर ह्यूमस (Humus) बनता है, जिसे कम्पोस्ट खाद कहते हैं। इसमें उर्वरक शक्ति बहुत अधिक होती है। ठोस अपशिष्ट के समापन की यह एक अच्छी विधि होती है। इस विधि से व्यर्थ गैस पदार्थ अत्यन्त उपयोगी उत्पाद में परिवर्तित हो जाते हैं। इस तरह की खाद में लगभग 0.3% नाइट्रोजन, 0.5% से 0.8% फॉस्फोरस एवं 0.6% से 0.9% पोटेशियम पाया जाता है जो कि पेड़-पौधों के लिये आवश्यक तत्व है। कम्पोस्ट खाद बनाने की कई विधियाँ हमारे भारत में प्रचलित हैं। उनमें से प्रमुख विधियाँ निम्न प्रकार हैं—

(1) बंगलौर विधि या अवायुजीवी विधि

(2) इन्दौर विधि या अवायुजीवी विधि

(3) कम्पोस्ट संयन्त्र

(1) बंगलौर विधि या अवायुजीवी विधि (Bangalore Method or Anerobic Method)—बंगलौर विधि कूड़ा-करकट से प्लास्टिक, चमड़ा एवं रबर आदि को हाथ से अलग कर दिया जाता है। फिर इसे गहरे गड्ढों या खाइयों में भर दिया जाता है। इसके अन्दर पर्याप्त कार्बनिक पदार्थ एवं नमी होनी चाहिये। इसके लिए इसमें सूखा कचरा एवं मृदा अपशिष्ट तहों में अथवा मिलाकर भरा जाना चाहिये। ठोस व्यर्थ की सतह को भूमि तल से लगभग 30 सेमी ऊपर तक भर कर मिट्टी से ढक देना चाहिये। इस तरह से गड्ढों में अवायुजीवी परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है। इस तरह से अवायुजीवी जीवाणु 4 से 6 महीने में इसे जैविक क्रिया द्वारा कम्पोस्ट खाद में बदल देते हैं। फिर इसे खोदकर गड्ढे से निकाल लिया जाता है और खाद के रूप में प्रयोग कर लिया जाता है। यह एक आसान विधि है। इसमें विशेष तकनीकी निरीक्षण या मूल्यों की आवश्यकता नहीं होती है।

इस तरह की विधि में ठोस अपशिष्ट में पाये जाने वाले मक्खियों एवं मच्छरों के लारवा (Larvae) एवं रोगाणुओं का पूरी तरह से अन्त हो जाता है। गड्ढे के मध्य में जैव क्रियाओं से उत्पन्न ऊष्मा के कारण ताप इतना बढ़ जाता है कि सम्पूर्ण लारवा एवं रोगाणु नष्ट हो जाते हैं लेकिन ऊपरी भाग में ऐसा नहीं होता और कुछ मात्रा मे रोगाणु शेष रह जाते हैं जिससे मीथेन गैस बनती है।

(2) इन्दौर विधि या अवायुजीवी विधि (Indore Method or Aerobic Method)—इन्दौर विधि बंगलौर विधि की ही तरह से होती है। अन्तर केवल इतना है कि इस विधि में गड्ढे को थोड़ा खाली रखा जाता है और इसे मिट्टी से ढका नहीं जाता। एक सप्ताह बाद गड्ढों का कूड़ा उलट-पुलट कर दिया जाता है जिससे सारा अपशिष्ट भली प्रकार से वायु के सम्पर्क में आ सके; यानि सम्पूर्ण मिश्रण को अच्छी प्रकार से मिलाया जाता है जिससे कूड़ा-करकट में मौजूद लारवा एवं रोगाणु पूरी तरह नष्ट हो जाते है। वायुजीवी विघटन मे CO_2, पानी एवं NH_3 गैस बनती है। इसकी निकास की उचित व्यवस्था करके इसे भी काम में लाया जा सकता है। इस विधि में 15 से 20 दिन में ही कम्पोस्ट खाद तैयार हो जाती है।

(3) कम्पोस्ट संयन्त्र (Compost Plant)—इस विधि में सूखा कचरा एक बेल्ट कन्वेयर (Belt Conveyor) से होकर गुजरता है। एक शक्तिशाली चुम्बक द्वारा इसमें से लौह पदार्थ को अलग कर दिया जाता है। इसके बाद इसमें काँच, रबड़, प्लास्टिक आदि को हाथ या यांत्रिक छन्नकों द्वारा अलग कर देते हैं। फिर इसके बाद शेष कचरे को हैमर मिल या चूर्णकारण (Pulverizer) में महीन पीस लिया जाता है। फिर इसे बैलास्टिक पृथक्कारी (Ballastic Separator) में अति महीन कर लिया जाता है। अब इसमें सूखा अथवा गीला स्लूज मिला दिया जाता है। इसके उपरान्त वांछित ताप एवं नमी पर इसमें झाग (Fermentation) उत्पन्न कराये जाते है। फिर सात दिन बाद इसमें वायुजीवी परिस्थिति उत्पन्न करा दी जाती है। 15 से 20 दिन में कम्पोस्ट खाद बनकर तैयार हो जाती है और अन्त में इसे छानकर बोरों में भरकर बाजार में बिक्री के लिये भेज दिया जाता है।

इस विधि में प्रारम्भिक लागत अधिक होती है। लेकिन यह कम स्थान घेरता है। इसकी खाद भी उच्च श्रेणी की होती है। इस खाद में कैल्शियम, कोबाल्ट, कॉपर, लोहा, बोरोन, मैग्नीशियम, मैग्नीज एवं मोलीब्डिनम आदि तत्व पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। इसमें किसी भी प्रकार के रोगाणु नहीं होते हैं।

हमारे भारत मे चार प्रकार के संयंत्र उपयोग में लाये जा रहे हैं—

(1) डेनो संयन्त्र (Dano Plant)
(2) टीलोमेक संयन्त्र (Tellomache Plant)
(3) बुहलर संयन्त्र (Buhler Plant)
(4) न्यूस्वायल सयन्त्र (Nusoil Plant)

(7) न्यूनीकरण (Reduction)

इस विधि मे ठोस अपशिष्ट को उच्च दाब वाले क्रशरों में निचोड़ा जाता है जिससे इसमें से ग्रीस निकलती है और बाकी बचा ठोस पदार्थ खाद के रूप मे उपयोग में लाया जाता है। इस ग्रीस का उपयोग ग्लिसरीन एवं मोमबत्ती बनाने में किया जाता है।

(8) समुद्र में समापन (Disposal into Sea)

इस विधि को समुद्र के किनारे बसे शहरों में ही अपनाया जाता रहा है। कूड़ा-करकट समुद्र के किनारे से दूर ले जाकर डाल दिया जाता है। इसके निस्तारण के लिए समुद्र का प्रयोग एक प्राकृतिक सिंक के रूप में निरन्तर हो रहा है जिससे समुद्री इकोसिस्टम विशेष रूप से महाद्वीपीय चबूतरा एवं नदियों के मुहाने प्रभावित हो रहे हैं। अत: ठोस व्यर्थ के निपटारे हेतु अन्य वैज्ञानिक विकल्प खोजने हेतु प्रयासरत रहना होगा।

पुनर्प्राप्ति की विधियाँ (Methods of Recovery)

ठोस अपशिष्ट से पुनर्प्राप्ति की तीन मुख्य विधियाँ है—

(1) पदार्थ पुनर्प्राप्ति

(2) रूपान्तरित उत्पाद पुनर्प्राप्ति

(3) ऊर्जा अथवा ऊष्मा पुनर्प्राप्ति

Scanned by CamScanner

(1) पदार्थ पुनर्प्राप्ति (Material Recovery)

ठोस अपशिष्ट में से ठोस पदार्थ जैसे प्लास्टिक के टुकड़े, कांच के टुकड़े, धातु के टुकड़े मशीनों या हाथों द्वारा अलग करके इन्हें गलाकर नयी वस्तुएं बनाना, पदार्थ पुनर्प्राप्ति कहलाता है। अनके उद्योगों जैसे प्लास्टिक उद्योग, कांच उद्योग आदि में अपशिष्ट से प्राप्त सामान का उपयोग कच्चे माल की तरह किया जाता है। ठोस अपशिष्ट के समापन में भी पदार्थ पुनर्प्राप्ति एक महत्वपूर्ण पद है क्योंकि अपशिष्ट से विभिन्न पदार्थ एकत्र करने के बाद इसके समापन की विधि का चयन करने में आसानी होती है। चित्र में किसी मिश्रित ठोस अपशिष्ट से पदार्थों की पुनर्प्राप्ति दिखायी गयी है।

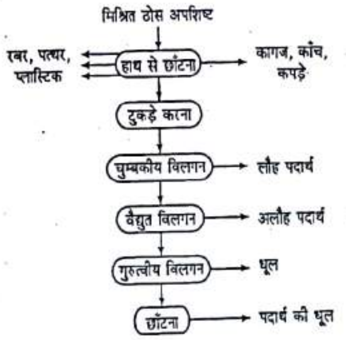

कार्बनिक पदार्थों की अधिकता का अपशिष्ट

चित्र 7.2 : ठोस व्यर्थ का विलगन

(2) रूपान्तरित उत्पाद पुनर्प्राप्ति (Recovery of Conversion Products)

यह एक जैविक प्रक्रिया (Biological Process) है। इसमें कार्बनिक पदार्थों के जैविक रूपान्तरण से अन्य उत्पाद जैसे—ज्वलनशील गैस, खाद आदि की प्राप्ति होती है।

(3) ऊर्जा अथवा ऊष्मा पुनर्प्राप्ति (Energy of Heat Recovery)

ठोस अपशिष्ट में कुछ पदार्थ ऐसे पाये जाते है जिनको जलाकर ऊष्मा प्राप्त की जा सकती है। इस ऊष्मा का उपयोग उद्योगों में वस्तुओं को गलाने, पानी गर्म करने आदि में किया जा सकता है।

ऊपर लिखी विधियों से किया जाने वाला कचरा निपटारे की व्यवस्था वास्तविक एवं व्यावहारिक रही है। लेकिन गलत तकनीकी का चुनाव, अपर्याप्त व अनिच्छुक नगरपालिका कर्मचारीगण तथा पूरी प्रणाली का नियोजन सही ढंग से न होने की वजह से शहरों में कूड़े-कचरे ठोस व्यर्थ से जनित समस्याएं उजागर होती हैं। सामाजिक, आर्थिक व इकोलाजिकल पहलुओं पर ध्यान न देने से इस ठोस व्यर्थ से अस्वास्थ्यकर परिस्थितियाँ पैदा होती है। अर्थ व्यवस्था के मद्देनजर भारत में Recycle की विपुल सम्भावनाएं है तथा इससे रोजगार की भी सम्भावनाओ से इंकार नहीं किया जा सकता है। जैविक पदार्थों को कम्पोस्ट में तब्दील किया जा रहा है। इस प्रकार कम्पोस्ट को बनाने के लिए मशीनी यन्त्रों का प्रयोग किये जाने से खाद बनाने की प्रक्रिया में तेजी आयी है तथा इसे रासायनिक खाद का एक अच्छा Substitute माना गया है। पूर्व में इसी कम्पोस्ट को प्राकृतिक कारणों से बनने पर अत्यधिक पौष्टिक एवं भोज्य पदार्थ इसी खाद से पैदा होते थे। जैविक कचरे के सड़ने से पैदा होने वाली गैस को ईंधन के रूप मे प्रयोग की व्यवस्था प्रचलित है। दरअसल एक टन कचरे से 85-115 मी०^3 बॉयोगैस प्राप्त होती है। यह ऊर्जा Recycle में प्रयोग की जा सकती है। एक अनुमान के अनुसार कृषि व बर्बाद कागज आधारित उद्योग में प्रति टन कागज उत्पादन में 1000 युनिंट बिजली खर्च होती है जबकि लकड़ी आधारित उद्योगों में मात्र 1600 यूनिट बिजली खर्च होती है।

भारतीय परिस्थितयों एवं अनुकूलता के मद्देनजर अभी इस क्षेत्र में और ज्यादा से ज्यादा सुधार एवं नीति निर्धारित किये जाने की आवश्यकता है। बढ़ती जनसंख्या एवं औद्योगीकरण पर अंकुश लगाना होगा तथा स्थिरीकृत विकास योजनाओं को बढ़ावा देकर एवं राज्यों में ठोस व्यर्थ की नयी तकनीकी हेतु अनुसंधानों को बढ़ावा देकर इस व्यर्थ व इससे उपजी समस्याओं से निपटा जा सकता है।

बायोमेडिकल कचरा एक और पर्यावरणीय संकट

हम जानते हैं कि हर शहर में कई निजी व सरकारी अस्पताल होते हैं, जिनसे प्रतिदिन सैकड़ों टन चिकित्सकीय कचरा निकलता है और यदि पूरे देश में इनकी संख्या की बात करें तो देश भर के अस्पतालों से निकलने वाला कचरा कई हजार टनों में होता है। इस भागम-भाग की जिंदगी मे बीमारियाँ बढ़ती जा रही हैं, बीमारों की संख्या बढ़ रही है, अस्पतालों की संख्या भी बढ़ रही है और उसी हिसाब से उन बीमार व्यक्तियों के इलाज में प्रयुक्त होने वाले सामानों की संख्या बढ़ रही है, जिन्हें इस्तेमाल करके कचरे में फेंक दिया जाता है, जो एक बायोमेडिकल कचरे का रूप ले लेता है।

ये बायोडिकल कचरा हमारे-आपके स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिये कितना खतरनाक है, इसका अंदाजा आप और हम नहीं लगा सकते है। इससे न केवल और बीमारियाँ फैलती है बल्कि जल, थल और वायु सभी दूषित होते है। ये कचरा भले ही एक अस्पताल के लिये मामूली कचरा हो लेकिन भारत सरकार व मेडिकल काउंसिल ऑफ इंडिया के अनुसार यह मौत का सामान है। ऐसे कचरे से इनफेक्सन, एचआईवी, महामारी, हेपेटाइटिस जैसी बीमारियां होने का भी डर बना रहता है।

क्या होता है बायोमेडिकल कचरा?

हो सकता है आपने कभी किसी अस्पताल के आस-पास से गुजरते हुए उसके आस-पास या फिर किसी सुनसान इलाके में पड़े कचरे को देखा हो जिसमें उपयोग की गई सूइयाँ, ग्लूकोज की बोतलें, एक्सपाइरी दवाएँ, दवाईयों के रैपर के साथ-साथ कई अन्य सड़ी गली वस्तुएं पड़ी हुई है। यही होता है, बायोमेडिकल कचरा या जैविक चिकित्सकीय कचरा। कैसी विडंबना है कि अस्पताल जहां हमें रोगों से मुक्ति प्रदान करता है, वहीं यह विभिन्न प्रकार के हानिकारक अपशिष्ट यानि कचरा भी छोड़ता है। लेकिन ये हमारी समझदारी पर निर्भर करता है कि हम इससे कैसे छुटकारा पाएं। ऐसा तो हो नहीं सकता कि अस्पातलों से कचरा न निकले, परन्तु इसके खतरे से बचने के लिये इसका उचित प्रबन्धन और निपटान आवश्यक है।

इस कचरे में कांच व प्लास्टिक ग्लूकोज की बोतले, इंजेक्शन और सिरिंज, दवाओं की खाली बोतलें व उपयोग किए गए आईवी सेट, दसताने और अन्य सामग्री होती हैं। इसके अलावा इनमें विभिन्न रिपोर्टें, रसीदें व अस्पताल की पर्चियां आदि भी शामिल होती हैं। अस्तापालों से निकलने वाले इस कचरे को विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्लूएचओ) के अनुसार निम्न वर्गों में बाटां गया है।

औषधीय पदार्थ : इसमें बची-खुची और पुरानी व खराब दवाएं आती है।

रोगयुक्त पदार्थ : इसमें रोगी का मल-मूत्र उल्टी, मानव अंग आदि आते हैं।

रेडियोधमी पदार्थ : इसमें विभिन्न रेडियोधर्मी पदार्थ जैसे कि रेडियम, एक्स-रे तथा कोबाल्ट आदि आते है।

रासायनिक पदार्थ : इसमें बैटरी व लैब में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न रासायनिक पदार्थ आते हैं।

उपरोक्त के अलावा कुछ सामान्य पदार्थ भी होते है जिनमें दवाइयों के रैपर, कागज, रिपोर्ट, एक्स-रे फिल्में और रसोई से निकलने वाला कूड़ा-कचरा आता है। यही नहीं, कुछ अन्य पदार्थ जैसे कि ग्लूकोज की बोतलें, सूइयां, दस्ताने आदि भी बायोमेडिकल कचरे में आते हैं।

बायोमेडिकल कचरा के स्रोत क्या-क्या हैं?

बायोमेडिकल बचरे के मुख्य स्रोत तो सरकारी और प्राइवेट अस्पताल, नर्सिंग होम, डिस्पेंसरी तथा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र होते है। इनके अलावा विभिन्न मेडिकल कॉलेज, रिसर्च सेंटर, पराचिकित्सक सेवाएं, ब्लड बैंक, मुर्दाघर, शव-परीक्षा

Scanned by CamScanner

केंद्र, पशु चिकित्सा कॉलेज, पशु रिसर्च सेंटर, स्वास्थ्य संबंधी उत्पादन केंद्र तथा विभिन्न बायोमेडिकल शैक्षिक संस्थान भी बड़ी मात्रा में बायोमेडिकल कचरा पैदा करते हैं।

उपरोक्त के अलावा सामान्य चिकित्सक, दंत चिकित्सा क्लीनिकों, पशु घरों, कसाईघरों, रक्तदान शिविरों, एक्यूपंक्चर विशेषज्ञों, मनोरोग क्लीनिकों, अंत्येष्टि सेवाओं, टीकाकरण केंद्रों तथा विकलांगता शैक्षिक संस्थानों से भी थोड़ा-बहुत बायोमेडिकल कचरा निकलता है। सबसे बड़ी मुश्किल यह है कि जब ये बायोमेडिकल कचरा कबाड़ियों के हाथ लगता है तो वह खतरनाक हो जाता है।

कबाड़ियों तक कैसे पहुँचता है बायोमेडिकल कचरा?

यह कचरा प्राइवेट व सरकारी दोनों ही तरह के अस्पतालों से निकलता है। कई बार इन अस्पतालों के कुछ स्टाफ सदस्य लालच में आकर इस जैविक कचरे को कबाड़ियों को बेच देते हैं। कई प्राइवेट अस्पताल तो इस कचरे के निपटारन या निस्तारण शुल्क से बचने के लिये इसे आस-पास के नालों एवं सुनसान जगहों पर डलवा देते है और वहीं से कचरा चुनने वाले इसे इकट्ठा करके कबाड़ियों को बेच देते हैं। इस कबाड़ में कुछ ऐसी भी सामग्री होती है जैसे कि सिरिंज, गोलियों की शीशियां, हाइपोडर्मिक सूइयां व प्लास्टिक ड्रिप आदि जोकि थोड़ा बहुत साफ-सफाई करके निजी मेडिकल क्लीनिकों को दोबारा बेचने लायक हो सकती है। इस तरह से कबाड़ चुनने वाले भी अपनी कमाई कर लेते है और इसके लिये वे वार्ड क्लीनर को भी कुछ हिस्सा देते हैं। इस तरह बिना निपटान के अस्पतालों के कचरे के बाहर फेंकने से यह एक री-पैकेजिंग उद्योग का एक बड़ा हिस्सा बन कर फल-फूल रहा है।

बायोमेडिकल निपटान के नियम क्या हैं?

बायोमेडिकल कचरे का सही ढंग से निपटान करने के लिये कानून तो बने हैं, लेकिन उनका पालन ठीक से नहीं होता है। इसके लिये केन्द्र सरकार ने पर्यावरण संरक्षण के लिये बायोमेडिकल वेस्ट (प्रबंधन व संचालन) नियम, 1998 बनाया है। बायोमेडिकल वेस्ट अधिनियम 1998 के अनुसार निजी व सरकारी अस्पतालो को इस तरह के चिकित्सीय जैविक कचरे को खुले में या सड़कों पर नहीं फेंकना चाहिए। ना ही इस कचरे को म्यूनीसिपल कचरे में मिलाना चाहिए। साथ ही स्थानीय कूड़ाघरों में भी नहीं डालना चाहिए, क्योंकि इस कचरे में फेंकी में जानी वाली सेलाइन बोतलें ओर सिरिंज कबाड़ियों के हाथों से होती हुई से होती हुई अवैध पैकिंग का काम करने वाले लोगों तक पहुँच जाती हैं, जहां इन्हें साफ कर नई पैकिंग में बाजार में बेच दिया जाता है।

बायोमेडिकल वेस्ट नियम के अनुसार, इस जैविक कचरे को खुले में डालने पर अस्पतालों के खिलाफ जुर्माने व सजा का भी प्रावधान है। कूड़ा निस्तारण के उपाय नहीं करने पर पाँच साल की सजा और एक लाख रुपये जुर्माने का प्रावधान है। इसके बाद भी यदि जरूरी उपाय नहीं किए जाते हैं तो प्रति दिन पाँच हजार का जुर्माना वसूलने का भी प्रावधान है। नियम-कानून तो है, लेकिन जरूरत है, इसको कड़ाई से लागू करने की।

नियम के अनुसार, अस्पतालों में काले, पीले, व लाल रंग के बैग रखने चाहिए। ये बैग अलग तरीके से बनाए जाते हैं, इनकी पन्नी में एक तरह का केमिकल मिला होता है जो जलने पर नष्ट हो जाता है, तथा दूसरे पॉलिथिन बैगों की तरह जलने पर सिकुड़ता नहीं है। इसीलिये इस बैग को बायोमेडिकल डिस्पोजेबल बैग भी कहा जाता है।

क्या हैं ये लाल, पीले व काले बैग?

दरअसल, विभिन्न प्रकार के बायोमेडिकल कचरे को अलग-अलग इकट्ठा करने वाले बैगों या डिब्बों को अलग-अलग रंग दिया जाता है, ताकि इनके निपटान में आसानी हो। लाल बैग में सिर्फ सूखा कचरा ही डालना चाहिए जैसे कि रुई, गंदी पट्टी, प्लास्टर आदि। पीले बैग में गीला कचरा, बायोप्सी, मानव अंगों का कचरा आदि डालना चाहिए। इसी तरह से काले बैग में सूइयाँ, ब्लेड, कांच की बोतले, इंजेक्शन आदि रखे जाते है।

इन सबके अलावा, अस्पतालों में एक रजिस्टर भी होना चाहिए जिसमें बायोमेडिकल वेस्ट ले जाने कर्मचारी के हस्ताक्षर [illegible] अस्पतालों से निकलने वाले इस कूड़े को बायोमेडिकल वेस्टेज ट्रीटमेंट प्लांट में भेजा जाना चाहिए। जहाँ पर इन

तीनों बैगों के कूड़े को हाइड्रोक्लोराइड एसिड से साफ किया जाता है जिससे कि इनके कीटाणु मर जाएँ। आटोब्लेड सलेक्टर से कूड़े में से निकली सूइयो को काटा जाता है, जिससे कि इनको दोबारा प्रयोग में ना लाया जा सके। इसके बाद कूड़े में से कांच, लोहा, प्लास्टिक जैसी चीजो को अलग किया जाता है। शेष बचे हुए कूड़े-कचरे को प्लांट में डालकर उसमें कैमिकल मिलाकर नष्ट कर दिया जाता है। ऐसा करने से बायोमेडिकल कचरे के दुरुपयोग और इससे पर्यावरण को होने वाले नुकसान से बचा जा सकता है।

कितना खतरनाक है यह बायोमेडिकल कचरा?

अस्पतालों से निकलने वाला यह जैविक कचरा किसी के लिये भी खतरनाक हो सकता है। इस कचरे में कई तरह की बीमारियों से ग्रस्त मरीजों के उपयोग में लाए गए इंजेक्शन, सूइयाँ, आईवी सेट व बोतले आदि होती हैं। कबाड़ी इस कचरे को रिसाइकिल कर बेच देते है और कई स्थानीय कम्पनियाँ इन बोतलों व सूइयों को साफ कर फिर से पैकिजिंग कर देती हैं। ऐसे में इनके उपयोग से संक्रमण के साथ-साथ अन्य लोगों की जान जाने का भी खतरा होता है। इन जैविक कचरों में कई ऐसी सड़ी-गली चीजें भी होती है, जिनसे उनको खाने कि लिये कुत्ते व सुअर भी आ जाते हैं, इस तरह जानवरों में और फिर उनसे लोगों में संक्रमण फैलने का खतरा बना रहता है।

कई ऐसे अस्पताल है, जिनमें बायोमेडिकल कचरे को साधारण कचरे के साथ कूड़ाघर में डाल रहे हैं। जो बहुत बड़ी चिंता की बात है। उससे भी बड़ी चिंता की बात यह है कि इन अस्पतालों की प्रबंधन कमेटियाँ निजी कम्पनियों से बायोमेडिकल वेस्ट के सुरक्षित निस्तारण का करार तो कर लेती है, लेकिन इसकी अच्छी तरह से निगरानी न करने से वे कम्पनियाँ लापवाही से काम करती हैं और यह लापवाही धीरे-धीरे और भी खतरनाक रूप लेती जा रही हैं।

अस्पतालों से निकलने वाला कचरा काफी घातक होता है। खुले में फेंकने से प्रयोग की गई सूई और दूसरे उपकरणों के पुनः इस्तेमाल से संक्रामक बीमारियो का खतरा बना रहता है। सामान्य तापमान में इसे जलाकर खत्म भी नहीं किया जा सकता है। अगर कचरे को 1,150 डिग्री सेल्सियस के निर्धारित तापमान पर भस्म नहीं किया जाता है तो यह लगातार डायोक्सिन और फ्यूरान्स जैसे आर्गेनिक प्रदूषक पैदा करता है, जिनसे कैंसर, प्रजनन और विकास संबंधी परेशानियाँ पैदा हो सकती हैं। ये न केवल रोग प्रतिरोधक प्रणाली और प्रजनन क्षमता पर असर डालते हैं बल्कि ये शुक्राणु भी कम करते हैं और कई बार मधुमेह का कारण भी बनते हैं।

कैसे होती है बायोमेडिकल कचरे का निपटान?

जहाँ तक बायोमेडिकल वेस्ट निपटारन प्लांट की बात है, हमारे देश में करीब 157 कॉमन बीएमडब्ल्यू निपटारा प्लांट मौजूद हैं। इनमें से लगभग 149 प्लांट चालू हैं। इनमे सबसे अधिक 34 कॉमन बीएमडब्ल्यू सुविधाएँ महाराष्ट्र में मौजूद है। दिल्ली में बीएमडब्ल्यू के निपटारे के लिये नियुक्त कंपनी सिनर्जी वेस्ट मैनेजमेंट प्राइवेट लिमिटेड दिल्ली के हर भाग से बायोमेडिकल वेस्ट इकट्ठा करती है। इस समस्या से छुटकारे के लिये ही पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप (पीपीपी) मॉडल के तहत सिनर्जी ने दिल्ली मे एक ही स्थान पर कचरे के निपटारे के लिये पर्याप्त क्षमता का प्लांट यानि इंसिनिरेटर (उच्च तापमान पर भस्म करने वाला संयत्र) लगाया गया है। इसमें कचरा नष्ट किया जाता है।

आंकड़ो के अनुसार राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (एनसीआर) में सालभर मे कुल 2,400 टन के आस-पास बायोमेडिकल कचरे का निपटारा किया जाता है। जिसमें से लगभग 800 टन नोएडा, लगभग 600 टन गुड़गाँव, लगभग 500 टन गाजियाबाद और करीब 350 टन फरीदाबाद मे चरा निकलता है। दिल्ली प्रदूषण नियन्त्रण समिति (डीपीपीसी) के आंकड़ों के अनुसार दिल्ली में रोजाना 60 टन बायोमेडिक्ल कचरा पैदा होता है। इसके निपटारे को और दक्ष बनाने के लिये दिल्ली सरकार प्लाज्मा टेक्नोलॉजी का संयत्र लगाने की योजना भी बना रही है। फिलहाल दिल्ली के कॉमन बीएमडब्ल्यू संयंत्र 20 से 25 फीसदी की क्षमता पर कार्य कर रहे है।

पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने हाल ही में देश के 13,037 स्वास्थ्य सेवा केंद्रों की सूची जारी की है जिन्हें बायोमेडिकल कचरा उत्पादन एवं निबटान नियमों का उल्लंघन करते पाया गया है। ऐसी स्वास्थ्य इकाइयों की संख्या 2007-08 में 19,090 थी। मंत्रलय के आंकड़ों के अनुसार, देश में रोजाना 4,05,702 किलोग्राम बायोमेडिकल कचरा पैदा होता है; जिसमें से

Scanned by CamScanner

2,91983 किलोग्राम कचरा ही ठिकाने लगाया जाता है। इस आंकड़े से इस बात की भी पुष्टि होती है कि रोजना 1,13,719 किलोग्राम कचरा नष्ट नहीं किया जाता और वह अनिवार्य रूप से स्वास्थ्य प्रणाली में वापस आ जाता है। आंकड़े यह भी बताते है कि नियमों का उल्लंघन करने वाली सबसे ज्यादा मेडिकल इकाइयां महाराष्ट्र और बिहार में है। मात्रा के हिसाब से देखें तो जिन राज्यों में सबसे ज्यादा बायोमेडिकल कचरा निकलता है, वे हैं कर्नाटक (लगभग 62,241 किलोग्राम), उत्तर प्रदेश (लगभग 44,392 किलोग्राम) और महराष्ट्र (लगभग 40,197 किलोग्राम)। कर्नाटक मे नियमों का सबसे ज्यादा उल्लंघन होता है, क्योंकि वह रोजाना 18,270 किलोग्राम मेडिकल कचरे को ठिकाने नहीं लगा पाता। महाराष्ट्र का दावा है कि वह पूरे बायोमेडिकल कचरे को ठिकाने लगा देता है, इसके बावजूद उसके यहां कानून का उल्लंघन करने वाली स्वास्थ्य इकाइयाँ हैं। बिहार में रोजाना सिर्फ 3,572 किलो बायोमेडिकल कचरा पैदा होता है जो बड़े राज्यों की तुलना में न्यूनतम है जबकि निपटारा नियमों का उल्लंघन करने वाले राज़्यों में इसका तीसरा स्थान है। इसका मतलब यह है कि बिहार में बड़ी संख्या में स्वास्थ्य सेवा केंद्र ऐसे हैं, जो नियमों का पालन नहीं करते।

वैसे तो 1998 के बायोमेडिकल कचरा (प्रबंधन और निपटान) नियमों के मुताबिक, बायोमेडिकल कचरा पैदा करने वाले स्वास्थ्य सेवा केंद्रों के लिये यह पक्का करना अनिवार्य है कि कचरे के प्रबंधन से मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण पर किसी तरह का प्रतिकूल प्रभाव न पड़े। लेकिन ऐसा कभी-कभी ही होता है। फरवरी 2009 में गुजरात के मेडासा कस्बे में बायरल हेपिटाइटस की वजह से कई लोगों की मृत्यु हो गई। स्वास्थ्य विभाग की जांच के अनुसार, बायोमेडिकल कचरे को टीक से ठिकाने न लगाए जाने की वजह से घातक वायरस फैला जिससे कई लोगों की जान गई।

बायोमेडिकल कचरे का उचित निपटान एवं प्रबंधन कैसे?

बायोमेडिकल कचरे में तरह-तरह के अपशिष्ट होते है, उन्हें नष्ट करने के तरीके भी अलग-अलग होते है। लेकिन नष्ट करने से पहले भी उन्हें कुछ प्रक्रियाओं से गुजारना होता है ताकि उनसे कोई इंफेक्शन न फैल सके। विभिन्न प्रकार के अपशिष्टों को नष्ट करने से पहले रोगाणुओं से मुक्त करना चाहिए।

सेन्ट्रल पॉल्यूशन कंट्रोल बोर्ड की गाइडलाइन में भी स्पष्ट निर्देश है कि बायोमेडिकर' वेस्ट रोज नष्ट कर दिए जाने चाहिए। इसके लिये सिरिंज, सूइयाँ उवं बोतलों आदि को ऑन द स्पाट डिस्पोज करके यानि उपयोग के तुरंत बाद नष्ट करके

अलग-अलग थैलियों में डालकर डिपो तक पहुँचाना चाहिए। इसके विपरीत हकीकत यह है कि अस्पताल के वार्डों व ऑपरेशन थिएटरों के कचरे को खुली ट्रॉलियों के माध्यम से ले जाया जाता है। इनमें से रक्त तथा अन्य कचरा रास्ते में भी गिरता जाता है, इससे अस्पताल में मरीजों व उनके परिजनों मे संक्रमण फैलने की संभावना बनी रहती है।

जब प्लास्टिक अपशिष्ट का निपटान करना हो तो प्लास्टिक अपशिष्ट को नष्ट करने से पहले कटर से काटकर एक प्रतिशत ब्लीचिंग पाउडर सोल्यूशन में एक घंटे तक रखा जाता है। ताकि वह रोगणुओं से मुक्त हो जाए।

इसी तरह यदि तरल अपशिष्ट हो तो उस पर समान मात्रा में ब्लीचिंग पाउडर का घोल डालकर 30 मिनट तक रखा जाना चाहिए और इसके बाद नष्ट करना चाहिए।

इस्तेमाल करने के बाद बची खून की थैलियों और खराब हुई खून की थैलियों को नष्ट करने से पहले उनमें छेद करके उन्हें 5 प्रतिशत सोडियम हाइपोक्लोराइट विलयन मे एक घंटे तक रखा जाना चाहिए।

बायोमेडिकल वेस्ट के नियमों का उल्लंघन करने वालों की सूची स्थानीय राज्य सरकारों के प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड के पास होती है। प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड को दोषी पाए जाने वाले अस्पतालों चाहे वे सरकारी हो व निजी असपताल या फिर नर्सिंग होम हो, इनके खिलाफ सख्त कार्रवाई होनी चाहिए। राज्य सरकारों को भी इसके लिये ठोस कदम उठाना अपनी प्राथमिकता में शामिल करना चाहिए। समय रहते यदि इस पर कोई दीर्घकालिक और टिकाऊ योजना नहीं बनायी गयी, तो हर शहर और गली-कूचे की हालत नरक से भी बदतर हो जाएगी। हम नयी-नयी बीमारियों को बुलाएंगे और उनके इलाज में अपना जीवन खपाएंगे।

हमें और आपको क्या करना चाहिए?

बायोमेडिकल कचरे के उचित निपटान एवं प्रबंधन में हमारी और आपकी भी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। इसके लिये हम निम्न बातों को अपना कर इस बायोमेडिकल कचरे से खुद को और अपने पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचा सकते हैं—

1. कचरे को बंद वाहनों में ले जाना चाहिए। मिश्रित कचरे को अलग-अलग करके निर्धारित प्रक्रिया के तहत उसका निस्तारण करना चाहिए।
2. कचरे को जलाकर नष्ट करने के बजाय उसकी री-साइकिल करने की व्यवस्था होनी चाहिए।
3. बायोमेडिकल ओर इंडस्ट्रियल कचरे को शहरी कचरे में नहीं मिलाना चाहिए।
4. जगह-जगह पर कचरा पात्र रखे होने चाहिए, जहाँ से कचरा नियमित रूप से उठाने की व्यवस्था हो।
5. ठोस कचरा प्रबंधन की जानकारी के लिये जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए।
6. व्यक्तियों के द्वारा कचरा उठाकर डालने की प्रक्रिया पूर्णतय: प्रतिबंधित होनी चाहिए।
7. लैंडफिल साइट पर बायोमेडिकल कचरा न डालें। यदि लैंडफिल पर कचरा डालना भी हो तो कचरा डालते ही तत्काल 10 मिलीमीटर की मिट्टी की परत बिछा देनी चाहिए।
8. अस्पतालों को भी बायोमेडिकल कचरा निपटान के नियमों का पूरी तरह से पालन करना चाहिए।

इलैक्ट्रॉनिक व्यर्थ (Electronic Waste)

इस तरह के व्यर्थ को हम E-Waste भी कहते हैं। वर्तमान एक कम्प्यूटर एज है जिसमें सभी कार्य कम्प्यूटर्स द्वारा सम्पन्न होते है। अत: घरों मे कम्प्यूटर से सम्बन्धित सभी Accessories मौजूद रहती हैं, इसके अतिरिक्त अन्य इलैक्ट्रॉनिक उपकरण के अनुसार एक कम्प्यूटर सैट, मॉनीटर, माऊस, की-बोर्ड व CPU (Central Processing Unit) सहित लगभग 32 Kg का वजन होता है। जब कम्प्यूटर पूरी तरह आउट ऑफ आर्डर हो जाते हैं, तब इन्हे Dump कर दिया जाता है और यह Waste एक ढेर का रूप ले लेता है जिसका Recycle किया जाना सम्भव नहीं है। इस ढेर से कम्प्यूटर की चिप्स व अन्य छोटा-मोटा सामान छांट लिया जाता है, और बाकी सब व्यर्थ कहलाता है। नई तकनीकी के लगातार उन्नत विकास (Advance Development) होने के कारण नई तकनीकी के इलैक्ट्रॉनिक्स उपकरण नित-नये बाजारों में आ रहे है। वैसे पुराने कम्प्यूटर्स खराब होकर Discarded हो रहे हैं।

है। इन पुराने कबाड़ों का Waste हर रोज बढ़ता जा रहा है जिसका निपटारा या समापन करना एक बहुत बड़ी समस्या बन रही है। वैसे कुछ कम्पनियाँ Recycling का प्रस्ताव कर रही हैं। परन्तु अब तक इस पर कोई भी सार्थक कदम नहीं उठाया गया है। अगर ऐसे ही हालात रहे तो अन्य व्यर्थों/ठोस व्यर्थों के मुकाबले E-Waste कहीं ज्यादा खतरनाक होगा।

प्लास्टिक अपशिष्ट का निपटान

हमारे देश में ठोस अपशिष्ट के निपटान में सबसे बड़ी समस्या उसका विषम अवयवी (हैटरोजिनस) होना है। घरों, बाजारों, होटलों और अन्य व्यावसायिक प्रतिष्ठानों से निकलने वाले कचरे में एक बड़ी मात्रा प्लास्टिक अपशिष्ट की होती है। जैविक कचरे के साथ प्लास्टिक कचरे के मिले होने के कारण जैविक कचरे के निपटान में भी अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसके अलावा कचरे की कुल मात्रा तथा आकार भी बढ़ जाता है, जिससे उसके हथालन में भी कठिनाईयाँ आती है। जैसे कि हम जानते हैं, प्लास्टिक कचरा जैविक रूप से नष्ट नहीं होता और सामान्य घरेलू कचरे के साथ मिलाकर यदि इस फेंका जाता है तो ये सालों तक बिना नष्ट हुए उसी रूप में पड़ा रहता है। जब तक कि कोई उसे वहाँ से उठाकर न ले जाए। हमारे रोजमर्रा के जीवन में प्लास्टिक विभिन्न रूपों में बहुतायत में उपयोग में आता है। इसलिए अपशिष्ट के रूप नें भी इसकी बड़ी मात्रा उत्पन्न होती है। प्लास्टिक उत्पादों के टिकाऊ होने के कारण इसकी लोकप्रियता अत्यधिक है। उदाहरणार्थ-प्लास्टिक से बनाई गई कुर्सी एवं टेबल सालों-साल अपना स्वरूप बदले बिना उसी रूप में रहती है। चाहे कितना भी मौसम बदल जाए या उनका उपयोग किसी भी तरह क्यों न किया जाए, उसके रंग-रूप और आकार में कभी कोई विशेष परिवर्तन नहीं होता। भार में हल्के होने मजबूत व टिकाऊ तथा किसी भी रूप में इसके ढाले जा सकने के गुण के कारण भी इसका उपयोग पिछले कुछ दशकों में काफी बढ़ गया है। फिर भी इसका सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू इसका जैविक रूप से नष्ट न होना है। यू कहा जा सकता है कि प्लास्टिक, जैविक रूप से नष्ट तो नहीं होता, किन्तु इसका पुनर्चक्रण किया जाना संभव है।

प्लास्टिक अपशिष्ट की प्रकृति एवं इसके निपटान में आने वाली कठिनाईयों के कारण इसके निपटान को गंभीरता से लिया जा रहा है। हमें विदित है कि वर्षा के दिनो में अनेक शहरों मे आवसीय क्षेत्र लगभग जलमग्न हो जाते हैं। इसका सबसे प्रमुख कारण यही है कि विभिन्न उपयोगों मे आने वाले पॉलीथीन के पैकेट उपयोग के उपरांत यहां-वहाँ फेंके जाने से ये उडकर या वर्षा के जल के साथ बहकर नालियों और अन्य ड्रेनेज सिस्टम में फसकर इसे चोक कर देते हैं। जिससे पानी का बहाव रुक जाता है और शहरी क्षेत्रों में बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

पॉलीथीन की थैलियों के ठीक तरह से निष्पादित न होने की स्थिति में पर्यावरण पर अनेक विपरीत दुष्प्रभाव पड़ते हैं, जिसमें कुछ निम्नानुसार है—

1. जैविक रूप से नष्ट न करने के कारण इन्हें जिस स्थिति में फेका जाता है। सकड़ों वर्षों तक वे उसी रूप से पड़ी रहती है।

2. प्लास्टिक के पैकेटस नालियों, ड्रेनेज सिस्टम, सिवरेज पाईप लाईन आदि को अवरूद्ध करते हैं तथा पानी विशेषकर दूषिक जल की निकासी में रुकावटें उत्पन्न करते हैं। इससे जहां आसपास के क्षेत्र में पानी भी जाता है। वही गंदे पानी के जमाव से विभिन्न हानिकारक कीट एवं जीवाणु पनपते हैं और विभिन्न बीमारियों को जन्म देने का कारण बनते हैं।

3. पॉलीथीन की थैलिया इधर-उधर फेंके जाने से ये गन्दगी तो फैलाती ही हैं, सार्वजनिक स्थानों को प्रदूषित भी करती है। पर्यटन महत्त्व के स्थल, धार्मिक स्थलों, बाग-बगीचों, नदियों एवं तालाबों को प्रदूषित करने के साथ उनके सौंदर्य को भी नष्ट करती है।

4. मृदा में मिलकर ये उसकी उर्वरता को प्रभावित करती है एवं उसे कृषि के अयोग्य बनाती है, जिससे मिट्टी बंजर हो जाती है।

5. मृदा पर जहाँ से डाली जाती है। वहाँ इसके साथ मिलकर मृदा की स्वाभाविक जल वितरण क्षमता को प्रभावित करती है।

6. मृदा के जैव श्वसन तन्त्र एवं उसकी नमी ग्रहण करने की क्षमता को भी प्रभावित करती है जिससे पौधों एवं फसलों के विकास में बाधा पहुंचती है।

7. नगरीय ठोस अपशिष्ट के साथ इन्हें फेंके जाने के कारण अनेक मवेशी कचरा खाते हुए इन्हें भी निगल जाते हैं तथा इनकी अत्यधिक मात्रा निगलकर काल के ग्रास बन जाते हैं।

8. पौलीथीन अपशिष्ट भूमिगत जल स्रोतों की रिचार्जिंग को भी प्रभावित करते हैं।

9. घरेलू अपशिष्ट के साथ इन्हें जलाने पर सल्फर डाइ ऑक्साइड, कार्बन मोनो ऑक्साइड एवं नाइट्रोजन ऑक्साइड के साथ डाइ ऑक्सीन जैसी विषैली गैस का उत्सर्जन होता है जो पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य पर अत्यत विपरीत असर डालती है।

प्लास्टिक उद्योग द्वारा प्लास्टिक अपशिष्ट के पुनर्चक्रण को विशेष रूप से अपनाया जा रहा है। साथ ही पुनर्चक्रण के दौरान होन वाले पर्यावरण प्रदूषण को भी काफी गंभीरता से लिया गया है। हमारे देश में विगत वर्षों में प्लास्टिक के उत्पादों की खपत बढ़ी है, जनके कारण अपशिष्ट की मात्रा में भी बढ़ोत्तरी हुई है। सन् 2001-02 मे जहाँ घरेलू उपयोग में प्लास्टिक के उपकरणों की माँग 4 मिलियन टन थी तो वही सन् 2007-08 मे यह माँग बढ़कर लगभग 6-7 मिलियन टन हो गई। सच तो ये है कि न सिर्फ भारत वरन् सम्पूर्ण विश्व मे भी प्लास्टिक वस्तुओं के व्यापार में दोगुनी वृद्धि हुई है। जो कि अन्य घरेलू आवश्यकता बाजार की तुलन में कहीं अधिक है। कृषि निर्माण, टेली कम्म्यूनिकेशन, घरेलू उपयोग और यहाँ तक कि अधोसंरचना निर्माण तक में प्लास्टिक के उपयोग की माँग मे इजाफा हुआ है। पैकेजिंग के कार्य हेतु उपयोग मे आने वाले विभिन्न पैकेजिंग पदार्थों जैसे—जूट, पेपर, लकड़ी, गत्ता, काँच या धातु के बनाए गए आवरणों को प्लास्टिक शीट्स ने लगभग बाहर कर दिया है। प्लास्टिक उपयोग का लगभग 52% केवल पैकेजिंग कार्यों हेतु उपयोग मे लाया जाता है। वर्तमान में देश में प्लास्टिक की प्रति व्यक्ति माँग बढ़ कर लगभ 6-7 कि०ग्रा० तक हो गई है।

पुराने समय से लेकर अब तक वास्तव में प्लास्टिक के संग्रह हेतु कचरा बीनने वाले ही प्रमुखता से अपनी भूमिका निभाते आ रहे हैं। इनके छोटे और फिर बड़े कबाड़ियो से होते हुए अंततः प्लास्टिक पुनर्चक्रण इकाईयों तक ये अपशिष्ट पहुँचता है। कुल प्लास्टिक अपशिष्ट के 60% से अधिक के भाग को पुनर्चक्रण के द्वारा अन्य प्लास्टिक उत्पाद बनाने में उपयोग कर लिया जाता है।

प्लास्टिक के सामान का लंबे समय तक उपयोग करने की हमारी प्रवृत्ति के कारण प्लास्टिक उत्पादों को काफी समय बाद हमारे द्वारा कचरे के रूप मे फेका जाता है। पॉलीथीन के कैरीबैग्स दूध के पैकेट, पानी की बोतलें आदि को अनेक बार उपयोग में लाया जाता है। जब तक कि वे इस योग्य तक रहते हैं। इसी प्रकार घरो मे उपयोग में आने वाली प्लास्टिक की बाल्टियाँ, मग, जेरीकेन्स आदि का भी सालो-साल उपयोग किया जाता है। यहाँ तक कि उनके टूटने पर उनका उपयोग अन्य तरह से किया जाने लगता है। जैसे—प्लास्टिक की बाल्टियां टूटने पर डस्टबिन की तरह उपयोग में लाई जाने लगती हैं। कहने का तात्पर्य ये कि जब तक उनका स्वरूप पूरी तरह से बिगड़ न जाए अथवा वे पूर्णतः अनुपयोगी न हो जाए उनका उपयोग किया जाता है। तत्पश्चात् ही वे अपशिष्ट के रूप में फेंकी जाती हैं।

जैसा कि पहले भी बताया गया है कि कुल प्लास्टिक अपशिष्ट का 60-80% भाग ही एकत्र कर पुनर्चक्रण हेतु पुनर्चक्रण इकाईयों तक लाया जाता है। शेष अपशिष्ट बिना एकत्र हुए कचरे के रूप में यहाँ वहाँ फैला हुआ देखा जा सकता है। इसमें से कुछ भाग सड़कों के किनारे गलियों, मैदानों आदि मे तो कुछ भाग खुली हुई नालियों या अव्यवस्थित कचरे के ढेरों के रूप में पड़ा हुआ दिखाई देता है। इनमें से ज्यादातर ऐसा अपशिष्ट होता है जो या तो पुनर्चक्रण के अयोग्य होता, पुनर्चक्रण द्वारा कुछ कम गुणवत्ता के नये उत्पाद बनाए जा सकते है, जैसे—पुनर्चक्रित प्लास्टिक से कैरीबैग्स का निर्माण।

4. अपशिष्ट की मात्रा में कटौती या (Reduction)—प्लास्टिक अपशिष्ट कम से कम उत्पन्न हो इसके लिए बेहतर होगा कि इन्हें कम से कम मात्रा में ही उपयोग मे लाया जाए। जैसे—बाजार से सामान खरीदने के लिए कपड़े के थैले लेकर जाए ताकि पोलीथीन के पैकेट में सामान लाने की जरूर न पड़े और अनावश्यक प्लास्टिक अपशिष्ट की मात्रा न बढ़े। इसे हेतु हमें अपने सभी परिचितो को भी प्रेरित करना चाहिए। तथा पॉलीथीन कैरीबैग्स का उपयोग कम से कम करना चाहिए।

उपरोक्तनुसार एकीकृत प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन हेतु इस बात पर जोर दिया गया है कि सर्वप्रथम तो प्लास्टिक उत्पादों के इस्तेमाल मे ही कमी लाई जानी चाहिए ताकि अपशिष्ट की कम से कम मात्रा उत्पन्न हो। बेहतर प्रबंधन की दृष्टि से प्लास्टिक अपशिष्ट को अन्य घरेलू कचरे से अलग एकत्र किया जाना चाहिए। मौजूदा प्लास्टिक अपशिष्ट संग्रहण व्यवस्था एवं पुनर्चक्रण तकनीकों में सुधार लाया जाना चाहिए। इसके साथ ही इससे संबंधित जन जागरूकता कार्यक्रम चलाए जाए. ये भी

Scanned by CamScanner

आवश्यक है। प्लास्टिक को यहां-वहां फेंकने पर दण्ड का प्रावधान किया जाना चाहिए ताकि इस प्रकार की प्रवृत्तियों पर अंकुश लगाया जा सके। प्लास्टिक अपशिष्ट ज्वलनशील प्रकृति के होते है अत: इनके संग्रहण के साथ आग लगने जैसी दुर्घटनाएँ न हो इस हेतु पर्याप्त बचाव की व्यवस्था होनी चाहिए। अन्यथा बड़ी दुर्घटनाएं घट सकती हैं। इसके साथ ही प्लास्टिक अपशिष्ट के पुनर्चक्रण से संबंधित इकाईयों के संघ और प्लास्टिक प्रबंधन से जुड़ी और अन्य संस्थाओं के बीच सतत् एवं सुदृढ़ एवं संपर्क का होना आवश्यक है ताकि उनमें परस्पर सामंजस्य बना रहे।

प्लास्टिक अपशिष्ट के प्रबंधन हेतु कार्ययोजना का स्वरूप

प्लास्टिक अपशिष्ट के प्रबंधन हेतु कार्ययोजना का निर्माण अति आवश्यक है, इससे जुड़े कुछ बिन्दुओं पर यहाँ विचार किया जा रहा है—

1. प्लास्टिक का उपयोग पैकेजिंग उद्योग में किये जाने हेतु दिशा-निर्देश—जैसा कि ज्ञात है कि प्लास्टिक का सर्वाधिक उपयोग पैकेजिंग कार्य में किया जाता है। कुल प्लास्टिक उत्पाद का 52-55% पैकेजिंग के कार्य में उपयोग होता है। इसलिए इस पर विशेष ध्यान देने की जरूरत हैं। प्लास्टिक का पैकेजिंग कार्य में उपयोग सीमित किये करने के साथ इस सामग्री का पुन:उपयोग अनुपयोगी पैकेजिंग सामग्री का पुनर्चक्रण एवं अतत: अंतिम निपटान हेतु अपशिष्ट की मात्रा कम किए जाने पर ध्यान केन्द्रित किया गया है।

2. ब्यूरो ऑफ इंडियन स्टैंडर्ड (BIS) के दिशा-निर्देशों का पालन करना—पुनर्चक्रित प्लास्टिक से उत्पाद बनाने वालों द्वारा इसके दिश-निर्देशों का पालन सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

3. पुनर्चक्रण हेतु दिशा-निर्देश का पालन करना—यद्यपि प्लास्टिक अपशिष्ट का पुनर्चक्रण ही प्लास्टिक अपशिष्ट के प्रबंधन हेतु सर्वाधिक कारगर उपाय माना गया है तथापि पर्यावरण एवं स्वास्थ्य की दृष्टि से टाईप-II प्लास्टिक के परे अपशिष्ट के पुनर्चक्रण को प्रतिबंधित किया जाना चाहिए। इनका ऊर्जा स्रोतों के रूप में उपयोग किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त निर्माण गतिविधियों में भी इसका उपयोग किया जा सकता है।

4. प्लास्टिक उत्पादों में प्लास्टिक की गुणवत्ता को ध्यान में रखना—अनेक उपभोक्ता सामग्रियां जैसे—बच्चों के खिलौने, पानी की बोतले, खाद्य सामग्री को ले जाने के लिए उपयोग में आने वाली पोलीथीन की थैलियां आदि उत्तम गुणवत्ता के प्लास्टिक से बनाई जानी चाहिए। घातक रंगों का उपयोग कर बनाई जाने वाली रंगी पॉलीथीन थैलियों को प्रतिबंधित किया जाना चाहिए। रंगीन पन्नियों में घातक रसायनों विशेषकर विषैली धातुओं का उपयोग अभिरंजक के रूप में किया जाता है। इनमें निम्नलिखित भारी धातुएं मिली होती है—

लैड	काला रंग
कोमियम	लाल रंग
बेरियम	हरा रंग
तांबा	नीला रंग

इनमें खाद्य सामग्रियां रखने पर ये विषैली धातुएँ खाद्य सामग्री के साथ मिल कर हमारे भोजन एवं इनके माध्यम से हमारे शरीर में पहुंचती है तो भारी एवं विषैली धातुए कैसर कारक हो सकती हैं। अत: इन रंगीन पॉलीथीन की थैलियों का उत्पादन प्रतिबन्धित किया जाना चाहिए।

5. पुनर्चक्रण हेतु विभिन्न इकाईयों के बीच सामंजस्य—एकीकृत प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन के लिए प्लास्टिक उद्योग स्थानीय निकाय एवं उपभोक्तओं के बीच सहयोग और सहभागिता का होना जरूरी है। प्लास्टिक अपशिष्ट के अधिकाधिक और बेहतर संग्रहण के साथ उपयोग के पश्चात उनके एकत्रण की व्यवस्था भी कारगर होनी चाहिए। तभी पुनर्चक्रण की प्रक्रिया सही तरह से सम्पादित की जा सकेगी।

6. उपभोक्ताओं में जन जागरूकता—प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबन्धन से जुड़े विभिन्न विषयों के प्रति जन सामान्य में जागरूकता लाने हेतु विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किये जा सकते हैं। जन जागरूकता का कार्य प्रसार माध्यमों के द्वारा प्रदर्शनी [illegible] पोस्टर एवं पॉम्फलेट्स के वितरण के माध्यम से किया जा

सकता है। इस तरह जन जागरूकता कार्यक्रमों के माध्यम से उपभोक्ताओं को उनकी भूमिका ठीक तरह से समझाई जा सकती है।

7. प्लास्टिक अपशिष्ट के सही प्रबंधन में भागीदारी हेतु दण्ड का प्रावधान—उपयोग के उपरांत प्लास्टिक अपशिष्ट को सही तरह से निष्पादित करने की बजाए उन्हें यहां-वहां फेंककर गंदगी एवं प्रदूषण की स्थिति उत्पन्न करने वाले लोगों एवं संस्थानों के विरुद्ध दण्ड का प्रावधान किया जाना चाहिए। इसी प्रकार प्लास्टिक अपशिष्ट के सही निपटान मे लगे हुए लोगों की भूमिका की सराहना भी की जानी चाहिए ताकि अन्य लोग इनसे प्रेरणा प्राप्त कर सकें।

8. प्लास्टिक अपशिष्ट के पुनर्चकण में आवश्यक यांत्रिक उपकरणों की आवश्यकता—प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबन्धन की दृष्टि से पुनर्चक्रण कार्य में आवश्यक यान्त्रिक उपकरणों का निर्माण देश में ही किया जाने लगा है तथापि पुनर्चक्रण तकनीक को विकसित करने के उद्देश्य से आधुनिकतम मशीनों का उपयोग अधिक प्रभावी हो सकता है। अत: पुनर्चक्रण इकाईयों को इस प्रकार की आधुनिकतम मशीनों के सबन्धों में जानकारी प्राप्त कर उन्हें अपने उद्योगों में स्थापित करने हेतु प्रयासरत रहना चाहिए।

9. खतरनाक प्लास्टिक अपशिष्ट का प्रबंधन—जैसा कि हमें ज्ञात है कि प्लास्टिक अपशिष्ट का एक बड़ा भाग चिकित्सा संस्थानों में उत्पन्न होता है। हॉस्पिटल, नर्सिंगहोम, क्लिनिक, ब्लड बैंक, पैथोलॉजी प्रयोगशाला आदि से उत्पन्न होने वाली प्लास्टिक की एसेसरीज भी अपशिष्ट के रूप में निकलती है। लेकिन ये प्लास्टिक अपशिष्ट पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य की दृष्टि से अत्यत खतरनाक होते हैं। इनके संक्रमित होने के कारण इनसे संक्रामक बीमारियों के फैलने का खतरा बना रहता है। इनके निपटान में होने वाली जरा सी चूक मानव जीवन के लिए खतरनाक सावित हो सकती है। इसलिए चिकित्सा इकाईयों से निकलने वाले अपशिष्ट का एकत्रण संग्रहरण एव परिवहन नगरीय ठोस अपशिष्ट के साथ न करके पृथक से किये जाने के प्रावधान बनाए गये हैं। इन अपशिष्टों को विसंक्रमित कर इनकी श्रेडिंग करने के उपरात इन्हें पुनर्चक्रण इकाईया को दिया जाना चाहिए ताकि इसी रूप में इनका उपयोग न किया जा सके।

10. अग्नि दुर्घटनाओं से सुरक्षात्मक उपाय—प्लास्टिक अपशिष्ट अत्यधिक ज्वलनशील होते है। अत: प्लास्टिक अपशिष्ट निपटान स्थानों, अपशिष्ट डीलर्स एवं पुनर्चक्रण इकाईयो में अग्नि दुर्घटनाओं से बचाव के लिए पर्याप्त व्यवस्था की जानी चाहिए।

11. प्लास्टिक निर्माण एवं पुनर्चक्रण इकाईयों के बीच अंर्तसंबंध—प्लास्टिक उद्योगों जैसे—कैरीबैग्स, शॉपिंग बैग्स, मल्टीलेयर फिल्म पेकेजिंग पी०वी०सी० एवं पी०ई०टी० बोतल, कैटरिंग ट्रे आदि निर्माण करने वाली इकाईयों तथा उपयोग के उपरात इन वस्तुओं के पुनर्चक्रण के कार्य से संबद्ध इकाइयो के बीच अन्तर्सम्बध का होना अतिआवश्यक है। ताकि वे एक-दूसरे की आवश्यकताओ को समझकर इसके अनुसार कार्य कर सके।

प्लास्टिक अपशिष्ट का प्रावधान की दृष्टि से इससे जुड़ी प्रत्येक इकाई की सक्रिय भागीदारी अतिआवश्यक है। केवल एक इकाई के सक्रिय होने से सम्पूर्ण प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन का कार्य सही तरह से नहीं किया जा सकेगा।

प्लास्टिक अपशिष्ट के पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य पर पड़ रहे दुष्प्रभावों पर गंभीरतापूर्वक विचार करने के उपरांत **केन्द्र शासन द्वारा इस संबंध में पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 की धारा 25 के अन्तर्गत पुनर्चक्रित प्लास्टिक विनिर्माण एवं उपयोग नियम, 1999 बनाया गया।** ये नियम 2 सितम्बर 1999 को आधिकारिक गजट में प्रकाशित होकर लागू किया गया है। इस नियम के अनुसार इसके क्रियान्वयन हेतु राज्य प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड को अधिकृत किया गया है। इस नियम के अन्तर्गत पॉलीथीन के कैरीबैग्स की न्यूनतम मोटाई 20 माइक्रान से कम नहीं होनी चाहिए। पुनर्चक्रित अथवा अनुप्रयुक्त प्लास्टिक से बने कैरीबैगस का आकार 8" × 12" से कम नहीं होना चाहिए तथा इस प्रकार के 50 कैरीबैग्स का न्यूनतम भार 150 + 5 ग्राम होना चाहिए। पुनर्चक्रित प्लास्टिक से बने कैरीबैगों या पात्रों को खाद्य सामग्री रखने, भरकर ले जाने, प्रदाय करने या पैकेजिंग करने में उपयोग नहीं किया जायेगा। प्लास्टिक से बने कैरीबैगों एवं पात्रों का उपयोग यदि खास सामग्री के संग्रहण अथवा पैकेजिंग आदि में किया जाना है। तो इसे अनुप्रयुक्त प्लास्टिक से प्राकृतिक रंग में तैयार किया जाना चाहिए। इनके लिए भारतीय मानक ब्यूरों आई उस 9833-1981 के प्रावधानों का पालन किया जाना अनिवार्य है। प्लास्टिक का पुनर्चक्रण आई एस० 14534-1988 के अंतर्गत उल्लेखित प्लास्टिक के पुनर्चक्रण के लिये मार्गदर्शक सिद्धान्त के अनुसार किया जाना चाहिए।

Scanned by CamScanner

पुनर्चक्रित प्लास्टिक से निर्मित वस्तु/अंतिम उत्पादन को "पुनर्चक्रित" शब्द से अंकित किया जायेगा। साथ ही इसके निर्माण के लिए प्रयुक्त पुनर्चक्रित प्लास्टिक का प्रतिशत भी उल्लेखित किया जायेगा। इस हेतु आई एस० 14534-1988 के प्रावधानों का पालन किया जाएगा।

प्लास्टिक से बनी वस्तुओं के उपयोग, संग्रहरण, पृथक्करण, परिवहन एवं निपटान के लिये नियम के क्रियान्वयन हेतु जिला कलेक्टर/जिले का उपायुक्त मुख्य कार्यपालन अधिकारी उत्तरदायी होंगे।

नियम का पालन न करने की स्थिति में उल्लंघन करने वाले को पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 के प्रावधानों के अनुसार दण्ड दिया जा सकेगा।

प्लास्टिक अपशिष्ट के समुचित प्रबन्धन के महत्त्व को देखते हुए यह अत्यत आवश्यक है कि इससे संबंधित सभी पक्षों के मध्य समुचित सामंजस्य स्थापित किया जाए ताकि प्लास्टिक अपशिष्ट का सही तरह से निपटान सुनिश्चित हो सके एव नियम का सही क्रियान्वयन किया जा सके।

घरेलू ठोस व्यर्थ (Domestic Solid Waste)

घरेलू ठोस व्यर्थ में धूल, खाद्य व्यर्थ, धातु, काँच, पेपर, घास-फूस, चिथड़े, गत्ते, छिलके, चमड़ा और सिरेमिक आदि सम्मिलित होते हैं। पूरे विश्व में 250 ग्राम से 1000 ग्राम तक का व्यर्थ प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उत्पन्न होता है। इसका घनत्व 100 kg / m^3 से 600 kg / m^3 तक रहता है तथा इसका आयतन 0.5 लीटर से 10 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन Exit होता है।

घरेलू ठोस व्यर्थ में 20% से 75% तक खाद्य पदार्थ, 5% से 10% तक अक्रिय पदार्थ, 2-6% तक पेपर व्यर्थ व 0% से 10% तक काँच व 0% से 15% तक धातुओं की व्यर्थ मात्रा रहती है। ठोस व्यर्थ प्रबन्धन में इस व्यर्थ का संग्रह, स्थानान्तरण, उपचार व निपटारा करना है।

नगरीय व्यर्थ को Incineration करने पर वायु में सूक्ष्म जैविकों की उपस्थिति तालिका

वातावरण	कुल सूक्ष्म जीवाणु (कालोनी/घन फुट हवा)
शहरी हवा	56
स्कूल-कार्यालय	95
शहरी गलियाँ	72
उद्योग	113

ठोस व्यर्थ के आयतन में कमी करना (Volume Reduction of Solid Waste)

निपटारा स्थल पर ठोस व्यर्थ का अन्तिम समापन करने से पूर्व सभी एकत्रित ठोस का निम्न तरीकों से आयतन कम करके ठोस व्यर्थ द्वारा घेरे गये स्थान को सीमित करना जरूरी है—

(1) यान्त्रिक विधियों से आयतन कम करना (Mechanically volume reduction)—ठोस व्यर्थ के आयतन में कमी करने के लिए यान्त्रिक विधियों से ठोस व्यर्थ का संहनन (compaction) किया जाता है। यह Land fill की life बढ़ाता है। संहनन करने से ठोस व्यर्थ का घनत्व बढ़ता जाता है। यह घनत्व अधिकतम 1100 kg / m^3 तक हो जाता है, इस स्थिति में इसका आयतन अधिकतम कम हो जाता है।

(2) ऊष्मीय विधियों से आयतन कम करना (Thermally Volume Reduction)—ठोस व्यर्थ को सुखाकर व जलाकर 90% तक आयतन कम किया जा सकता है परन्तु ठोस व्यर्थ को जलाने से वायु प्रदूषण होता है। अत: कम संख्या में जलाने की प्रक्रिया अपनाई जाती है। जलाने की प्रक्रिया से वायु में CO_2, H_2O, N_2, SO_2 आदि अन्य अवयवों की वृद्धि हो जाती है तथा ठोस व्यर्थ राख (Ash) में बदल जाता है, इसके अलावा जलाने से आस-पास के वातावरण के तापमान में भी वृद्धि हो जाती है। ऐसे तापमान की वृद्धि को रोकने के लिए Mass Fired Incinerators का प्रयोग किया जाता है जिसमें ठोस व्यर्थ को जलाने के उपरान्त गर्म गैसों के निकलने के स्थान पर एक Boiler लगाया जाता है। बायॅलर में भाप बनती है जिसका प्रयोग

Steam Engine व अन्य उपकरणों को चलाने में किया जाता है। Mass Fired Incinerators से जो तापमान वातावरण में जाता है वह 1800°F से 2000°F तक ना रहकर 600°F से 1000°F तक रह जाता है। Mass Fired Incinerators के स्थान पर Water Wall Incinerators का भी प्रयोग किया जाता है। इन Incinerators में Boiler tubes, Incinerators के अन्दर ऊर्ध्वाधर खड़ी रखी जाती है। इन Boiler tubes में पानी रहता है। जब ठोस व्यर्थ को जलाया जाता है तो दग्ध गैस ट्यूब के सम्पर्क में आकर, पानी को भाप में बदल देती है। अत: ऊष्मा निष्कासन का ताप कम हो जाता है।

(3) उपयोगिता के आधार पर आयतन कम करना (Utilization Volume Reduction)—ठोस व्यर्थ में प्राय: लकड़ी, चमड़ा, कागज, प्लास्टिक, काँच, चुम्बकीय धातु, अचुम्बकीय धातु, राख, खाद्य व्यर्थ, भूसी (Rise husk) आदि पदार्थ होते हैं। इस प्रकार के ठोस व्यर्थ के आयतन में कमी करने के लिए सबसे पहले इस ठोस व्यर्थ से उपयोगी पदार्थों को बीनकर (Screening) अलग कर लिया जाता है। जैसे ठोस व्यर्थ में लोहा, ताँबा, पीतल तथा ऐलुमिनियम आदि निकलकर इन्हें बेचा जा सकता है। इसके अतिरिक्त विद्युत संयन्त्रों से निकली जो भी राख, ठोस व्यर्थ में हो तो अलग कर सीमेन्ट के स्थान पर प्रयोग में लाया जा सकता है। चूँकि इस राख में कुछ पानी मिलाने से रासायनिक क्रिया होती है और ऊष्मा का निष्कासन होता है। चीनी की मिलों से प्राप्त होने वाले ठोस पदार्थ व्यर्थ में बैगास को अलग कर लेते हैं जिसको कागज बनाने में प्रयोग में लाया जा सकता है। इसी प्रकार ठोस व्यर्थ जिसमें लकड़ी के टुकड़े या छीलन हों तो इसको अलग कर, उबालकर, पीसकर, अलसी व तारपीन का तेल मिलाकर हार्ड-बोर्ड या कागज बनाया जा सकता है। काँच के टूटे हुए टुकड़े को ठोस व्यर्थ से अलग कर पुन: पिघलाकर, दोबारा ढालकर (mould) बर्तन आदि के रूप में प्रयोग में लाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त ठोस व्यर्थ में प्लास्टिक के टुकड़े भी होते हैं, थर्मोप्लास्टिक के सामानों जैसे प्लास्टिक की पाइप, टोटियाँ, खिलौने, बिजली के तारों का आवरण, प्लास्टिक के थैले, पैन, चाकुओं के हत्थे, स्क्वॉयर, कंघे, धूप के चश्मे आदि, ठोस व्यर्थ से अलग कर इन्हें बेचा जा सकता है अथवा इन्हें पिघलाकर पुन: साँचों में ढालकर नवीन आकृति में ढाला (cast) जा सकता है। थर्मोसेट प्लास्टिक के टुकड़े अथवा टूटे-फूटे सामान भी जैसे बिजली के स्विच, रेडियो, टी०वी०, ट्रान्जिस्टर आदि की कैबिनेट, बटन, Buckles (बकसुए) तथा Hair clips आदि को ठोस व्यर्थ के साथ ही रहने दिया जाता है, ताकि इनको ठोस व्यर्थ के साथ पीसकर इनका अन्तिम निपटारा किया जा सके।

प्रश्नावली

1. ठोस अपशिष्ट कितने प्रकार के होते हैं? संक्षेप में वर्णन कीजिये।
2. नगरपालिका अपशिष्ट के स्रोत कौन-कौन से हैं?
3. निम्न पर टिप्पणी लिखो—
   (a) सूखा कचरा (b) औद्योगिक ठोस अपशिष्ट
   (c) भयावह अपशिष्ट
4. ठोस व्यर्थ के घटकों पर प्रकाश डालिये।
5. ठोस अपशिष्ट के रासायनिक घटक कौन-कौन से हैं? विस्तृत वर्णन कीजिये।
6. ठोस अपशिष्ट हस्तरण से आप क्या समझते हैं?
7. ठोस अपशिष्ट संग्रह की पद्धतियों का वर्णन करो।
8. घरेलू व औद्योगिक अपशिष्ट की विशिष्टताओं की तुलना कीजिये।
9. ठोस व्यर्थ के समापन हेतु प्रयोग में लाये जाने वाले उपकरणों का संक्षिप्त परिचय दीजिये।
10. ठोस व्यर्थ समापन की कौन-कौन सी विधियाँ प्रयोग की जाती हैं?
11. विभिन्न प्रकार के ठोस अपशिष्ट क्या है जो किसी समुदाय में प्रदूषण उत्पन्न करते है? ग्रामीण क्षेत्रों हेतु ठोस अपशिष्ट निस्तारण के लिये कोई उपयुक्त विधि समझाइये।
12. ठोस व्यर्थ से पुनर्प्राप्ति से आपका क्या तात्पर्य है? पुनर्प्राप्ति का वर्गीकरण करो तथा संक्षेप में नोट भी लिखो।
13. ठोस व्यर्थ का आकार कैसे कम किया जाता है?

Scanned by CamScanner

14. "ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन के जनस्वास्थ्य पहलुओं" पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।
15. समुदाय से उत्पन्न ठोस अपशिष्ट के एकत्रण की विभिन्न विधियों की संगणना कीजिये।
16. औद्योगिक अपशिष्ट की सामान्य विशिष्टताओं का वर्णन कीजिये। पर्यावरण पर उसके क्या प्रभाव होते हैं?
17. ठोस व्यर्थ प्रदूषण क्या है? इसके स्रोतों का वर्णन करो। (B.T.E. 2002)
18. ठोस व्यर्थ कितने प्रकार का होता है? संक्षिप्त रूप से स्पष्ट करें।
19. ठोस व्यर्थ को संग्रह करने का प्रक्रम समझाएं।
20. ठोस व्यर्थ को संग्रह करने हेतु संग्राहक मार्गों का चयन करते समय किन-किन बातों को ध्यान रखना चाहिये?
21. ठोस व्यर्थ का अन्तिम निपटारा किन-किन विधियों से सम्भव है?
22. औद्योगिक ठोस अपशिष्ट से साल्वेज और रिकवरी से आप क्या समझते हैं? स्पष्ट कीजिये। (B.T.E. 1999)
23. समुदाय से उत्पन्न ठोस अपशिष्ट के एकत्रण की विभिन्न विधियों का वर्णन करें और दफनाने वाली विधि (Burial Method) द्वारा उनका किस प्रकार निष्पादन करते हैं? इसका वर्णन करें। (B.T.E. 1999)
24. ठोस अपशिष्ट के निस्तारण की किसी एक विधि पर सविस्तार टिप्पणी लिखो—
    (i) सेनिटरी लैण्ड फिल (Sanitary land fill)
    (ii) खाद बनाना (Composting) (B.T.E. 2000)
25. ठोस अपशिष्ट प्रदूषण पर टिप्पणी लिखो। (B.T.E. 2001)
26. औद्योगिक अपशिष्ट से पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों का वर्णन करो। (B.T.E. 2002)
27. (i) ठोस अपशिष्ट प्रबन्ध में निहित विभिन्न चरणों को स्पष्ट करें।
    (ii) ठोस अपशिष्ट को कम्पोस्ट बनाकर तथा भू-भराव द्वारा निपटान करने पर एक विस्तृत टिप्पणी लिखें। (B.T.E. 2003)
28. नगर के ठोस अपशिष्ट के निपटान की विभिन्न सम्भव विधियों की सूची दें व किसी एक विधि के गुण-दोष बतायें। (B.T.E. 2006, 12, 15)
29. प्लास्टिक-अपशिष्ट व इसके प्रबन्धन पर टिप्पणी लिखें। (B.T.E. 2007, 15, 17)
30. घरेलू अपशिष्ट जाल के भौतिक, रासायनिक तथा जैविक (Biological) लक्षण (Characteristics) लिखें। (B.T.E. 2013)
31. औद्योगिक एवं जोखिम पूर्ण ठोस अपशिष्ट के प्रबन्धन की विवेचना कीजिए। (B.T.E. 2013, 17)
32. जैव चिकित्सालय (Bio-Pesticides) अपशिष्ट के प्रबन्धन पर एक टिप्पणी लिखिए। (B.T.E. 2013, 16)
33. औद्योगिक उत्स्राव (effluent) का पुन: प्रयोग सुरक्षित निपटान पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए। (B.T.E. 2016)

❑

अध्याय 5

ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution)

परिचय (Introduction)

आज संसार में इलेक्ट्रॉनिक उपकरण और अन्य वस्तुएँ प्रमुख स्थान ले चुकी हैं। टेलीविजन, रेडियो, स्टीरियो, टेपरिकॉर्डर, वाहनों आदि से एक आवाज निकलती है। यही आवाज कहलाती है जो कि मनुष्य के द्वारा बिना किसी परेशानी के ग्रहण कर ली जाती है। यह Sound सहन करने की क्षमता मनुष्यों में स्थान के अनुसार बदलती रहती है। एक मनुष्य कम आवाज के संगीत या ध्वनि को ग्रहण करने की क्षमता रखता है जबकि अन्य व्यक्ति अधिक ध्वनि को सुनना पसन्द कर सकता है। इसी प्रकार ग्रामीण व शहरी क्षेत्र में भी इसका प्रभाव पड़ता है। ग्रामीण व्यक्ति शहर के कल-कारखानों की मशीनों से उत्पन्न ध्वनि, वाहनों, लाउडस्पीकरों आदि की ध्वनियों से परेशान हो जाता है क्योंकि ग्रामवासी इस प्रकार की ध्वनियों के आदी (Habitual) नहीं होते हैं। अत: ऐसी ध्वनि (Sound) जो मानव में परेशानी, चिड़चिड़ाहट, सिरदर्द आदि पैदा करे या खीझ (Annoyance) पैदा करती है, शोर (Noise) कहलाता है। Noise शब्द की उत्पत्ति लैटिन शब्द Nausea से हुई है। विभिन्न मतों के अनुसार शोर को निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया है—

Harrel के अनुसार—शोर एक ऐसी न चाहने वाली ध्वनि है, जिससे सुस्ती बढ़ती है और कुछ औद्योगिक दशाओं में इससे बहरापन भी होता है।

(Noise is an unwanted sound which increases fatigue and under some industrial conditions it causes deafness.)

J. Tiffin के अनुसार—शोर एक ऐसी ध्वनि है जो व्यक्तिगत तौर पर डिसएग्रीएबल है और व्यक्तिगत तौर पर यह साधारण कार्यों में बाधा डालती है।

(Noise is a sound which is disagreeable for the individual and which disturbs the normal way of an individual.)

Vitels के अनुसार—शोर असुहावनी/न चाहने वाली ध्वनि है।

(Noise is unpleasant sound/unwanted sound.)

अस्पताल और विद्यालयों के आस-पास तीव्र ध्वनि करना या शोर उत्पन्न करना मना है, ताकि सम्बन्धित व्यक्ति शोर के बुरे प्रभाव से बच सके। अत: हम कह सकते हैं कि ध्वनि का आवश्यकता से अधिक होना या अवांछित ध्वनि शोर है।

वैसे वातावरणीय कारकों का एक निश्चित मात्रा से बढ़ जाना जो मानव एवं पदार्थों को नष्ट करता है, प्रदूषण कहलाता है। यह वातावरणीय कारक चाहे जल हो, ध्वनि हो, मृदा हो, जनसंख्या हो या हवा आदि। इसी प्रकार ध्वनि की तीव्रता एवं इसका समय बढ़ जाना, मानव के स्वास्थ्य पर, उसके क्रिया-कलापों पर तथा मानसिक योग्यताओं पर बुरा प्रभाव डालती है, जिसे ध्वनि या शोर प्रदूषण कहते हैं।

शोर की इकाइयाँ (Units of Noise)—मनुष्य द्वारा आसानी से ग्रहण की गयी ध्वनि, या मनुष्य की संवेदनशीलता (ध्वनि के प्रति) के आधार पर ध्वनि की इकाई को एक इलेक्ट्रॉनिक उपकरण के डायल पर बेल (Bel) या डेसीबेल (Decibel) में पढ़ लिया जाता है। वायु माध्यम में ध्वनि का संचरण संपीडन (Compression) व विरलन (Rare) तरंगों के रूप में होता है। ये तरंगें गोलाकार होती हैं। इन तरंगों की आवृत्ति 20 से 20,000 कम्पन प्रति सेकण्ड के बीच होने पर मनुष्य द्वारा ध्वनि ग्रहण कर ली जाती है।

इस प्रकार शोर की तीव्रता को बेल या डेसीबेल में आँका जाता है। डेसीबेल, बेल का दसवाँ भाग है।

$$1 \text{ Decibel} = \frac{1}{10} \text{ Bel.}$$

Scanned by CamScanner

किसी भी बिन्दु पर Decibel या Bel में शोर को नापने के लिए, उस बिन्दु पर संपीडन तथा विरलन से उत्पन्न दाब परिवर्तन मापा जाना आवश्यक है। यदि यह दाब परिवर्तन P है तो शोर की तीव्रता Decibel में निम्न सूत्र से ज्ञात की जायेगी—

$$\text{Sound Level in Decibel} = 20 \log_{10}\left(\frac{P_x}{P_0}\right)$$

यहां पर P_0 का सन्दर्भ दाब मान $2\times10^{-5}\ N/m^2$ है। P_0 ही थ्रैशोल्ड कहलाता है जो वह न्यूनतम दाब है जिसको सामान्य व्यक्ति सुन सकता है। यह दबाव हवा में सम्पीडन व विरलन के दबाव का अन्तर है। जबकि P_x स्रोत से उत्पन्न ध्वनि का दाबान्तर है।

शोर की मात्रा (Noise Dose)—शोर की तीव्रता अधिक मात्र होने से ही मनुष्य को परेशानी नहीं होती, बल्कि यह शोर कितने समय से मनुष्य के द्वारा सुना जा रहा है। कम तीव्रता का शोर भी यदि अधिक समय तक निरन्तर सुना जाये, तो उससे कानों की संवेदनशीलता कम हो जाती है। अतः मनुष्य के द्वारा कितना शोर कितने समय तक सुना जाये यह निश्चित करना पड़ेगा, ताकि निश्चित समय से अधिक समय होने पर उसमें इससे बुरे प्रभाव न पड़े। अतः एक ऐसी निश्चित तीव्रता का शोर उस निश्चित समय तक उत्पन्न किया जाये, जिसके अधिक समय तक रहने से मनुष्य को हानि हो सकती है, को Noise Dose कहते है।

स्तर (Level)		मात्रा समय सीमा (Dose time limit)
90	—	8 hours
93	—	4 hours
100	—	48 minutes
110	—	4·8 minutes
120	—	28·8 seconds
130	—	2·88 seconds

मानव कान की सीमा (Range of Human Ear)—मनुष्य 20 से 20,000 आवृत्ति तक की Sound को सुन सकता है। परन्तु यह सीमा, उम्र तथा अन्य कारकों से कम भी हो सकती है। 20 हर्ट्ज से कम आवृत्ति को Infra Sound या Sub Sonic Sound भी कहते हैं। इस ध्वनि की तरंगदैर्ध्य लगभग 15 मीटर या अधिक होने के कारण यह बड़े-बड़े भवनों एवं अवरोधों को भेद (Penetrate) देती है। इस ध्वनि को उत्पन्न करने के स्रोत Powerful Aircraft Engines, Volcanic Eruptions, Earthquakes, Tornadoes, Intense storms तथा अन्य दूसरे मौसम-सम्बन्धी स्रोत है। Infra sound मनुष्य के लिए अत्यधिक हानिकारक होती है।

ध्वनि प्रदूषण के स्रोत (Sources of Noise Pollution)

ध्वनि प्रदूषण के स्रोतों का वर्गीकरण हम कई प्रकार से कर सकते हैं। एक प्रकार के वर्गीकरण के अनुसार यह दो प्रकार का होता है—

1. प्राकृतिक स्रोत
2. कृत्रिम स्रोत

प्राकृतिक स्रोत (Natural Sources)—ज्वालामुखी का विस्फोट, बादलों की गर्जन, उल्का पिण्डों का गिरना, भूकम्प द्वारा भवनों का गिरना, समुद्री लहरों का कोलाहल आदि प्राकृतिक स्रोतों के उदाहरण है।

कृत्रिम स्रोत (Artificial Sources)—ये स्रोत स्वयं मानव द्वारा पैदा किये जाते हैं। इन्हें हम पुनः दो भागों में बाँट सकते हैं—

(i) **अचल स्रोत (Stationary Sources)**—इसके अन्तर्गत कारखाने, रेडियो, टेलीविजन, पत्थर के उद्योग, सीमेंट उद्योग, मिलों के साइरन, लाउडस्पीकर, स्टीरियो, विवाह उत्सव आदि आते हैं। इनमें शोर उत्पन्न करने वाले कारक अपने स्थान पर रहकर ही शोर को चारो ओर प्रसारित करते है।

(ii) **सचल स्रोत (Dynamic Sources)**—इन स्रोतों में रेलगाड़ियाँ, मोटरगाड़ियाँ, स्कूटर, मोटरसाइकिल, वायुयान आदि सम्मिलित है। इसके अलावा बच्चों के खेलने से, उत्सवों का शोर, चुनाव प्रचार का शोर एवं फेरी लगाने वालों का शोर भी सचल स्रोत है। विस्फोट, पटाखों, फायरिंग का शोर भी प्रदूषण उत्पन्न करता है।

एक अन्य वर्गीकरण के अनुसार ध्वनि प्रदूषण को हम निम्न प्रकार भी वर्गीकृत कर सकते हैं—

1. औद्योगिक शोर
2. सामुदायिक शोर
3. यातायात का शोर

1. औद्योगिक शोर (Industrial Noise)—बड़े-बड़े लोहे के उद्योगो, सीमेंट एवं पत्थर के उद्योगों में अत्यधिक शोर उत्पन्न होता है जिससे वहाँ के कर्मचारियों की श्रवण शक्ति कमजोर पड़ जाती है। इसके अन्तर्गत सभी प्रकार के उद्योगों का शोर आता है।

2. सामुदायिक शोर (Community Noise)—समाज में रहकर मनुष्य विभिन्न प्रकार के क्रिया-कलापों के द्वारा शोर उत्पन्न करता है जैसे विवाह आदि अवसरों पर ऊँची आवाजों में लाउडस्पीकर बजाना, बैण्ड बजाना, कथा भागवत आदि लाउडस्पीकर पर बजाना, मेलों और हाटों मे शोरगुल होना आदि।

3. यातायात का शोर (Traffic Noise)—सभी प्रकार के यातायात के साधनों से शोर उत्पन्न होता है। इनमें प्रमुख वायुयान, हैलीकाप्टर, रॉकेट, रेलगाडी, बस, ट्रक, स्कूटर आदि है।

ध्वनि के प्रकार (Types of Sound)

ध्वनि (Sound) मधुर, कर्णप्रिय, स्वीकार्य, कर्कश, अस्वीकार्य, कष्टकर किसी भी प्रकार की हो सकती है परन्तु शोर (Noise) केवल कर्कश एवं अस्वीकार्य ध्वनि को ही कहते है।

ध्वनि निम्न प्रकार की होती है—

1. भाषण (Speech)
2. संगीत (Music)
3. शोरगुल (Noise)

1. भाषण (Speech)—किसी शान्त वातावरण में एक व्यक्ति द्वारा बोले गये वक्तव्य को अन्य व्यक्तियों द्वारा सुना जाता है। वक्ता को ऊँची आवाज में बोलना पडता है। उसके नजदीक बैठने वाले को वक्ता की आवाज कर्कश प्रतीत होगी और थोड़ा दूर बैठने वाले व्यक्ति को वही आवाज कर्णप्रिय लगती है।

2. संगीत (Music)—संगीत की ध्वनि वैसे तो मधुर एवं कर्णप्रिय मानी जाती है। धीमी आवाज में यह ध्वनि प्रायः रुचिकर ही प्रतीत होती है परन्तु परीक्षार्थी एवं बीमार व्यक्ति के लिये धीमा संगीत भी असह्य हो जाता है। अतः उनके लिये यह शोर कहलायेगा। तेज संगीत जैसे पॉप म्यूजिक, रॉक एन रोल आदि की ऊँची आवाज भी युवा वर्ग को बहुत रास आती है। परन्तु वृद्ध एवं बड़ों को प्रायः यह अच्छी नहीं लगती।

3. शोरगुल (Noise)—इसके अन्तर्गत कई स्रोतों से उत्पन्न मिला-जुला शोर आता है जैसे मेलों में उत्पन्न शोर, शहरों की व्यस्त सड़कों पर वाहनों एवं मनुष्यों का शोर, उद्योगों में विभिन्न कल-पुर्जों का शोर आदि।

Scanned by CamScanner

अन्य वर्गीकरण (Other Classification)

शोर को निम्न प्रकार से भी वर्गीकृत किया जा सकता है—

1. **घरेलू शोर** (Household Noise)—बच्चों का चिल्लाना, रेडियो-टेलीविजन का शोर, फर्नीचर खिसकाना, जोर-जोर से बात करना, आदि घरेलू शोर के अन्तर्गत आता है।

2. **सामुदायिक शोर** (Community Noise)—विभिन्न उत्सवों पर लाउडस्पीकर का शोर, वाहनों का शोर, औजार एवं मेलों का शोर, नाच एवं गाने का शोर, अन्य सामुदायिक क्रिया-कलापों का शोर आदि इसके अन्तर्गत आता है।

3. **औद्योगिक शोर** (Industrial Noise)—विभिन्न उद्योगों में मशीनों का शोर, सायरन बजने का शोर आदि औद्योगिक शोर कहलाता है।

4. **सतत् शोर** (Continuous Noise)—कुछ शोर लगातार काफी समय तक होता रहता है, जैसे—मेलों का शोर, मशीनों का शोर, यातायात का शोर आदि। मनुष्य इस शोर को सहन करने का आदी हो जाता है। यह अधिक घातक नहीं होता।

5. **असतत् शोर** (Occasional Noise)—यह शोर अचानक कम समय के लिए उत्पन्न होता है जैसे बम विस्फोट का शोर, घर में किसी बर्तन का गिरना, सायरन बजाना आदि कभी-कभी उत्पन्न होने वाले शोर है। ये अचानक चौंकाने वाले तथा कष्टदायक होते है।

ध्वनि के लक्षण (Characteristics of Sound)

1. **आवृत्ति** (Frequency)—कान के परदे पर आवर्त रूप से उच्च दाब एवं निम्न दाब पड़ते हैं तो क्रमागत उच्च दाबों के बीच समयान्तराल को आवर्तकाल कहते हैं। आवर्तकाल में व्युत्क्रम (Reciprocal) को आवृति कहते है। इसे चक्र प्रति सेकण्ड (cycle per second) या हर्ट्ज (Hertz को संक्षेप में Hz) कहते हैं। जिस आवृत्ति परिसर (Range of frequency) की ध्वनि मनुष्य सुन सकता है, उसे आवृत्ति बैण्ड (Frequency Band) कहते है। मनुष्य न्यूनतम 20 हर्ट्ज तथा अधिकतम 20000 हर्ट्ज की ध्वनि सुन सकता है। इस आवृत्ति बैण्ड की चौड़ाई 11980 हर्ट्ज है।

2. **आयाम** (Amplitude)—किसी ध्वनि तरंग मे माध्यम के कणों का किसी एक दिशा मे अधिकतम विस्थापन ध्वनि तरंग का आयाम कहलाता है। किसी तरंग की तीव्रता आयाम के वर्ग के समानुपाती होती है। ध्वनि की आवृत्ति का आयाम से कोई सम्बन्ध नही होता।

ध्वनि की प्रबलता (Loudness of Sound)

यह आवश्यक नही है कि यदि किसी ध्वनि की तीव्रता अधिक है तो वह हमें तेज सुनाई देगी। वास्तव में किसी ध्वनि का तेज अथवा धीमा सुनाई देना ध्वनि की तीव्रता के अतिरिक्त हमारे कान की संवेदनशीलता (Sensitivity) पर भी निर्भर करता है। कान की संवेदनशीलता भिन्न-भिन्न आवृत्तियों की ध्वनि के लिये भिन्न-भिन्न होती है। ध्वनि की तीव्रता एक निश्चित राशि है जिसका हमारे कान की संवेदनशीलता से कोई सम्बन्ध नहीं है परन्तु ध्वनि की प्रबलता वह संवेदना है जिसके आधार पर हम किसी ध्वनि को धीमी अथवा तेज कह सकते हैं। ध्वनि की तीव्रता बढ़ने पर उसकी प्रबलता भी बढ़ती है परन्तु उस अनुपात में नहीं बढ़ती जिसमें तीव्रता बढ़ती है। अन्य शब्दों में ध्वनि की प्रबलता और तीव्रता में रेखीय सम्बन्ध नहीं होता। भिन्न-भिन्न मनुष्य के कानों की संवेदनशीलता, भिन्न-भिन्न होती है। यही कारण है कि जो ध्वनि एक मनुष्य को मधुर एवं आनन्ददायक लगती है वही दूसरे के लिये तेज (loud) एवं अप्रिय हो सकती है।

तालिका—5.1
भारतीय मानक संस्थापन द्वारा निर्धारित मानक

क्रम संख्या	स्रोत	ध्वनि स्तर डेसीबेल में	सघनता	मानव प्रतिक्रियां
1.	ज्वालामुखी विस्फोट	190		
2.	रॉकेट इन्जन	180	कष्टप्रद	पीड़ा दायक
3.	तोप बन्दूक	160		पशुओं के लिये घातक
4.	जेट इन्जन उड़ते समय	150		
5.	हाइड्रोलिक प्रेस	130		
6.	रॉक संगीत, डिस्को, लाउडस्पीकर, हॉर्न	120		
7.	निर्माण (3 मी०) जेट इन्जन (600 मी० ऊँचा)	110	असुविधाजनक	बहुत अधिक परेशानी एवं चिड़चिड़ापन, नाड़ी तन्त्र में परिवर्तन
8.	चिल्लाना, पंचप्रेस, धारा	100		
9.	भारी ट्रक, शोर युक्त मशीनें, कारें	90	बहुत ऊँची आवाज	परेशानी एवं चिड़-चिड़ाना
10.	स्वचालित वाहन	80	मध्यम आवाज	नीद भंग होना
11.	टी० वी०, रेडियो	70		
12.	बातचीत	60	शान्ति	
13.	पावर स्टेशन (15 मी० दूर)	50	बिल्कुल शान्ति	
14.	बेडरूम	40		
15.	फुसफुसाहट	30		
16.	रेडियो प्रसारण केन्द्र	20		
17.	पत्तियो का खड़-खड़ाना	10	श्रव्यता प्रारम्भ	
18.	शान्त स्थल	0		

तालिका—5.2
कुछ भारतीय शहरों में ध्वनि का स्तर

क्रम संख्या	शहर	क्षेत्रों में ध्वनि की तीव्रता (डेसीबेल)			
		औद्योगिक	व्यापारिक	आवासीय	संवेदशनशील
1.	निर्धारित मानक	75	65	55	50
2.	कोलकाता	83	94	89	89
3.	मुम्बई	83	83	78	78
4.	चेन्नई	78	89	72	67
5.	बैंगलुरु	89	83	72	72
6.	हैदराबाद	72	83	72	78
7.	कानपुर	72	89	67	61
8.	जयपुर	72	89	72	72
9.	दिल्ली	65	70	60	67

Scanned by CamScanner

शोर से प्रभाव (Effects Due to Noise)

शोर से निम्नलिखित प्रभाव होते है—

1. सतत् शोर के कारण सुनने की क्षमता कम होती है तथा सिर में नियमित (Constant) दर्द रहने लगता है।

2. शोर की सीमा 90 डेसीबेल से ऊपर होने पर त्वचा में अचानक उत्तेजना उत्पन्न होती है। Stomach की पेशियाँ संकीर्ण हो जाती हैं तथा मनुष्य के स्वभाव में उत्तेजना और क्रोध उत्पन्न हो जाती है।

3. सतत् शोर के कारण अल्सर (Ulcers), हृद्य रोग, उच्च रक्त दाब आदि उत्पन्न हो जाते हैं।

4. अधिक शोर के कारण एड्रिनल हार्मोनों का उत्पादन अत्यधिक मात्रा में होने लगता है।

5. शोर से आत्मविश्वास, कार्यक्षमता कम हो जाती है तथा एकाग्र ध्यान नहीं रह पाता है।

6. उच्च तीव्रता के शोर से भवनों की दीवारों एवं छतों में दरारें आ जाती हैं।

7. वाहनों से सड़को आदि पर अत्यधिक शोर होने से सड़क दुर्घटनाएँ होती हैं।

8. अत्यधिक शोर रहने से Speech Interference (भाषण देने में बाधा) होता है।

9. शोर की अधिकता (एयरपोर्ट के पास) के कारण अनिद्रा का रोग लग जाता है, जो अन्य रोगों को और बढ़ावा देता है।

10. मनोरंजन हेतु संप्रेषण (Communication) माध्यम असुविधाजनक हो जाता है।

ध्वनि के प्रभाव (Effects of Noise)

ध्वनि के प्रभावों को हम पाँच भागों में विभाजित कर सकते है—

1. बातचीत में व्यवधान (Interference with speech)
2. श्रवण क्षमता में ह्रास (Loss of hearing)
3. शारीरिक प्रभाव (Physiological effects)
4. मनोवैज्ञानिक प्रभाव (Phychological effects)
5. पदार्थों पर प्रभाव (Effects on materials)

बातचीत में व्यवधान (Interference with speech)—जब हम किसी व्यक्ति की बात सुन रहे हों और उसी समय कहीं पर शोर उत्पन्न होने लगे जिसकी प्रबलता सामने वाले व्यक्ति की ध्वनि की प्रबलता से अधिक हो तब हमें उस व्यक्ति की आवाज सुनाई नहीं देगी। उदाहरणार्थ—यदि शोर का स्तर 100 डेसीबेल है तो 90 db की ध्वनि हमें सुनाई नहीं देगी, परन्तु कान पर इयर प्लग (ear plug) लगाकर यदि शोर का स्तर 78 db तक घटा दिया जाये तो हमें 90 db की ध्वनि सुनाई देती रहेगी

उक्त परिणाम निम्न तालिका 5.3 द्वारा स्पष्ट है।

तालिका—5.3

आवृत्ति समूह	ध्वनि स्तर	इयर प्लग के साथ ध्वनि स्तर (db)
600–1200	107	88
1200–2400	99	74
2400–4800	96	71
औसत	101	78

दो व्यक्तियों के बीच की दूरी भी सुनाई देने वाली ध्वनि की प्रबलता को प्रभावित करती है जैसे दूर खड़े व्यक्ति की आवाज धीमी और नजदीक खड़े व्यक्ति की आवाज तीव्र सुनाई पड़ती है। अग्र तालिका में दूरी के सापेक्ष सुनाई देने वाली ध्वनि की तीव्रता दर्शायी गयी है।

तालिका—5.4
व्यक्तिगत बातचीत पर दूरी का प्रभाव

दूरी फीट में	0.5	2	4	6	12
सामान्य आवाज (db) में	71	59	53	49	43
ऊँची आवाज (db) में	77	65	59	55	49

श्रवण क्षमता में ह्रास (Loss of hearing)—उच्च स्तर का अचानक शोर किसी भी व्यक्ति को कुछ समय के लिये बहरा बना देता है। उच्च प्रबलता की ध्वनि कान के पर्दों को भी फाड़ सकती है। उद्योगों से सतत् एवं असतत् दोनों प्रकार की तीव्र ध्वनि निकलती रहती है। यह उनमें काम करने वाले कर्मचारियों के कान की कोशिकाओं को हानि पहुँचाती है। मनुष्य 90 डेसीबेल से अधिक प्रबलता की ध्वनि को सहन नहीं कर पाता है। दोनों कानों मे विभिन्न प्रबलता की ध्वनि पड़ने से भी श्रवण क्षमता घटती है। उच्च शोर में रहने का समय भी श्रवण शक्ति के ह्रास को प्रभावित करता है। अधिक समय तक उच्च शोर में रहना खतरनाक होता है।

प्राय: शोर उत्पन्न करने वाले उद्योगों मे काम करने वाले कर्मचारियो मे 25% बहरेपन के शिकार हो जाते है। ट्रैफिक पुलिस मैन, फेरी करने वाले, शोर मे रहने वाले व्यक्ति आदि भी बहरेपन के शिकार हो जाते हैं। सुरक्षा एवं स्वास्थ्य अधिनियम के अनुसार श्रमिकों और कर्मचारियो को 90 db के शोर में 8 घण्टे प्रतिदिन से अधिक काम नहीं करना चाहिये क्योंकि अधिक समय तक काम करने से कार्यक्षमता घटती है और बहरापन आ जाता है। कार्य के घण्टों के अतिरिक्त 15 db ध्वनि स्तर से अधिक ध्वनि के स्तर वाले वातावरण में नहीं रहना चाहिये। निम्न तालिका में विभिन्न ध्वनि स्तरों की ध्वनि के मनुष्य पर प्रभाव दिखाये गये है।

तालिका—5.5

शोर का स्तर db में	प्रभाव
0	श्रवण योग्यता की दहलीज।
60	बेचैनी, मानसिक तनाव एवं अनिद्रा।
80	सिरदर्द, थकान, तनाव, कार्य क्षमता में ह्रास।
85	बहरापन या श्रवण दोष।
90	कान के आन्तरिक भाग को क्षति।
100	हृद्य की धड़कन बढ़ना, रक्त वाहिनियों का सिकुड़ना, रक्त संचार में कमी, थकान, उच्च रक्त चाप, चिड़-चिड़ापन, गैस्ट्रिक अल्सर।
110	चमड़ी में उत्तेजना, तनाव, थकान।
120	केन्द्रीय तंत्रिका तन्त्र पर प्रभाव, मस्तिष्क एवं नर्वकोशिका पर घातक प्रभाव, स्मृति ह्रास, महिलाओं मे प्रसवपीड़ा बढ़ना, गर्भस्थ शिशु पर बुरे प्रभाव।
130	उल्टी [illegible]ना, चक्कर आना, सिर दर्द आदि।
140	कान में दर्द, अस्थाई बहरापन, देर तक सुनने में पागलपन की स्थिति।
150	त्वचा मे जलन।
160	अधिक समय तक रहने में स्थायी बहरापन।
190	थोड़े समय में ही स्थायी बहरापन।

Scanned by CamScanner

शारीरिक प्रभाव (Physiological Effects)—मनुष्य की श्रवण शक्ति में कमी भी शारीरिक प्रभाव के अन्तर्गत आती है परन्तु शोर का यह मुख्य प्रभाव है। इसके अतिरिक्त भी शोर शरीर में कई प्रकार से प्रभाव उत्पन्न करता है जिनका संक्षिप्त परिचय तालिका 5.5 में भी देखा जा सकता है। इन शारीरिक प्रभावों को हम निम्न उपशीर्षकों के अन्तर्गत पढ़ेंगे—

1. **हृदय रोग एवं उच्च रक्त चाप**—अचानक उत्पन्न शोर रक्त के छोटे संग्राहकों को सिकोड़ देता है जिससे उनमें रक्त संचार कम हो जाता है। शरीर के विभिन्न भागों में कम रक्त पहुँचने के कारण उसमें थकान आ जाती है। रक्त वाहनियाँ सिकुड़ जाती हैं, भोजन नली एवं आँतों में सिकुड़न उत्पन्न होने लगती है। तेज ध्वनि से आँखों की पुतलियाँ चौड़ी हो जाती हैं। 90 से 100 डेसीबेल की ध्वनि से हृदय की धड़कन बढ़ जाती है जिससे उच्च रक्त चाप बढ़ जाता है और चिड़चिड़ापन आ जाता है।

2. **केन्द्रीय तन्त्रिका संस्थापन पर प्रभाव**—यह केन्द्रीय तन्त्रिका संस्थापन को प्रभावित करता है जिससे पेप्टिक अल्सर तथा दमा जैसे रोगों की तकलीफ बढ़ जाती है। तीव्र ध्वनि के कारण उत्पन्न तनाव तन्त्रिका तन्त्र के क्रिया-कलापों को प्रभावित करता है जिससे उच्च रक्त चाप बढ़ जाता है। 120 डेसीबेल का शोर मस्तिष्क एवं नर्वसेल (Neuron) के लिये घातक हो जाता है। इससे स्मरण शक्ति घट जाती है।

3. **अन्तःस्रावी ग्रन्थियों पर प्रभाव**—शोर के कारण मनुष्य की अन्तःस्रावी ग्रन्थियों में हारमोन्स का प्रभाव अनियमित हो जाता है जिससे मानसिक तनाव बढ़ता है। स्वभाव चिड़चिड़ा हो जाता है। दिल का दौरा भी पड़ सकता है।

4. **गर्भवती महिलाओं पर प्रभाव**—120 db से उच्च ध्वनि गर्भवती महिलाओं के लिये घातक होती है। उनमें प्रसव पीड़ा बढ़ जाती है, मानसिक तनाव बढ़ जाता है, गर्भस्थ शिशु पर भी तीव्र ध्वनि का प्रभाव घातक होता है। उसका स्वस्थ विकास नहीं हो पाता। उसमें जन्मजात रोग उत्पन्न हो जाते है।

इसके अतिरिक्त तेज ध्वनि के कारण, जीवन शक्ति में कमी, त्वचा का पीला पड़ जाना, गैस के निकास में व्यवधान, मुर्गी फार्मों में अण्डा उत्पादन में गिरावट आदि अनेकों लक्षण परिलक्षित होने लगे हैं।

मनोवैज्ञानिक प्रभाव (Psychological Effects)—उच्च शोर में ज्यादा देर तक रहने से मनुष्य एवं पशुओं के व्यवहार में परिवर्तन आ जाता है। इसका मुख्य कारण उनका तीव्र ध्वनि के कारण ग्रस्त रहना है। मानसिक तनाव के कारण उसे नींद कम आती है। उसका किसी काम में मन नहीं लगता है, उसका स्वभाव अधिक उग्र एवं हिंसात्मक प्रवृत्ति का हो जाता है। मानसिक तनाव से मुक्ति के लिये मनुष्य मदिरा, सिगरेट, नींद की गोलियाँ एवं नशीली दवाइयों का सेवन करना प्रारम्भ कर देता है जो उसके लिये और भी अधिक हानिकारक होता है। अत्यधिक मानसिक तनाव से मनुष्य विक्षिप्त हो जाता है।

पदार्थों पर प्रभाव (Effects on Materials)—वैसे तो ध्वनि का अचेतन पदार्थों पर कोई प्रभाव नहीं होता परन्तु सुपर सोनिक ध्वनियाँ एवं बड़े-बड़े विस्फोटों की ध्वनि से पुराने एवं जीर्ण भवन गिर सकते है, खिड़कियों के शीशे टूट जाते है, दीवारों एवं छतों में दरारें पड़ जाती है जिससे आर्थिक हानि भी हो जाती है।

प्रतिध्वनि (Echo)

प्रतिध्वनि तरंगों के परावर्तन (Reflection) का प्रमुख उदाहरण है जबकि किसी ध्वनि स्रोत से निकलने वाली ध्वनि तरंगें दूर स्थित मकानों, पहाड़ियों अथवा कुएँ के पानी में तल से टकराकर परावर्तित होती हैं। तब वही ध्वनि पुनः सुनाई पड़ती है, उसे ही प्रतिध्वनि कहते हैं। प्रतिध्वनि की तीव्रता मूल ध्वनि की तीव्रता से कुछ कम होती है क्योंकि मूलध्वनि की तीव्रता का कुछ अंश वस्तु द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है। अवशोषण की मात्रा वस्तु के पदार्थ पर निर्भर करती है। विभिन्न महत्वपूर्ण भवनों में प्रतिध्वनि पर नियन्त्रण करना आवश्यक है जिससे बातचीत में व्यवधान उत्पन्न न हो अथवा मूल ध्वनि ठीक प्रकार से सुनायी दे सके।

प्रतिध्वनि की रोकथाम (Control of Echo)

भवनों में प्रतिध्वनि की रोकथाम के लिए भवनों की सतह इस प्रकार बनाई जानी चाहिए, जिससे ध्वनि तरंगें सतह से टकराकर वापस न लौटें। इसके लिए सतह के ऊपर ऐसे पदार्थ लगाये जाते हैं जिनकी ध्वनि अवशोषण क्षमता अधिक हो।

इसके अतिरिक्त सतह ऐसे छिद्रित व असमान होनी चाहिए जिससे ध्वनि का परिवर्तन एक दिशा में न होकर विभिन्न दिशाओं में हो।

विभिन्न पदार्थों की ध्वनि अवशोषण क्षमता अलग-अलग होती है। इसे अवशोषण गुणांक द्वारा ज्ञात किया जाता है।

$$\text{अवशोषण गुणांक} = \frac{\text{तल पर अवशोषित ध्वनि ऊर्जा}}{\text{तल पर आधारित कुल ध्वनि ऊर्जा}}$$

अवशोषण गुणांक का मान पदार्थ की प्रकृति तथा ध्वनि की आवृत्ति पर निर्भर करता है।

विभिन्न पदार्थों के अवशोषण गुणांक—

पदार्थ	अवशोषण गुणांक
खुली खिड़की	1·00
ईंटों की दीवार	0·03
ईंटों की दीवार (पेन्ट सहित)	0·016
कारपेट	0·25
पर्दें, लकड़ी का फर्नीचर	0·15

ध्वनि प्रदूषण का मापन (Measurement of Sound Pollution)

ध्वनि प्रदूषण को बेल या डेसीबेल में मापा जाता है। इसे मापने के लिए सामान्यतः साउन्ड लेवल मीटर (Sound Level Meter) का प्रयोग किया जाता है जिसका विवरण निम्न है—

साउन्ड लेवल मीटर (Sound Level Meter)—यह एक साधारण उपकरण है जो ध्वनि लेवल (Sound Level) ज्ञात करने के लिये प्रयोग किया जाता है। इस उपकरण में निम्न भाग होते हैं—

(a) **माइक्रोफोन (Microphone)**—इसका कार्य Sound wave Pressure को ग्रहण करना तथा उस दाब परिवर्तन को Electrovoltage में परिवर्तित करना है।

(b) **अटेन्यूटर (Attenuator)**—इसका कार्य Electric Voltage को परिवर्धित (Amplify) करना है। Amplification उस Level को तय करता है, जिस Level पर Sound measure की जाती है।

(c) **इनपुट एम्पलीफायर (Input Amplifier)**—इसका कार्य Electrical signal को साधारण Level तक उठाना है।

(d) **वेइंग नेटवर्क (Weighing Network)**—इसका कार्य उपकरण के सन्दर्भ में ध्वनि की विद्युत आवृत्ति में संशोधन करना है।

(e) **आउटपुट एम्पलीफायर (Output Amplifier)**—इसका कार्य विद्युत के रूप में परिवर्तित ध्वनि के निकास की आवृत्ति को Amplify करना है (चित्र 5.1)।

ध्वनि लेवल मीटर के द्वारा ध्वनि प्राप्त होती है। यह ध्वनि का वर्ग माध्य मूल मान (Root Mean Square Value, RMS) होता है। आजकल I.E.C.-123 व I.E.C.-179 का प्रयोग बहुतायत से हो रहा है। I.E.C.-123 का उपयोग साधारण कार्यों में ध्वनि की तीव्रता मापने के काम आता है। यह सस्ता एवं बनावट में मजबूत होता है परन्तु I.E.C.-179 की अपेक्षा अधिक परिशुद्ध नहीं होता है। I.E.C.-179 का प्रयोग विशेष कार्यों में ध्वनि मापन में किया जाता है (चित्र 5.1 A)।

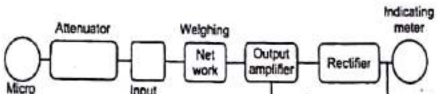

Scanned by CamScanner

ध्वनि प्रदूषण मापन हेतु ध्वनि स्तर मीटर (Sound Level Meter) के अलावा अन्य भी कई उपकरण उपयोग में लाये जाते हैं। जैसे पैन रिकॉर्डर (Pen Recorder), औसत ध्वनिमापी (Average Noise Meter), दोलन आलेखी (Oscillographs), ध्वनि विश्लेषक (Noise Analyser), स्पेक्ट्रम विश्लेषक (Spectrum Analyser), कैसिट रिकॉर्डर (Cassette Recorder) और चुम्बकीय टेप रिकॉर्डर (Magnetic Tape Recorder) आदि हैं।

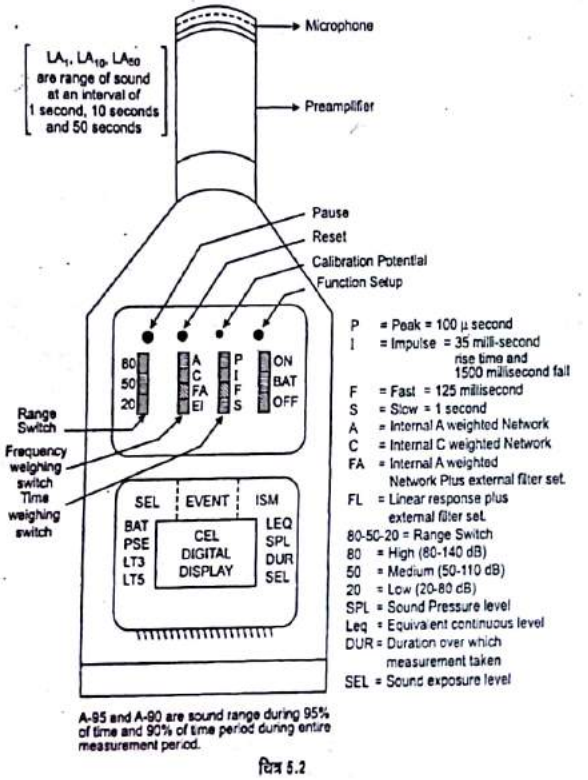

चित्र 5.2

ध्वनि प्रदूषण की रोकथाम (Control of Noise Pollution)

ध्वनि प्रदूषण नियन्त्रण निम्नलिखित तीन घटकों पर किया जाता है—

1. स्रोत पर नियन्त्रण
2. माध्यम पर नियन्त्रण
3. प्राप्तकर्ता पर नियन्त्रण

स्रोत पर नियन्त्रण (Control at Source)—यह ध्वनि प्रदूषण रोकने की उत्तम तकनीक है। इसके लिये ध्वनि उत्पन्न करने वाले मशीन की सम्पूर्ण जानकारी आवश्यक है। शोर होने के कारणों की समुचित जानकारी होनी चाहिये। आज मशीनों में उत्पन्न शोर कम करने के लिये अनेक प्रकार के साइलेंसर विकसित किये गये हैं। उद्योगों, मोटर वाहनों आदि में इनका प्रयोग किया जाता है। घर्षण से उत्पन्न शोर को उनका लुब्रीकेशन करके कम किया जा सकता है। उद्योगों में मशीनों के साथ-साथ ध्वनि शोषक पदार्थों का प्रयोग किया जाता है जिससे स्रोत से पूरी ध्वनि उत्पन्न होती है परन्तु उसे प्राप्तकर्ता तक पहुँचने से पहले ही ध्वनि शोषक पदार्थों द्वारा कम कर दिया जाता है जिससे ध्वनि की तीव्रता में काफी कमी हो जाती है। शोर कम करने वाले पदार्थों में राख के साँचे, शीशा, ईंटें, प्लास्टर आदि आते हैं। निम्न तालिका 5.6 में ध्वनि शोषक पदार्थों द्वारा ध्वनि संचरण में कमी दर्शायी गयी है।

तालिका—5.6
ध्वनि शोषक पदार्थ एवं ध्वनि स्तर में कमी

क्रम संख्या	ध्वनि शोषक पदार्थ	ध्वनि संचरण में कमी db में
1.	राख का ब्लॉक (10 सेमी० मोटा)	25
2.	शीशा (0·625 सेमी० मोटा)	50
3.	राख का ब्लॉक (10 सेमी० मोटा तथा एक ओर प्लास्टर)	42
4.	राख का ब्लॉक (10 सेमी० मोटा एवं दोनों ओर प्लास्टर)	45
5.	ईंटें (10 सेमी० मोटी)	45
6.	दो राख के ब्लॉक (प्रत्येक 7·5 सेमी० मोटा तथा दोनों ओर प्लास्टर एवं समान वायु अन्तराल द्वारा विभाजित)	55

माध्यम पर नियन्त्रण (Control at medium)—ध्वनि के संचरण पथ (transmission path) को बदल कर ऐसी दिशा में मोड़ दिया जाता है जिससे यह प्राप्तकर्ता तक न पहुँच सके। इसे निम्न विधियों द्वारा किया जाता है—

1. **स्थिति** (Location)—इसमें स्रोत और प्राप्तकर्ता के बीच की दूरी बढ़ा दी जाती है। चूँकि स्रोत से ध्वनि सभी दिशाओं में समान रूप से संचरित नहीं होती, अतः स्रोत एवं प्राप्तकर्ता के सापेक्ष विन्यास में परिवर्तन करके ध्वनि प्रबलता कम की जा सकती है।

2. **भवन विन्यास** (Building Layout)—भवन का विन्यास इस प्रकार होना चाहिये कि भवन के कमरों का शोर न तो बाहर जा सके और न ही बाहर का शोर अन्दर आ सके।

3. **दिशा में परिवर्तन** (Deflection in Direction)—स्रोत से उत्पन्न ध्वनि की दिशा परिवर्तित करने हेतु मार्ग में बड़े-बड़े अवरोध (Barriers) खड़े कर दिये जाते है। ध्वनि इनसे टकराकर प्राप्तकर्ता से विपरीत दिशा में मुड़ जाती है।

4. **अवशोषण** (Absorption)—यह एक प्रभावी तकनीक है। इसमें शोर उत्पन्न करने वाली मशीनों को एक कमरे में रखा जाता है तथा उनकी दीवारों, फर्शों एवं छतों में ध्वनि शोषक पदार्थ प्रयोग किये जाते हैं, ये ध्वनि को अवशोषित कर लेते हैं जिससे कमरे के बाहर शोर नहीं जाता है। कुछ फर्शों पर ध्वनि शोषक कालीने बिछायी जाती हैं। ये कालीनें दीवार एवं छत पर भी लगायी जा सकती है।

5. **मशीनों का समायोजन** (Adjustment of Machines)—मशीनों के उचित समायोजन से भी बहुत-सा शोर कम किया जा सकता है।

6. **मफलर का प्रयोग** (Use of Mufflers)—यदि ध्वनि स्रोतों को ऊनी मफलरों से ढक दिया जाये तो स्रोत से उत्पन्न ध्वनि का काफी बड़ा भाग इनके द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है और प्राप्तकर्ता तक काफी कम ध्वनि पहुँचती है। कानों को भी मफलर से ढक कर तीव्रता कम कर सकते हैं।

Scanned by CamScanner

प्राप्तकर्त्ता पर नियन्त्रण (Control at Receiver)—प्राप्तकर्त्ता पर नियन्त्रण उपकरण लगाकर भी ध्वनि स्तर में कमी लायी जा सकती है। प्राप्तकर्त्ता पर नियन्त्रण की अग्र विधियाँ है—

1. रक्षात्मक यन्त्रों द्वारा (By Protective Equipments)—तेज शोर से बचने के लिये कानों पर प्लग, मफलर, ध्वनिरोधी हेलमेट तथा मशीन वाले कमरे में छोटा-सा आवरण बनाकर इसके दुष्प्रभावों से बचा जा सकता है। अतः उद्योगों में कार्यरत कर्मचारियों को ध्वनिरोधी यन्त्र उपलब्ध कराये जाने चाहिये।

2. अनुमन्य शोर अवधि (Permissible Noise Period)—भिन्न-भिन्न प्रबलता की ध्वनि में रहने की एक सीमा निर्धारित की गयी है। इससे अधिक समय तक उसमें रहने पर घातक प्रभाव हो सकते हैं। अतः उद्योगपतियों द्वारा श्रमिकों की कार्य अवधि भारतीय मानक संस्थान द्वारा निर्धारित समयावधि के अनुरूप ही लागू करनी चाहिये ताकि श्रमिकों पर इसका बुरा प्रभाव न पड़ सके। निम्न तालिका 5.7 में ध्वनि स्तर एवं कार्य करने की समयावधि दिखाई गई है।

तालिका—5.7
ध्वनि स्तर एवं कार्य अवधि

क्रम संख्या	ध्वनि स्तर db में	कार्य अवधि घण्टों में
1.	90	8
2.	92	6
3.	95	4
4.	97	3
5.	100	2
6.	102	1·5
7.	105	1
8.	110	0·5
9.	115	0·25

(c) लोगों को शिक्षित करके—बड़े-बड़े औद्योगिक नगरों जैसे मुंबई, कोलकाता, दिल्ली, चेन्नई, कानपुर आदि जहाँ ध्वनि प्रदूषण की समस्या काफी गम्भीर है वहाँ पर रेडियो, टी॰ वी॰, अखबार आदि के माध्यम से शोर रोकने एवं कम उत्पन्न करने हेतु जागरूक करके ध्वनि प्रदूषण पर नियन्त्रण किया जा सकता है।

इस दिशा में निम्न कार्य किये जा सकते हैं—

(i) नगरपालिका एवं महापालिका को ये आदेश दिया जाये कि वे भारी ट्रकों एवं वाहनों को आवासीय क्षेत्रों में से होकर न गुजरने दें।

(ii) नगर एवं ग्राम नियोजन विभाग, प्रत्येक नगर में एक "मॉनीटर स्टेशन" स्थापित करें, जो ध्वनि के आँकड़े प्रतिदिन नोट करता रहे तथा ध्वनि उच्च होने पर उसे रोकने का प्रयास करें।

(iii) भवन में शौचालय, स्टोर, सीढ़ी कक्ष व स्नानागार अधिक ध्वनि वाले हिस्से की तरफ बनाये जाये।

(iv) सड़कों एवं रेलवे ट्रैकों के साथ वृक्ष लाइनों में दोनों ओर (घनी पत्तियों वाले) लगाये जाने का प्रावधान करना चाहिए।

(v) रेलवे लाइनें, राजमार्ग तथा अन्य सड़कें आवासीय एवं व्यापारिक क्षेत्रों से दूर बनाई जायें। यदि आवश्यक हो तों इन्हें लिंक रोड से जोड़ा जाये।

(vi) यदि नवीन हवाई अड्डा बनाना हो तो उसे नगर से पर्याप्त दूर बनाना चाहिए तथा आबादी युक्त क्षेत्रों से विमानों का उड़ना या उतरना बचाया जाना चाहिए।

(vii) भवन के सामने वृक्ष अवश्य लगाने का प्रावधान किया जाना चाहिये।

(viii) सरकार को शोर प्रदूषण नियन्त्रण एक्ट (Noise Pollution Control Act) बनाना चाहिए तथा प्रत्येक नगर की शोर नियंत्रक आचार संहिता होनी चाहिए। अनावश्यक एवं गैर-कानूनी ध्वनि को दण्डनीय अपराध घोषित किया जाना चाहिए।

उद्योगों से शोर नियन्त्रण (Noise Control from Industry)

उद्योगों से उत्पन्न होने वाला शोर कारीगरों एवं मनुष्यों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। अतः इसे नियन्त्रित करना आवश्यक है। इसका नियंत्रण निम्न सुझावों को अपनाकर किया जा सकता है—

1. नियोजन व पर्यावरण प्राधिकरण के बीच आपसी सहयोग से (Co-operation between Planners and Environmental Authorities)—प्रत्येक शहर में पर्यावरण प्राधिकरण स्थापित है, जिसमें Ecology व Allied Science के विशेषज्ञ होते हैं। इन विशेषज्ञों एवं नगर नियोजक के बीच अच्छा सहयोग हो तो शोर की सीमा को काफी हद तक नियन्त्रित किया जा सकता है। जब भी शहर का विकास नियोजक को करना हो तो उसके द्वारा विकसित योजनाओं को लागू करने से पूर्व पर्यावरण प्राधिकरण से अनुमोदन करा लेना चाहिए क्योंकि नियोजक रेलवे लाइनों व ठोस अवशेषों से निपटारे के लिए स्थानों, आदि की स्थितियाँ, शहर के क्षेत्र में निश्चित करेगा, ताकि शहर का Out-look अच्छा हो, परन्तु पर्यावरण प्राधिकरण पर्यावरण को स्वच्छ रखने की दृष्टि से इनमें आवश्यक परिवर्तन कर सही स्थिति का अनुमोदन करेगा।

2. शोर मुक्त क्षेत्र व शोर को कम करने के क्षेत्र (Noise Free Zones and Noise Abatement Zones)—शोर को सरल व आसानी से नियन्त्रित करने के लिए शोरमुक्त क्षेत्र बनाने चाहिए या इन क्षेत्रों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। ऐसे क्षेत्रों में किसी प्रकार का शोर ट्रैफिक, निर्माण कार्य, लाउडस्पीकर या मनोरंजन के लिए भीड़ से उत्पन्न हो अथवा अन्य कारणों से, को रोकना चाहिए। ऐसे क्षेत्रों में स्कूल, कॉलेज, अस्पताल या पूजा स्थानों को बनाया जाना चाहिए।

जिन क्षेत्रों में अत्यधिक शोर होता है, वहाँ शोर में कमी लाने के उपाय करने चाहिए तथा ऐसे क्षेत्रों का आकार धीरे-धीरे कम करते जाना चाहिए।

3. ध्वनि रोधन अभिकल्पन (Acoustic Design Criteria)—उद्योगों में ध्वनि को नियंत्रित करने हेतु ध्वनिरोधक अभिकल्पन को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। उद्योगों में प्रबन्धकों व अन्य अधिकारियों के कक्षों को खोखली दीवार से बनाना चाहिए। खिड़कियों व दरवाजों की दरारों से निकलकर आने वाले शोर को कम करने के लिए दरारों को बहुत ही कम चौड़ा या बिल्कुल बन्द होना चाहिए। फर्श रबर का, P.V.C. का या लिनोनियम की शीट का होना चाहिए। कक्षों में अच्छी

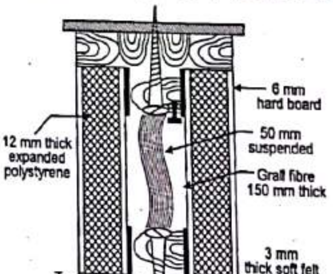

VERTICAL SECTION OF
SOUND PROOF PARTITION WALL
चित्र 5.3 ध्वनिरोधक विभाजक दीवार

Scanned by CamScanner

ध्वनिरोधी सामग्री का प्रयोग करना चाहिए। यह सामग्री रेशेदार व संरंध्रयुक्त होनी चाहिए। Glass Wall में 80% तक Air born Sound Energy को रोका जा सकता है। माध्यम में ध्वनि दो रूपों में होती है।

(a) **एयर बोर्न** (Air Born)—ऐसी ध्वनि हवा में होती है। यही ध्वनि शोर का मुख्य रूप है।

(b) **इम्पेक्ट नॉयज** (Impact Noise)—यह ध्वनि पदार्थ (Material) पर खुरचने या चलने से होती है। इस ध्वनि को कम करने के लिए ध्वनि सामग्री रोधक की पर्त लगा दी जाती है।

4. **स्रोत से शोर कम करना** (Reduction of Noise at Source)—उद्योगों मे मुख्यत: शोर, मशीनों के चलन से होता है। जब मशीनें अधिक लम्बे समय तक प्रयोग में लाई जाती है तो टूट-फूट के कारण या पुर्जों (Parts) के घिस जाने के कारण, मशीनों से शोर पैदा होता है। यदि मशीन अधिक शोर उत्पन्न कर रही है तो ऐसी मशीनों को बेचकर नई मशीन क्रय कर

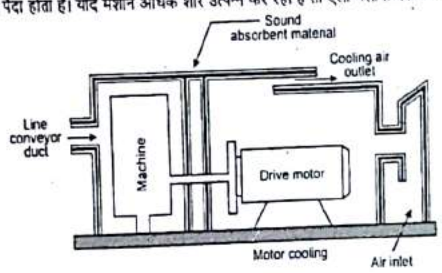

चित्र 5.4–मशीनी शोर में Blanketing

लेनी चाहिए। कार्य समाप्त होते ही मशीनों का चालन बन्द कर देना चाहिए। यदि मशीन अधिक कीमती है तथा दशा ठीक है परन्तु शोर अधिक पैदा कर रही है तो ऐसी मशीन के ऊपर ध्वनि अवशोषक पदार्थ की एक पर्त देकर cover कर प्रयोग मे लानी चाहिए (चित्र 5.4)।

मशीनों की समय-समय पर मरम्मत, सफाई, स्नेहन क्रिया (Lubricating) तथा टूटे हुए भाग बदलते रहने चाहिए।

5. **शोर स्रोत का छानना** (Screen the noise source)—किसी मशीन द्वारा उत्पन्न किया जा रहा शोर तथा कारीगरों के बीच अगर एक Noise Absorbing Material का परदा (Screen) लगा दिया जाये तो ध्वनि ऊर्जा (Noise Energy) की काफी कम तीव्रता कारीगरों के पास आयेगी। अत: यदि मशीन खुले में आवासीय भवनो के पास रखी गई है, जिससे Noise पैदा हो रहा है तो इस मशीन को ऐसी जगह स्थापित करना चाहिए जहाँ बीच में अवरोधक के रूप में दीवार आये अन्यथा Rubberised Material की परदा दीवारों या Antivibration pads का प्रयोग कर ध्वनि संचरण को रोका जा सकता है।

6. **रक्षकों का प्रयोग करके** (Using car defenders)—प्राय: कारीगर सीधे ही शोर पैदा करने वाली मशीनों पर कार्य करता है जिसके बीच Sound Absorbing Material का परदा या मशीन को Sound Absorbing Material से Cover करना सम्भव ना हो तो ऐसी स्थिति मे कारीगर लगातार शोरयुक्त वातावरण मे कार्य करता रहेगा, जिससे उसकी कर्णक्षमता, सुनने की क्षमता एवं मानसिक स्थिति प्रभावित होगी। इस स्थिति में शोर का प्रभाव शरीर पर कम हो, इसके लिए Ear plugs का प्रयोग किया जाना चाहिए।

7. **कम्पन एवं अवमंदन अलग करके** (Vibration Isolation and Damping)—कुछ मशीनों से शोर उनके कम्पन से पैदा होता है। ऐसी मशीनों को एक ही Chamber में स्थापित किया जाना चाहिए तथा Resilient Mountings का Support प्रदान करना चाहिए। प्राय: Resilient Mounting के लिए Spring का ही Support दिया जाता है।

कभी-कभी मशीनो से उतना शोर उत्पन्न नही होता जितना कि उनके द्वारा तैयार किये गये उत्पादों (Product) को Bins में Collect करने से या उत्पाद (Product) का Bins तक आने में long metal chute में स्लाइड करने से होता है। ऐसी स्थिति में Bins या long chute को धातु की न बनाकर, Cement, Plastic या Rubber की बनाने की संस्तुति की जानी चाहिए या Bins और Chute मे इस प्रकार की material की coating की जाये जिससे ध्वनि पैदा करने वाले उत्पाद उससे चिपक जायें।

8. **साइलैन्सर** (Silencers)—कई बार मशीनो के किसी विशेष भाग से ही शोर पैदा होता है, तथा इस शोर को उपरोक्त विधियों से नियन्त्रित करना मुश्किल होता है। ऐसी स्थिति में Silencers का प्रयोग किया जाना उचित रहता है। Reactive व Absorptive दोनो प्रकार के Silencers में, Absorptive Silencers का अधिक प्रयोग किया जाता है।

Absorptive Type के Silencers मे प्राय: एक पाइप होता है, जिसकी आन्तरिक सतह पर Acoustically Absorbent Material जैसे खनिज वूल को ग्लास फाइबर की Lining की जाती है। Silencers का प्रयोग गैस टरबाइन, पंखों, ब्लोअरों, हवाई जहाजों एव वाहनो आदि मे किया जाता है।

भारतीय मानक संस्थान द्वारा निर्धारित मानक (I.S.I. Standards for Noise Pollution)

भारतीय मानक संस्थान ने ध्वनि प्रदूषण रोकने हेतु कुछ दिशा निर्देश दिये है, जो निम्न प्रकार है—

(a) **हवाई अड्डों एवं मार्गों की स्थिति**—यदि नया हवाई अड्डा बनाया जाये तो उसे नगर से पर्याप्त दूरी पर बनाना चाहिये तथा आबादी वाले क्षेत्रों से विमानों को उड़ाने या उतारने से बचाना चाहिये।

(b) **रेलवे स्टेशनों तथा राजमार्गों की स्थिति**—रेलवे स्टेशन नगर के बाहरी भाग में बनाया जाना चाहिए ताकि नगर का कम से कम भाग शोर से प्रभावित हो। इसी प्रकार राजमार्ग नगर के बाहर से ले जाया जाये या फिर बाईपास बनाकर यातायात नगर के बाहर, से गुजारा जाये। सड़को के किनारे वृक्षारोपण अवश्य किया जाना चाहिये।

(c) **औद्योगिक क्षेत्रों की स्थिति**—औद्योगिक क्षेत्र आवासीय एवं व्यापारिक क्षेत्रो से दूर के बाहरी भाग में विकसित किये जाने चाहिये। औद्योगिक संस्थानों की संरचना ध्वनिरोधक होनी चाहिये।

औद्योगिक क्षेत्रों की परियोजना एवं स्थापना करते समय सामान्य वायु की दिशा का ध्यान अवश्य रखना चाहिये। हवा आने की दिशा के विपरीत दिशा में स्थापित औद्योगिक क्षेत्र ध्वनि प्रदूषण को काफी सीमा तक कम कर देता है।

भारतीय दण्ड संहिता की धारा 290 के अनुसार शोर से सार्वजनिक कष्ट होने पर शोर पैदा करने वाले को 200 रुपये जुर्माने का प्रावधान है जो ध्वनि प्रदूषण रोकने हेतु पर्याप्त नहीं है। इसके लिये वर्तमान परिस्थितियो के अनुकूल एक अधिनियम बनाया जाना चाहिये। इंग्लैण्ड, हॉलैण्ड, संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, आस्ट्रिया, डेनमार्क आदि देशों में पहले से ही ध्वनि प्रदूषण रोकने के लिये कठोर नियम बना रखे हैं। भारत मे इस दिशा में कठोर कानून बनाने एवं उसे कठोरता से लागू करने की आवश्यकता है।

प्रश्नावली

1. ध्वनि प्रदूषण से आप क्या समझते हैं? सविस्तार वर्णन कीजिये।
2. ध्वनि प्रदूषण का अर्थ समझाइये। इसे किस प्रकार नापते हैं? ध्वनि प्रदूषण के कारण क्या व्यावसायिक क्षतियाँ पहुँचती है?
3. ध्वनि प्रदूषण के स्रोत कौन-कौन से हैं? संक्षेप मे वर्णन कीजिये। **(B.T.E. 2012)**
4. ध्वनि के विभिन्न प्रभावो को समझाइये।
   "भारतीय मानक पटल की ध्वनि समस्या" पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये।
5. ध्वनि मापक यन्त्र का सचित्र, संक्षिप्त वर्णन कीजिये।
6. शोर नियन्त्रण हेतु नवीन सुझाव दीजिये।
7. मानव जाति पर कोलाहल प्रदूषण से पड़ने वाले विभिन्न प्रभावों का वर्णन कीजिये। **(B.T.E. 2003, 12)**
8. ध्वनि एवं कोलाहल मे अन्तर स्पष्ट कीजिए। **(B.T.E. 2006)**
9. भारत में ध्वनि प्रदूषण की वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डालिये।

Scanned by CamScanner

10. कोलाहल प्रदूषण किसे कहते है? भारी संयन्त्रों वाले उद्योगों में इसे कैसे नियन्त्रित किया जाता है? स्पष्ट कीजिये। (B.T.E. 2006)
11. ध्वनि प्रदूषण की रोकथाम विधियों की समीक्षा कीजिये। (B.T.E. 2008, 09)
12. शोर की परिभाषा दीजिये। ध्वनि की गुणवत्ता किन-किन कारकों पर निर्भर करती है?
13. ध्वनि तीव्रता की इकाई क्या होती है? ध्वनि के बहरेपन की सीमा बताइये।
14. औद्योगिक शोर किन-किन कारणों से होता है?
15. निम्न को स्पष्ट कीजिये—
    (i) ध्वनि (ii) शोर (iii) ध्वनि की तीव्रता
    (iv) पिच (v) ध्वनि मापन की इकाई
    (vi) पुनरावृत्ति समय। (B.T.E. 2010)
16. शारीरिक, मानसिक एवं भौतिक स्तर पर ध्वनि का क्या प्रभाव पड़ता है?
17. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिये—
    (i) ध्वनि प्रदूषण (B.T.E. 1999)
    (ii) श्रवण अवसीमा (Threshold of Hearing) (B.T.E. 2001)
18. निम्नलिखित में अन्तर बताइये—
    (i) घर के अन्दर का शोर एवं बाहरी शोर (B.T.E. 2000)
    (ii) ध्वनि तीव्रता (Loudness) एवं खीझ (Annoyance) (B.T.E. 2000)
    (iii) वायुप्रेरक ध्वनि (Airborne) एवं संरचनाप्रेरक ध्वनि शोर (Structure borne noise) (B.T.E. 2000)
    (iv) बेल एवं डेसीबेल (B.T.E. 2002)
    (v) वायु प्रदूषण एवं ध्वनि प्रदूषण (B.T.E. 2002)
19. ध्वनि प्रदूषण (The Noise Pollution) (Regulation and Control) (Amendment) Rules 2002 के महत्वपूर्ण प्रावधानों को अंकित कीजिए। (B.T.E. 2013, 17)
20. कोलाहल प्रदूषण के स्रोत, उसके प्रभाव तथा नियन्त्रण की विवेचना करें। (BTE-2014, 16)
21. कोलाहल प्रदूषण के स्रोत पर नियन्त्रित करने हेतु क्या उपाय किये जा सकते है, स्पष्ट करें? (BTE-2015)

□

अध्याय **6**

पर्यावरणीय कानून (Environmental Legislation)

परिचय (Introduction)

शहरीकरण, औद्योगीकरण एवं अन्य सामाजिक गतिविधियों के चलते पृथ्वी के नैसर्गिक सौन्दर्य आज के समय में नष्ट होते स्पष्ट दिखाई पड़ रहे हैं। ताजमहल का कान्तिहीन होते जाना, अम्ल वर्षा, मौसम चक्र परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग, स्वच्छ जल अनुपलब्धता, ओजोन पर्त का क्षय होते जाना, वायुमण्डलीय घटकों में परिवर्तन हो जाना इन सबसे सभी भिज्ञ हैं। इनसे जनित बीमारियों से मानव समुदाय को दो-चार होना पड़ रहा है। इस संकट का आभास ग्लोबल स्तर पर सन् 1972 में स्वीडन के स्टॉक होम में 144 देशों ने भाग लेकर पर्यावरण में होने वाले परिवर्तन पर गहरी चिन्ता व्यक्त करते हुए एक संगोष्ठी आयोजित की। हालांकि इस मुद्दे पर उस समय एक आम सहमति को गम्भीरता से नहीं लिया गया है। लेकिन फिर भी इस पर विचार करते हुए 1989 में Pans में सात विकसित देशों ने हिस्सा लिया और इस पर्यावरण मुद्दे पर रुख थोड़ा गम्भीर हुआ ज्ञात होता है कि विकसित देशों में कम जनसंख्या होने के बावजूद उनसे उत्सर्जित व्यर्थ से असर मात्र उन्हीं देशों पर नहीं बल्कि पूरी पृथ्वी पर इसका बुरा प्रभाव पड़ा है। वे इसी ग्लोबल प्रभाव की चपेट में आ रहे है। ये देश आज G-8 (जी-आठ) के रूप में संयुक्त होकर भूमण्डलीय पर्यावरण में सुधार हेतु पहल कर रहे हैं। ग्लोबल स्तर से पूर्व प्रत्येक देश ने अपने-अपने कुछ नियम, कायदे, कानून विधिक रूप से पर्यावरण की सुरक्षा एवं संरक्षण हेतु बनाये ताकि पर्यावरण को दूषित होने से रोका जा सके एवं इसकी स्वच्छता बचाई व बरकरार रखी जा सके। ऐसा करने के लिये सभी देशों ने अपनी-अपनी रणनीति तैयार की। बहिस्राव उपचार संयन्त्रों हेतु आबकारी कर (Excise duty) में छूट, संसाधनों के दोहन न करने हेतु सुझाव देना आदि सब औपचारिक कानून बनाये गये।

प्रत्येक नागरिक को पृथ्वी पर संसाधनों के संरक्षण हेतु नियमों से अवगत कराया गया एवं इसकी बाध्यता पर जोर दिया गया। पर्यावरण कानून के लागू होने से स्वतन्त्र रूप से प्राकृतिक सौन्दर्य के नष्ट होने पर अंकुश जरूर लगा। परन्तु इस समस्या का तुरंत निदान का कारण न बनने से एवं सरकारी व्यवस्था के चलते सारे नियम शिथिल होते गये। इसके लिये देश के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह पर्यावरण विनष्टि को बचाये ताकि आने वाली पीढ़ी को इस संतुलित पर्यावरण का सुखद अहसास हो सके एवं धरोहर के रूप में हम उन्हें स्वच्छ वातावरण दे सकें।

पर्यावरण विधान (Environmental Legislation)

भारत में पर्यावरण संरक्षण का इतिहास बहुत पुराना है। हडप्पा संस्कृति पर्यावरण से ओत-प्रोत थी, तो वैदिक संस्कृति पर्यावरण-संरक्षण हेतु पर्याय बनी रही। भारतीय मनीषियों ने समूची प्रकृति ही क्या, सभी प्राकृतिक शक्तियों को देवता स्वरूप माना। ऊर्जा के स्रोत सूर्य को देवता माना तथा उसको 'सूर्य देवों भव' कहकर पुकारा। भारतीय संस्कृति में जल को भी देवता माना गया है। सरिताओं को जीवन दायिनी कहा गया है, इसीलिये प्राचीन संस्कृतियाँ सरिताओं के किनारे उपजीं और पनपी। भारतीय संस्कृति में केला, पीपल, तुलसी, बरगद, आम आदि पेड़ पौधों की पूजा की जाती रही है। मध्यकालीन एवं मुगलकालीन भारत में भी पर्यावरण प्रेम बना रहा। अंग्रेजों ने भारत में अपने आर्थिक लाभ के कारण पर्यावरण को नष्ट करने का कार्य प्रारम्भ किया। विनाशकारी दोहन नीति के कारण पारिस्थितिकीय असन्तुलन भारतीय पर्यावरण में ब्रिटिश काल में ही दिखने लगा था। स्वतन्त्र भारत के लोगों में पश्चिमी प्रभाव, औद्योगीकरण तथा जनसंख्या विस्फोट के परिणामस्वरूप तृष्णा जाग गई जिसने देश में विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों को जन्म दिया।

चित्र 6.1 : औद्योगिक वायु प्रदूषण द्वारा विनियमित हवा की गुणवत्ता कानून।

Scanned by CamScanner

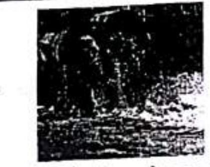

चित्र 6.2 : एक ठेठ तूफानी जल मुहाना, के अधीन पानी की गुणवत्ता कानून

चित्र 6.3 : नगर निगम के एक गड्ढे के अनुसार संचालित प्रबंधन कानून बर्बाद

स्वतन्त्र भारत में पर्यावरण नीतियाँ तथा कानून

भारतीय संविधान जिसे 1950 में लागू किया गया था परन्तु सीधे तौर पर पर्यावरण संरक्षण के प्रावधानों से नहीं जुड़ा था। सन् 1972 के स्टॉकहोम सम्मेलन ने भारत सरकार का ध्यान पर्यावरण संरक्षण की ओर खिंचा। सरकार ने 1976 में संविधान मे संशोधन कर दो महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद 48 ए तथा 51 ए (जी) जोड़े। अनुच्छेद 48 ए राज्य सरकार को निर्देश देता है कि वह पर्यावरण की सुरक्षा और उसमे सुधार सुनिश्चित करे, तथा देश के वनो तथा वन्यजीवन की रक्षा करे। और सभी जीवधारियों के प्रति दयालु रहे। स्वतन्त्रता के पश्चात् बढ़ते औद्योगिकरण, शहरीकरण तथा जनसंख्या वृद्धि से पर्यावरण की गुणवत्ता में निरन्तर कमी आती गई। पर्यावरण की गुणवत्ता की इस कमी में प्रभावी नियन्त्रण व प्रदूषण के परिप्रेक्ष्य में सरकार ने समय-समय पर अनेक कानून व नियम बनाए। इनमें से अधिकांश का मुख्य आधार प्रदूषाण नियंत्रण व निवारण था।

पर्यावरणीय कानून व नियम निम्नलिखित है-

- जलु प्रदूषण सम्बन्धी-कानून
- रीवर बोडर्स एक्ट, 1956
- जल (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1977
- पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986
- वायु प्रदूषण सम्बन्धी कानून
- फैक्ट्रीज एक्ट, 1948
- इनफ्लेमेबल्स सबस्टा < सेज एक्ट, 1952
- वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम, 1981
- पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986
- भूमि प्रदूषण सम्बन्धी कानून
- फैक्ट्रीज एक्ट, 1948
- इण्डस्ट्रीज (डेवलपमेंट एंड रेगुलेशन) अधिनियम, 1951
- इनसेक्टीसाइडस एक्ट, 1968
- अर्बन लैण्ड (सीलिंग एण्ड रेगयुलेशन) एक्ट, 1976
- वन तथा वन्यजीव सम्बन्धी कानून
- फोरेस्टस कंजरवेशन एक्ट, 1960

- वाइल्ड लाईफ प्रोटेक्शन एक्ट, 1972
- फोरेस्ट (कनजरवेशन) एक्ट, 1980
- वाइल्ड लाईफ (प्रोटेक्शन) एक्ट, 1995
- जैव-विविधता अधिनियम, 2002

भारत मे पर्यावरण सम्बन्धित उपरोक्त कानूनो का निर्माण उस समय किया. गया था जब पर्यावरण प्रदूषण देश में इतना व्यापक नहीं था। अत: इनमे से अधिकांश कानून अपनी उपयोगिता खो चुके हैं। परन्तु अभी भी कुछ कानून व नियम पर्यावरण संरक्षण में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं।

प्रदूषण नियन्त्रण कानून (Pollution Control Legislation)

भारत में प्रदूषण को रोकने के लिये निम्न कानून बनाए गए हैं—

(1) जल प्रदूषण अधिनियम 1974 [The Water (Prevention and Control of Pollution) Amendment Act]

इस कानून के अन्तर्गत पेयजल की सुरक्षितता का संरक्षण तथा प्रदूषण को रोकना एवं नियन्त्रण पर विशेष रूप से बल दिया गया है। इस अधिनियम के अन्तर्गत जल स्रोतों मे होने वाले प्रदूषणकारी तत्वों पर निगरानी रखना, उनको खोजना, उन्हें दूर करने के उपाय निकालना तथा उद्योगो व नगरपालिकाओं से उत्सर्जित प्रदूषित जल को छोड़ने वालों के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही करना आदि प्रावधान वर्णित हैं। इस अधिनियम के अन्तर्गत राष्ट्रीय स्तर पर केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड का गठन किया गया।

(i) यह अधिनियम जल प्रदूषण की रोकथाम एवं नियन्त्रण के लिए बनाया गया है। इसके माध्यम से बोर्डों (Boards) का गठन किया गया है जो जल प्रदूषण की रोकथाम व नियन्त्रण करते हैं। अधिनियम द्वारा बोर्डों को अधिकार एवं कर्त्तव्य प्रदत्त किए गए है।

(ii) प्रदूषण से तात्पर्य जल का अशुद्धिकरण अथवा उसमें भौतिक, रासायनिक या जीवविज्ञानी परिवर्तन करना है अथवा सीवेज (Sewage) या कोई अन्य औद्योगिक उत्सर्ग, जो कि सर्वसाधारण के लिए जल को हानिकारक अथवा किसी निजी, व्यावसायिक, औद्योगिक कृषि या अन्य किसी न्याय संगत कार्य के लिए अयोग्य या पशु-पक्षी अथवा जलीय वनस्पति के लिए अयोग्य कर दे।

(iii) केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड में एक पूर्णकालिक सभापति, 5 नामित अधिकारी, 5 नामित प्रान्तीय बोर्ड अधिकारी, 3 नामित गैर सरकारी व्यक्ति, 2 नामित औद्योगिक इकाई अधिकारी तथा पूर्णकालिक सचिव होगा।

(iv) प्रान्तीय बोर्ड मे एक पूर्णकालिक सभापति, 5 प्रान्तीय सरकार नामित अधिकारी, 5 प्रान्तीय सरकार की स्वायतधारी संस्थाओं से नामित व्यक्ति, 3 नामित गैर सरकारी व्यक्ति, औद्योगिक इकाईयों के नामित व्यक्ति तथा पूर्णकालिक सचिव होगा।

(v) सदस्यों का कार्यकाल 3 वर्ष का है।

(vi) बोर्ड की मीटिंग 3 महीने में कम से कम एक बार होगी।

(vii) बोर्ड विशेष कार्यों के लिए कमेटी बना सकता है जिसमें बोर्ड तथा बाह्य दोनों प्रकार के व्यक्ति सदस्य हो सकते हैं।

(viii) केन्द्रीय बोर्ड के कार्य—

(a) केन्द्रीय सरकार को जल प्रदूषण सम्बन्धी सलाह देना।
(b) जल प्रदूषण विषेषज्ञों की ट्रेनिंग।
(c) जल प्रदूषण को रोकने हेतु राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम चलाना।
(d) सम्बन्धित तकनीकी व सांख्यिकी सूचना एकत्र, एकीकृत एव प्रकाशित करना।
(e) प्रान्तीय बोर्डों के कार्यों का एकीकरण।
(f) प्रान्तीय बोर्डों को जल-प्रदूषण जाँच और शोध कार्य में सहायता प्रदान करना।

Scanned by CamScanner

(g) जल प्रदूषण सम्बन्धी जानकारी संचार माध्यमों द्वारा जन-साधारण को प्रदान करना।

(h) सरकार की सहायता से जल में मानक स्थापित करना तथा समय-समय पर उन्हें फिर से पुनरीक्षित करना।

(ix) प्रान्तीय बोर्ड के कार्य—

(a) प्रान्तीय सरकार के जल प्रदूषण रोकने के कार्यक्रम चलाना।

(b) जल उपचार के कारगर व सस्ते तरीके निकालना।

(c) सीवेज तथा उत्सर्गों का उपचार की दृष्टि से निरीक्षण करना।

(d) सीवेज तथा उत्सर्ग के उपयोगी प्रयोग ज्ञात करने के साथ-साथ इन्हें हटाने के उचित तरीके खोजना।

(e) जल प्रदूषण रोकने के लिए अनुसंधान कराना।

(f) प्रान्तीय सरकार को जल प्रदूषण से सम्बन्धी सलाह देना।

(g) जल प्रदूषण सम्बन्धी राज्य स्तर की सूचनायें एकत्रित, एकीकृत एवं प्रकाशित करना।

(h) जल प्रदूषण के मानक स्थापित एवं पुनरीक्षित करना।

(i) विशेषज्ञों की ट्रेनिंग में केन्द्रीय बोर्ड की सहायता करना।

(j) उपचार के मानक स्थापित करना।

(k) सरकार को उन उद्योगों की जानकारी देना जो हानिकारक उत्सर्ग बाहर छोड़ रहे हों।

(l) बोर्ड के सदस्य, अधिकारी या अधिकृत व्यक्ति किसी भी उद्योग का निरीक्षण कर सकते हैं।

(m) बोर्ड के सदस्य, अधिकारी या अधिकृत व्यक्ति भी उद्योग से उत्सर्ग जल का नमूना ले सकते हैं।

(n) किसी व्यक्ति को जानबूझकर कोई विषाक्त, प्रदूषित, नशीला पदार्थ किसी जल धारा में निर्गत करने का अधिकार नहीं है।

(o) कम्पनियों तथा सरकारी संस्थानों द्वारा नियमों का उल्लंघन करने पर दण्ड का प्रावधान है।

(p) नियमों का उल्लंघन करने पर तीन मास की सजा तथा 5 हजार रुपये तक जुर्माने का प्रावधान है।

इस अधिनियम के अन्तर्गत नियमों का उल्लंघन करने पर दण्ड (तीन माह की कैद) तथा पाँच हजार रुपये तक जुर्माने का प्रावधान है।

(2) वायु प्रदूषण अधिनियम (Air Pollution Act) 1981 तथा 1987 तक संशोधित

छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85) में पुनः पर्यावरण पर ध्यान दिया गया। इससे पहले 1972 में यूनाइटेड नेशन (United Nation) के मानव पर्यावरण पर हुए अधिवेशन में भारत ने भाग लिया था। 'वायु प्रदूषण' से तात्पर्य किसी ठोस, द्रव या गैसीय वस्तु से है जो वायुमण्डल में इतनी सान्द्रता से एकत्रित हो कि व्यक्तियों अथवा अन्य जीवित वस्तुओं के लिये हानिकारक या वनस्पति या सम्पदा या पर्यावरण के लिये हानिकारक हो।

(1) केन्द्रीय बोर्ड वायु प्रदूषण की रोकथाम के लिये जल प्रदूषण बोर्ड की रोकथाम के अनुसार ही कार्य करेगा।

(2) प्रान्तीय बोर्ड, केन्द्रीय बोर्ड के सहयोग से, औद्योगिक इकाइयां, मोटर गाड़ियों के लिये वांछित वायु गुणवत्ता का निर्धारण करेंगे, जो क्षेत्र आधारित होगी।

(3) प्रान्तीय सरकार प्रान्तीय बोर्ड की सलाह पर मोटर गाड़ियों के धुंए के मानक निर्धारित कर सकती है।

(4) इस अधिनियम में वायु प्रदूषण पैदा करने वाले उद्योगों को आवासीय क्षेत्र से बाहर बनाने के लिए min दूरी का निर्धारण, चिमनी की ऊंचाई का निर्धारण करना, क्षेत्रीयकरण करना, वायु प्रदूषण पैदा करने वाली औद्योगिक इकाइयों की मॉनिटरिंग करना, प्रदूषण नियन्त्रण की कारगर इकाइयों का Implementation किये जाने हेतु डिजाइन करना, पब्लिक को वायु प्रदूषण की रोकथाम हेतु टी० वी०, अखबार, आदि के माध्यम से चेतना जागृत करना है। इसके अतिरिक्त नियमों का उल्लंघन करने पर 6 वर्ष तक कैद तथा जुर्माने का प्रावधान है और कम्पनियों तथा [illegible] करने पर दण्ड का प्रावधान है।

(5) जल प्रदूषण नियन्त्रण के केन्द्रीय तथा प्रान्तीय बोर्ड वायु प्रदूषण नियन्त्रण कार्य भी करेंगे।

(6) केन्द्रीय बोर्ड का कार्य देश में वायु की गुणवत्ता अच्छी करना तथा वायु प्रदूषण की रोकथाम व नियन्त्रण करना है।

(7) प्रान्तीय बोर्ड भी तदनुसार कार्य करेंगे।

(8) प्रान्तीय सरकार किसी क्षेत्र को वायु नियन्त्रण क्षेत्र घोषित कर सकती है व प्रान्तीय बोर्ड की सलाह से इन क्षेत्रों में परिवर्तन भी कर सकती है।

(9) प्रान्तीय सरकार प्रान्तीय बोर्ड की सलाह पर किसी पदार्थ विशेष के किसी वायु प्रदूषण नियन्त्रण क्षेत्र में ज्वलन पर रोक लगा सकती है।

(10) प्रान्तीय सरकार प्रान्तीय बोर्ड की सलाह पर किसी वायु प्रदूषण नियन्त्रण क्षेत्र में किसी उपकरण विशेष के प्रयोग पर रोक लगा सकती है।

(11) प्रान्तीय बोर्ड निर्देश निर्गत कर सकते हैं।

(12) प्रान्तीय बोर्ड किसी वायु प्रदूषणकारी क्रिया-कलाप रोकने के लिए उचित न्यायालय में आवेदन कर सकते हैं।

(13) प्रान्तीय बोर्ड के सदस्य, अधिकारी या अधिकृत व्यक्ति किसी स्थान विशेष का निरीक्षण कर सकते है। उपकरण विशेष की जाँच कर सकते है तथा सूचना प्राप्त कर सकते हैं और नमूने एकत्र कर सकते है।

(14) कम्पनियों तथा सरकारी संस्थाओं द्वारा नियमों का उल्लघंन करने पर दण्ड का प्रावधान है।

(15) नियमों का उल्लघंन करने पर 6 वर्ष तक की सजा तथा जुर्माने का प्रावधान है।

(3) पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 (Environment Protection Act 1986)

5 जून से 16 जून, 1972 के मध्य स्टॉकहोम में मानव पर्यावरण पर विश्व सम्मेलन आयोजित हुआ तथा पर्यावरण संरक्षण विश्वस्तरीय मुद्दा बना। इस समस्या पर सभी विकसित देशों ने गहरा चिन्तन व मनन किया। भारतवर्ष ने पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 को अधिनियमित किया। इस अधिनियम को 23 मई, 1986 को राष्ट्रपति द्वारा अपने हस्ताक्षर द्वारा सहमति व स्वीकृति प्रदान की गई तथा 26 मई, 1986 के राजपत्र में यह प्रकाशित किया गया। धारा 1 (3) की अपेक्षानुसार अधिसूचना के पश्चात् 19 नवम्बर, 1986 को यह प्रवृत्त हुआ और तभी से यह अधिनियम पूरे भारत में लागू है।

इस अधिनियम के प्रमुख उद्देश्य अग्रांकित हैं—

(1) 'पर्यावरण प्रदूषक' से तात्पर्य किसी ठोस द्रव अथवा गैसीय पदार्थ से है जो इतनी सान्द्रता में हो कि पर्यावरण के लिये हानिकारक सिद्ध हो।

(2) पर्यावरण का संरक्षण करना तथा उसमें आवश्यक सुधार करना।

(3) मानव प्राणियों, जीवों, पादपों एवं सम्पत्तियों को वायु प्रदूषण के परिसंकट से बचाना।

(4) मानवीय पर्यावरण सुरक्षा व स्वास्थ्य को खतरा पैदा करने वालों के लिए निरोधात्मक दण्ड की व्यवस्था करना।

(I) इस अधिनियम में वर्णित मुख्य प्रावधान निम्नांकित हैं—

(1) पर्यावरण संरक्षण कार्य में प्रान्तीय सरकारों के कार्यों को नियमित करना।

(2) पर्यावरण गुणता के मानकों को निर्धारित करना।

(3) उन क्षेत्रों का निर्धारण करना जिनमें सुरक्षा उपायों के साथ विभिन्न औद्योगिक संस्थान स्थापित किये जा सकते हैं।

(4) पर्यावरण प्रदूषण के कारण होने वाली दुर्घटनाओं से बचाव के कारगर सुरक्षात्मक तरीके निर्धारित करना।

(5) घातक (Hazardous) सामग्री को उठाने-रखने की सुरक्षात्मक कार्यविधि का निर्धारण।

(6) पर्यावरण प्रदूषण की रोकथाम के लिये शीघ्र कार्य।

(7) पर्यावरण प्रदूषण शोध प्रयोगशालाओं का स्थापन या मान्यता प्रदान करना।

(8) मैनुअल, गाइड, बुक, कोड आदि को तैयार करना।

Scanned by CamScanner

(9) पर्यावरण प्रदूषण सम्बन्धी सूचना एकत्र करना एवं प्रकाशित करना।

(10) पर्यावरण संरक्षण सम्बन्धी अन्य समुचित कार्य करना।

(2) अधिनियम के अनुसार पर्यावरण प्रदूषक उद्योगों को रोकने का आदेश देने के लिए सरकार सक्षम है।

(3) इस अधिनियम में केन्द्रीय सरकार को निम्नलिखित के मानक स्थापित करने का अधिकार प्रदान किया है—

(i) वायु, जल एवं मृदा के मानक।

(ii) घातक पदार्थों को उठाने, रखने के नियम।

(iii) विभिन्न स्थानों पर उद्योग-धन्धे लगाने पर रोक।

(iv) दुर्घटना की रोकथाम की कार्य-प्रणाली के मानक।

(4) अधिनियम में सरकार को संस्थानों का निरीक्षण करने, नमूने लेने तथा उद्योग कार्य रोकने का अधिकार दिया गया है।

(5) इस अधिनियम में नियमों का उल्लंघन करने पर एक लाख तक जुर्माना व 5 वर्ष की कैद का प्रावधान है और कम्पनियों तथा सरकारी संस्थानों द्वारा नियमों का उल्लंघन करने पर दण्ड का प्रावधान है।

भयावह रसायनों के निर्माण, भण्डारण एवं आयात (संशोधन) नियम 2000

(Manufacture, Storage and Import of Hazardous Chemical Amendment Rules 2000)

यह नियम केन्द्र सरकार के गजट सं० S.O. 966 (E) दिनांक 27 नवम्बर, 1989 में प्रकाशित होने के दिन से ही पूरे देश में लागू हुआ। इस नियम का संशोधन (Amendment) vide S.O. 57 (E) दिनांक 19 नवम्बर, 2000 में किया गया। सबसे पहले यह नियम पर्यावरण संरक्षण अधिनियम (Environment Protection Act, E.P.A. 1986) के खण्ड 6, 8 व 25 के द्वारा जारी किया गया है। भयावह रसायनों का उपयोग करने वालों को संभावित दुर्घटनाओं की पहचान कर लेनी चाहिये और पर्याप्त सुरक्षा उपाय भी अपनाने चाहिये तथा इन रसायनों से प्रभावित होने वाले व्यक्तियों को समुचित जानकारी देनी चाहिये और भयावह रसायनों के पात्रों पर विशिष्ट सूचनाओं के लेबल लगा देने चाहिये। उद्योग में कार्य प्रारम्भ करने से पहले सुरक्षा रिपोर्ट प्रस्तुत करनी चाहिये। कार्य स्थल पर आकस्मिक योजनायें हमेशा तैयार तथा कार्यशील अवस्था में रखना और भयावह रसायनों के आयात के सभी अभिलेख तैयार रखने चाहिये।

भयावह अपशिष्ट (प्रबन्ध एवं हस्तगन) (संशोधन) नियम-2003

[The Hazardous Waste (Management and Handling (Amendment) Rules 2003]

(1) सबसे पहले यह नियम 'E.P.A. 1986' के अनुच्छेद 6, 8 एवं 25 के अन्तर्गत Hazardous Work (Management Handling) Rules 1989, vide S.O. 594 (E) दिनांक 28 जुलाई, 1989 में केन्द्र सरकार द्वारा प्रकाशित किया गया। यह नियम प्रकाशित होने की तिथि से लागू हो गये।

(2) पुन: Vide S.O. 24 (E) दिनांक 6 जनवरी, 2000 एवं Vide S.O. 593 (E) दिनांक 20.05.2003 द्वारा इसमें संशोधन किया गया।

(3) इस नियम में भयावह पदार्थों को किस प्रकार से उपयोग किया जाय और उनका सम्पन्न सुरक्षापूर्वक किस प्रकार किया जाय इसका विस्तृत वर्णन है।

(4) जो संस्था खतरनाक अपशिष्ट उत्पन्न कर रही है, उनके कर्तव्य एवं इसकी जिम्मेदारी भी इस नियम में वर्णित है।

(5) यह नियम सूची-1 में उल्लेखित निर्धारित सीमा से अधिक मात्रा में अपशिष्ट पदार्थों पर भी लागू है। सूची-3A में आयात एवं निर्यात के लिए अपशिष्ट पदार्थों पर भी यह नियम लागू है।

(6) यह नियम जल अधिनियम एवं वायु अधिनियम के अन्तर्गत आने वाले जल अपशिष्ट एवं उत्सर्जित गैसों पर लागू नहीं होता है।

(7) जिन स्थानों पर भयावह अपशिष्ट एकत्र, प्राप्त, उपचारित, भण्डारित एवं निस्तारित किये जाते हैं, उसे भयावह अपशिष्ट स्थल कहते हैं।

(8) भयावह अपशिष्ट का हस्तगन अच्छी तरह से करना चाहिये तथा हस्तगन को प्रारम्भ करने से पहले अधिकार पत्र (Authorization) प्राप्त कर लेना चाहिए।

(9) अधिकार-पत्र का समय समाप्त होने से पहले ही नये अधिकार पत्र के लिए आवेदन कर देना चाहिए।

(10) खतरनाक अपशिष्ट के उत्पादन का अभिलेख स्थल पर ही तैयार करना चाहिये तथा इस स्थल की पहचान, अभिकल्पन एवं विकास राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की अनुमति से करनी चाहिये।

इस कार्य में लगे हुए कर्मचारियों को उपकरण एवं प्रशिक्षण उपलब्ध कराना।

जैव चिकित्सीय अपशिष्ट (प्रबन्धन एवं हस्तगन) संशोधन नियम-2003

[Bio-medical Waste (Management and Handling) (Amendment) Rules — 2003]

यह अधिनियम सबसे पहले EPA — 1986 की धारा 5, 8 एवं 26 के अन्तर्गत प्रकाशित किया गया। यह नियम उन सभी व्यक्तियों पर लागू होता है जो जैव चिकित्सीय अपशिष्ट का उत्पादन, संग्रह, प्राप्ति, भण्डारण, परिवहन, उपचार, निस्तारण एवं हस्तगन करते है तथा मनुष्यों एवं जानवरों के चिकित्सीय परिक्षण (diagnosis) उपचार एवं टीकाकरण आदि से उत्सर्जित अपशिष्ट एवं शोध कार्यों से उत्सर्जित अपशिष्ट जैव चिकित्सीय अपशिष्ट कहलाते हैं। इन नियमों का अनुपालन सुनिश्चित कराने का कार्य राज्य प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड का है। नियमानुसार एक अपशिष्ट को अन्य अपशिष्ट के साथ नहीं मिलाना चाहिए। उत्पादन स्थल पर ही यह अपशिष्ट अलग-अलग पात्रों में छाँटकर अलग कर देने चाहिये। जैसे मनुष्यों की शल्य क्रिया (anatomy), जानवरों एवं जीवाणु सम्बन्धी अपशिष्ट पीले रंग के प्लास्टिक थैले में एकत्र किया जाता है जिसका या तो उपचार किया जाता है या जला दिया जाता है या फिर जमीन में गहराई से दबा दिया जाता है। इस तरह से तीन रंगों के प्लास्टिक बैग प्रयोग किये जाते हैं और इन थैलों पर लेबल लगाने के तरीके निर्धारित कर दिये जाते है।

जैव चिकित्सीय अपशिष्ट के परिवहन एवं निस्तारण की जिम्मेदारी नगरपालिका की होती है और इस अपशिष्ट को कहाँ जलाना है इस स्थान को उपलब्ध कराने की जिम्मेदारी भी नगरपालिका की होती है। नगरपालिका के दायित्वों के अतिरिक्त सारी जिम्मेदारी जैव चिकित्सीय अपशिष्ट उत्पन्न करने वाली संस्था अथवा प्रयोग करने वाली संस्था की ही होगी। नियमानुसार इस अपशिष्ट के उपचार या निस्तारण की विधियाँ अग्रवत् है—

जैसे—(1) ऊष्मीय भस्मक (Incinerator),

(2) ऑटोक्लेविंग (Auto Claving),

(3) माइक्रोवेविंग (Microwaving),

(4) रसायनों द्वारा जीवाणु-नाशन,

(5) महीन अपघर्षण (Shredding) तथा

(6) जमीन में गहराई में खोदकर दबा देना।

ध्वनि प्रदूषण (नियमन एवं नियन्त्रण) (संशोधन) नियम-2000

[The Noise Pollution (Reg lation and Control) (Amendment) Rules—2000]

भारत सरकार द्वारा Environment (Protection) Act 1986 के अनुसार ध्वनि प्रदूषण (नियमन एवं नियन्त्रण) नियम-2000, जो कि भारत सरकार के vide S.O. 1088 (E) दिनांक 22 नवम्बर, 2000 द्वारा केन्द्रीय गजट में प्रकाशित किया गया। पुन: दिनांक 11 अक्टूबर, 2002 द्वारा इसमें संशोधन किया गया।

इस नियन के अन्तर्गत शोर के लिए मानक के अनुसार लाउडस्पीकर का उपयोग, ध्वनि प्रदूषण रोकने हेतु उपाय तथा वायु के गुणवत्ता के मानकों का वर्णन उल्लिखित है। इस नियम के अन्तर्गत अस्पताल, शैक्षिक संस्थान एवं न्यायालय के

Scanned by CamScanner

आस-पास 100 मी० की दूरी का क्षेत्र शान्त क्षेत्र घोषित कर दिया जाता है। लाउडस्पीकर का प्रयोग, बिना अधिकृत अधिकारी की अनुमति प्राप्त किये, नहीं करना चाहिये।

घिरे हुए क्षेत्र जैसे ऑडीटोरियम, कॉन्फ्रेन्स हॉल, सामुदायिक हॉल एवं बैंक्वेट हॉल को छोड़कर रात के समय (10.00 pm से 6.00 am) लाउडस्पीकर का प्रयोग प्रतिबन्धित है। नियम के अनुसार केवल सामाजिक तथा धार्मिक त्यौहारों या पर्वों के अवसर पर ही रात्रि में 10.00 pm से 12.00 pm तक लाउडस्पीकर के प्रयोग की अनुमति दी जा सकती है, किन्तु यह अनुमति पूरे वर्ष में 15 दिन से अधिक अवधि तक नहीं होनी चाहिए। यदि किसी क्षेत्र में निर्धारित ध्वनि स्तर से 10 डेसीबेल का शोर अधिक हो तो इसकी शिकायत अधिकृत अधिकारी से की जा सकती है और यह अधिकारी उस व्यक्ति के विरुद्ध इस नियम के अनुसार कार्यवाही करेगा।

अधिकृत अधिकारी को किसी नजदीकी पुलिस स्टेशन के इंचार्ज या किसी अन्य स्रोत से प्राप्त सूचना के आधार पर शोर उत्पन्न करने वाले व्यक्ति के विरुद्ध प्रतिबन्ध लगाने का अधिकार इस नियम के द्वारा प्रदान किया गया है।

नगरपालिका ठोस अपशिष्ट (प्रबन्ध एवं हस्तगत) नियम–2000

[The Municipal Solid Waste (Management and Handling) Rules—2000]

इस अधिनियम में प्रमुख प्रावधानों का वर्णन निम्नवत् है—

(1) यह नियम 25 सितम्बर, 2000 को भारत सरकार के गजट में प्रकाशित किया गया था।

(2) इस नियम में नगरपालिकाओं के द्वारा ठोस अपशिष्ट को इकट्ठा करना, समापन करना एवं पुनः उपयोग हेतु विस्तृत निर्देश उल्लेखित हैं।

(3) यह नियम सभी नगरपालिकाओं पर ठोस अपशिष्ट के संग्रह, छाँटना, भण्डारण, परिवहन, उपचार एवं निस्तारण लागू करता है और इन प्रावधानों को लागू करना नगरपालिका का दायित्व होता है।

(4) ठोस अपशिष्ट के उपचार करने का अधिकार प्राप्त करने के लिए फार्म संख्या-1 पर राज्य प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड अथवा समिति को आवेदन करना आवश्यक होता है।

(5) ऐसे नियमों को लागू करने के लिए सूची-1 (Schedule-1) में वर्णित विधि के अनुसार ही नगरपालिका द्वारा ये नियम लागू किये जाते हैं।

(6) नगरपालिकाओं को चाहिये कि वे अपनी वार्षिक रिपोर्ट फार्म सं० II पर 30 जून से पहले सम्बन्धित राज्य के शहरी विकास विभाग के सेक्रेटरी इंचार्ज को या मेट्रोपोलिटिन शहर के मामले में संघ राज्य (Union Territory) के सेक्रेटरी इंचार्ज को सौंप दी जानी चाहिये।

(7) गाँवों या शहरों के मामले में वार्षिक रिपोर्ट जिलाधिकारी अथवा डिप्टी कमिश्नर को दे देनी चाहिये और इसकी एक कॉपी राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड अथवा कमेटी को भी देनी चाहिये।

(8) किसी भी गाँव या शहर में उत्पन्न होने वाले नगरपालिका अपशिष्ट का प्रबन्धन एवं हस्तगन सूची-2 (Schedule-2) में उल्लिखित विधि के अनुसार ही करना चाहिये।

(9) नगरपालिका अपशिष्ट के उपचार एवं निस्तारण (Processing and Disposal) की सुविधा या तो नगरपालिका को स्वयं या अपशिष्ट उत्पन्न करने वाले व्यक्ति के द्वारा स्थापित की जानी चाहिए। इस कार्य हेतु सूची-3 (Schedule-3) एवं सूची-4 (Schedule-4) के अनुसार स्थापित मानकों का अनुपालन किया जाना आवश्यक होता है।

पुनःनिर्मित प्लास्टिक (निर्माण एवं उपयोग) (संशोधन) नियम–2003

[Recycled Plastic (Manufacture and Usage) (Amendment) Rules—200.]

इस नियम में निम्नांकित प्रावधानों का उल्लेख किया गया है—

(1) पर्यावरण कानून, 1986 [Environmental (Protection) Act — 1986] के अनुच्छेद 3, उप अनुच्छेद (2) तथा अनुच्छेद-25 के अन्तर्गत भारत सरकार द्वारा प्लास्टिक निर्माण विक्रय एवं उपयोग नियम — 1999 [The Plastic Manufacture, Sale and Usage Rule — 1999] जो कि vide S.O. 705 (E) दिनांक 25 सितम्बर 1999 को एवं इसका पुनः संशोधन vide S.O. 699 (E) दिनांक 17 जून, 2003 द्वारा भारत सरकार के गजट में प्रकाशित किया गया।

(2) इस नियम में जहाँ कहीं थैले का उल्लेख किया गया है, वहाँ थैले (Carry bags) से आशय प्लास्टिक के थैले (Plastic bags) से है।

(3) मूल प्लास्टिक (Virgin Plastic) या पुनः चक्रीकृत प्लास्टिक (Recycled Plastic) के नम्य अथवा सुदृढ़ बर्तन (पात्र) को इस नियम में केवल बर्तन (Container) कहा जाता है।

(4) प्लास्टिक के थैलों अथवा बर्तनों में बन्द की गई सामग्री के विक्रेताओं को वेन्डर (Vendor) कहा गया है।

(5) इन प्लास्टिक के थैलों अथवा पात्रों का आकार 20×30 सेमी० से कम नहीं होना चाहिये और मोटाई 20 माइक्रोन से कम ना हो।

(6) कोई भी वेण्डर पुनः चक्रीकृत प्लास्टिक के थैले अथवा बर्तनों का प्रयोग किसी भी तरह से नहीं कर सकता।

(7) प्लास्टिक के बने थैले अथवा पात्र प्राकृतिक रंग अथवा सफेद रंग के होने चाहियें।

(8) 50 प्लास्टिक के थैलों का न्यूनतम भार 105 gm होना चाहिये। इस भार में हम 5% कम या ज्यादा कर सकते हैं।

(9) प्लास्टिक थैलों के निर्माता को थैलों अथवा पात्रों के ऊपर 'As per IS : 14534 - 1998' अवश्य अंकित करना चाहिए, और इन पर 'Recycled Material' अथवा 'Virgin Plastic' भी लिखा जाना चाहिये।

(10) इस नियम के अनुपालन सुनिश्चित कराने की जिम्मेदारी राज्य के मामले में राज्य प्रदूषण बोर्ड की होती है।

(11) सभी निर्माताओं को फार्म सं०-1 पर राज्य प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड अथवा समिति में निर्माण के लिये पंजीकरण कराने हेतु अथवा इकाई नवीनीकरण हेतु इस नियम के प्रकाशन की तिथि से 4 महीने के अन्दर आवेदन करना जरूरी है।

ISO-9000

जापान में उत्पादों की गुणवत्ता पर विशेष ध्यान दिया गया। सामान्य कीमत पर अच्छा उत्पादन करते हुए स्वीकार्य गुणवत्ता का उत्पाद, निर्माण करने के लिए उत्पाद कम्पनियों एवं फर्मों के लिए प्रबन्धन मानक, प्रक्रिया तारतम्यता, कच्चे पदार्थों का संगठन तथा उत्पाद के जीवन को समावेशित कर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार्य मानक तैयार किया गया। भारत में भी इस मानक का अब से लगभग 10-12 वर्षों पूर्व स्वीकार्य कर उत्पाद तैयार हो रहे हैं।

1979 में ISO (International Standard Organizaton) में मानकों का Single Set विकसित करने हेतु ताकि गुणवत्ता का Assurance हो सके, एक तकनीकी समिति का गठन किया। 1987 में इसे ISO-9000 का रूप दिया गया और 1992 के अन्त में यह सभी यूरोपीय Common बाजार मे स्वीकार्य हुआ। इससे अपभोक्ता से जहाँ मानक उत्पाद प्राप्त हुए एवं क्वालिटी का Assurance मिला, वहीं Manufacture का Confidence भी Build-up हुआ। अच्छी गुणवत्ता का मतलब उत्पाद का उद्देश्य में Fit होना, आवश्यकताओं के अनुरूप होना, डिजाइन व Making में स्वीकार्य होना तथा टिकाऊ होना है। इन सबको देखते हुए ISO-9000 की 5 सीरिज विकसित की गईं जो उत्पाद के अलग-अलग कार्यों के लिए निर्धारित की गई है जो निम्न है—

1. ISO-9001—गुणवत्ता सिस्टम-डिजाइन, विकास उत्पाद Installation और Servicing की गुणवत्ता Assurance के लिए Model तैयार करना।
2. ISO-9000—गुणवत्ता प्रबन्धन और गुणवत्ता (Assurance) के मानक निर्धारण-मापन एवं उपयोगिता की लाईन तैयार करना।

Scanned by CamScanner

3. ISO-9002—गुणवत्ता सिस्टम-उत्पादन और उत्पाद के लागत Installation के लिए गुणवत्ता Assurance हेतु Model तैयार करना।
4. ISO-9003—गुणवत्ता सिस्टम-अन्तिम निरीक्षण एवं परीक्षण की गुणवत्ता (Assurance) के लिए मॉडल तैयार करना।
5. ISO-9004—गुणवत्ता सिस्टम-गुणवत्ता प्रबन्धन और गुणवत्ता सिस्टम के तत्वों की गाइड लाइन तैयार करना।

जिस प्रकार उद्योगों में उत्पादन हेतु ISO-9000 सीरीज का अनुपालन कर उपभोक्ताओं को Satisfy करने के लिए प्रबन्धन के मानक तैयार किये गये हैं। इसी अनुपालन में पर्यावरण प्रबन्धन हेतु मानक तैयार करने एवं अनुपालन करने के लिए ISO-14000 की सीरीज तैयार की गई है।

ISO-14000

वास्तव में ISO गैर सरकारी, स्वैच्छिक, जनमत वाला प्राइवेट संगठन है जो द्वितीय विश्व युद्ध के बाद जेनेवा में स्थापित किया गया। यह किसी भी संयुक्त राष्ट्र या यूरोपीय संगठनों से सम्बद्ध नहीं है बल्कि स्वतंत्र रूप से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की कार्यकारी संस्था है। सन् 1980 मे तकनीकी समिति (TC-176) का गठन कर संगठन प्रबन्धन व गुणवत्ता प्रबन्धन के मानक मसौदे तैयार करने के लिए किया गया। इसी समय पर्यावरण के क्षेत्र में ओजोन पर्त क्षय, ग्लोबल वार्मिंग, डिफोरेस्टेशन तथा अन्य पर्यावरण मुद्दों को तैयार किया गया। 1991 के मध्य में SAGE (Strategic Advisory Group on Environment) का गठन किया गया तथा 1992 में दूसरी तकनीकी Committee में पर्यावरण प्रबंधन सिस्टम के कार्य की रूपरेखा तैयार की गई। इस समिति द्वारा ISO – 14000 को दो क्षेत्रों में बाँटा गया। पहले का कार्य संगठन प्रबन्धन और इसके उत्थान सिस्टम को डील करना जबकि दूसरे का कार्य उत्पादन उत्थान के लिए पर्यावरणीय उपकरणों का विकास करना है।

ISO-14000 की भी कई series तैयार की गई है जो अलग-अलग क्षेत्र को विकसित करती है।

ISO-14000—जो पर्यावरणीय प्रबन्धन सिस्टम विशिष्टियों पर सलाह को इंगित करता है।

ISO-14060—Guide for Environment Aspect in Product Standard.

ISO-14020—Basic Principles for all Environment Labelling.

ISO-14021—Environmental Claims with Terms and Conditions.

ISO-14022—Symbols.

ISO-14023—Testing Verification.

ISO-14024—Practitioner Program.

ISO-14040—Life Cycle Assessment Principle and Frame Work

ISO-14041—Goals and Definition/Scope and Inventory Analysis.

ISO-14031—Guidelines and Env. Performance Evaluation.

ISO-14010—Environmental Auditing.

ISO-14042—Impact Assessment.

ISO-14043—Improvement Assessment.

ISO-14012—Oualification Criteria for Environmental Auditors.

इसी प्रकार अन्य भी कई ISO-14000 के Sub Act है जिनके अनुपालन से पर्यावरण के गिरते स्तर में सुधार व स्वास्थ्यप्रद पर्यावरण पूरे विश्व में बनाया जा सकता है। ISO -14000 प्रमाणपत्र हेतु DNV, BVQI, ASPECTS या Apply करना पड़ता है। जहाँ से प्राप्त Questionnaire में detail भरकर सभी सूचनाएँ देकर प्रमाणपत्र प्राप्त किया जाता है।

लेकिन आज के समय मे राष्ट्रीय नीति का Common मसौदा प्रत्येक को प्रभावित कर रहा है। इसलिए ISO-14000 की सभी देशों ने आवश्यकता व्यक्त की है जिसके अनुपालन से पूरे विश्व में स्वच्छ पर्यावरण की स्थिति सुनिश्चित की जा सकती है और आगामी पीढ़ी के लिए पर्यावरण संरक्षण कर धरोहर के रूप मे इसे सहेजा जा सकता है।

पर्यावरणीय प्रभाव का मूल्यांकन
(ENVIRONMENTAL IMPACT ASSESSMENT, E.I.A.)

परिचय (Introduction)

सम्पूर्ण विश्व के किसी भी क्षेत्र का पर्यावरण एक गतिशील सत्ता है जो उस क्षेत्र के वायुमण्डल, स्थलमण्डल, जीवमण्डल एवं जलमण्डल के मध्य जटिल पारस्परिक अन्तर्सम्बन्ध के समुच्चय को प्रदर्शित करता है। यह सदैव सतत् परिवर्तन की स्थिति में रहता है। प्रकृति में ये परिवर्तन काफी धीरे-धीरे होते है। प्रकृति में ये परिवर्तन पर्यावरण के लिये अहितकर दृष्टिगोचर हो रहा है। वर्ष 1960 के बाद ऐसा अनुभव किया गया कि तीव्र विकास, खेती का विकास, औद्योगीकरण, संसाधनों का दोहन इत्यादि का पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। आर्थिक उन्नति एवं विकास जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाते है। परन्तु साथ ही ये पर्यावरण की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं जो कि लम्बे समय में जीवन की गुणवत्ता पर अपना विपरीत प्रभाव डाल सकते है जिससे सभी विकास कार्यों का मूल उद्देश्य ही पूर्ण नहीं होगा। अत: विकास कार्यों की योजनाओं मे पर्यावरण के विषय में समुचित विचार करने की परम आवश्यकता है। विकास कार्यों एवं पर्यावरण संरक्षण में संतुलन बनाये रखने की अत्यधिक आवश्यकता है। भारत सरकार ने संसाधनों की सुरक्षा एवं सामाजिक उत्थान को दृष्टिगत रखते हुए पर्यावरण एवं वन मन्त्रालय की स्थापना की जिसके अन्तर्गत विभिन्न विकास परियोजनाओं एवं उद्योगों का पर्यावरण प्रभाव के मूल्यांकन का शुभारम्भ किया गया। पर्यावरण प्रभाव के मूल्यांकन हेतु उद्योगो के लिये स्थान का चयन, प्रयुक्त प्रौद्योगिकी तथा उत्सर्जन से निकलने वाले पदार्थों के उपचार की विधि इत्यादि का अध्ययन किया जाता है।

परिभाषा (Definition)

स्वच्छ एवं शुद्ध वातावरण सम्पूर्ण मानव एवं जीव-जन्तुओं के लिये अति आवश्यक है। पूर्व में जनसंख्या कम होने के कारण पदार्थ कम व्यर्थ होता था तथा जो कुछ पदार्थ अपशिष्ट हो जाता था, वह प्राकृतिक कारकों से उदासीन हो जाया करता था जिस कारण मानव अन्य बीमारियों एवं परेशानियों से काफी दूर था। परन्तु आज पर्यावरण, जनसंख्या वृद्धि, वाहनों एवं उद्योगों से निकले जहरीले धुएँ, तीव्र ध्वनि, वनो की कटाई आदि से प्रदूषित होता जा रहा है। विकासात्मक गतिविधियों का पर्यावरण तत्वों के साथ सामंजस्य स्थापित करने की परम आवश्यकता है। अत: इन लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु पर्यावरणीय मूल्यांकन (Environmental Impact Assessment or E.I.A.) योजनाकारों के लिये उपलब्ध एक कारगर उपाय है। इसे निम्न प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है—

"किसी विकास योजना के बारे में कोई बड़ा निर्णय लेने अथवा कोई आश्वासन देने से पूर्व उसके जैव भौतिक, सामाजिक एवं अन्य प्रासंगिक प्रभावों को पहचानने, भविष्यवाणी करने, आकलन करने तथा शमन करने की प्रक्रिया पर्यावरणीय प्रभाव का मूल्यांकन कहलाती है।"

"The Process of indentifying, predicting, evaluating and mitigating the biophysical, social and other relevant effects of development proposals prior to major decisions being taken and commitment made is called as Environmental Impact Assessment (E.I.A.)."

भारत में पर्यावरणीय प्रभाव का मूल्यांकन
(Environmental Impact Assessment in India)

भारत में पर्यावरणीय प्रभाव के मूल्यांकन का शुभारम्भ 1976-77 में तब हुआ था जब योजना आयोग ने विज्ञान एवं तकनीकी विभाग से नदी घाटी परियोजनाओं को पर्यावरणीय दृष्टिकोण से दृष्टिपात करने के लिए कहा गया। भारत सरकार ने

Scanned by CamScanner

23 मई, 1986 को पर्यावरण सुरक्षा कानून लागू किया। कानूनी प्रक्रिया अपनाने के पश्चात 27 जनवरी, 1994 को एक अधिसूचना जारी की गई और इसके बाद 4 मई 1994, 10 अप्रैल 1997 एवं 27 जनवरी 2000 में इस कानून में संशोधन किये गये, जिसमें 30 गतिविधियों के लिए पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन को प्रभावी एवं वैज्ञानिक बनाया गया। पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन (E.I.A.) को नियन्त्रित करने वाला यह प्रमुख कानून है।

पर्यावरणीय प्रभाव के मूल्यांकन के उद्देश्य
(Objectives of E.I.A.)

पर्यावरणीय प्रभाव के मूल्यांकन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं—

(1) विकास योजनाओं के प्रतिकूल सार्थक जैव भौतिक, सामाजिक एवं अन्य प्रासंगिक प्रभावों का पूर्व ज्ञान प्राप्त करना, उनसे बचना, उन्हें कम करना अथवा उनकी क्षतिपूर्ति करना।

(2) पर्यावरणीय विचार विमर्श का स्पष्ट रूप से उल्लेख करना एवं उसे विकास योजनाओं में सम्मिलित करना।

(3) प्रकृति के नियमों एवं पारिस्थितिक प्रक्रियाओं, जो प्राकृतिक क्रियाओं का निष्पादन करती हैं, की क्षमता एवं उत्पादकता को सुरक्षा प्रदान करना।

(4) ऐसे विकास कार्यों को बढ़ावा देना जो स्थायी हों तथा प्रबन्धीय अवसरों एवं संसाधनों का सर्वश्रेष्ठ उपभोग करते हों।

पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन की विधियाँ
(Environmental Impact Assessment Methods)

(1) प्रारम्भिक छानबीन (Initial Screening)—लागू की जाने वाली विकास परियोजना के बारे में सर्वप्रथम यह तय करने की आवश्यकता होती है कि क्या वास्तव में इस परियोजना के पर्यावरण पर प्रभावों के मूल्यांकन की आवश्यकता है अथवा नहीं। इस प्रकार प्रारम्भिक छानबीन से हमें ऐसी परियोजनाओं की जानकारी मिल जाती है जो पर्यावरणीय गंभीर प्रभाव उत्पन्न नहीं करती है।

(2) तीव्र पर्यावरण प्रभाव मूल्यांकन (Rapid Environmental Impact Assessment)—किसी परियोजना से पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने का आभास होने पर तीव्र पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन किया जाता है। यह कार्य निम्नलिखित चरणों में किया जाता है—

(i) परीयोजना के पर्यावरण पर मुख्य प्रभावों की पहचान करना।

(ii) स्थानीय क्षेत्र अथवा सम्पूर्ण क्षेत्र पर परियोजना के प्रभावों का मूल्यांकन करना।

(iii) मूल्य लाभ का विश्लेषण (Cost Benefit Analysis) शीघ्रता से करना।

(iv) ऐसे विवादित विषयों की सूची तैयार करना जिनका समाधान नहीं हो सका है एवं जिनका विस्तार से परीक्षण करना आवश्यक है।

अत: तीव्र पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन किसी परियोजना के केवल उन प्रमुख विषयों की पहचान करता है जिन पर उपलब्ध संसाधनों के अनियन्त्रित व्यय से पर्यावरण प्रभावित हो रहा है जिससे इन पर समुचित ध्यान दिया जा सके। अनुपयोगी विषयों को, जिन पर और अध्ययन की आवश्यकता नहीं है, को छोड़ दिया जाता है। इस प्रकार संसाधनों का सर्वोत्तम उपभोग करने में मदद मिलती है। इस प्रकार के मूल्यांकन में जनता, निजी संगठन एवं विशेषज्ञों से विचार-विमर्श करके अन्तिम निर्णय लिये जाते हैं तथा कभी-कभी मूल्यांकन हेतु वैज्ञानिक परीक्षण भी करने पड़ते हैं।

(3) विस्तृत, पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन (Comprehensive Environmental Impact Assessment)—इस मूल्यांकन के अन्तर्गत निम्न प्रकार की सूचनाएं आकलित एवं संग्रहित की जाती हैं—

(i) बेस लाइन डाटा (Base Line Data)

(ii) प्रभावों की पहचान (Impact Identification)

(iii) प्रभावों की भविष्यवाणी (Impact Prediction)

(iv) प्रभावों का मूल्यांकन (Evaluation of Impact)

(v) योजनाओं का प्रबोधन एवं न्यूनीकरण उपाय (Mitigative measures and monitoring plans)

(vi) निर्णायकों एवं समाज को सूचित करना (Informing the society and decision makers)

(i) बेस लाइन डाटा (Base Line Data)—परियोजना की विवेचना, प्रकृति तथा क्षेत्र में होने वाले क्रियाकलापों की तीव्रता की जानकारी एकत्रित करना ही मूल सूचनाएं कहलाती हैं। बेस लाइन डाटा के अन्तर्गत वायुमण्डल, जलमण्डल; स्थलमण्डल एवं जीवमण्डल की समुचित जानकारी भी सम्मिलित होती है। जनसंख्या घनत्व, उम्र एवं लिंग वितरण, जातीय समूह, बीमारी एवं मृत्यु दर, शिक्षा का स्तर आदि की सूचना विकास कार्यों के समाज पर प्रभावों के मूल्यांकन के लिये बहुत महत्वपूर्ण हैं।

(ii) प्रभावों की भविष्यवाणी (Impact Prediction)—इस स्तर पर परियोजना के चालू होने पर उस क्षेत्र पर पड़ने वाले प्रभावों एवं द्वितीयक प्रभावों का परीक्षण किया जाता है। जैसे—परियोजना के निस्राव (Effluent) को किसी समीपस्थ जल धारा में मिश्रित करने से पेयजल की गुणवत्ता यदि खराब हो जाए तो इसका द्वितीयक प्रभाव यह होगा कि इस दूषित जल में मछलियों का उत्पादन घट जायेगा जो उस क्षेत्र के मछुआरों को आर्थिक हानि पहुँचायेगा। इसका परिणाम यह होगा कि उस क्षेत्र के मछुआरे किसी दूसरे स्थान को पलायन कर जायेंगे या अपनी जीविका के किसी अन्य साधन को अपना लेंगे जिससे उस क्षेत्र मे अपराधों की संख्या बढ़ सकती है।

(iii) प्रभावों की पहचान (Impact Identification)—इस स्तर पर विश्लेषण किया जाता है कि क्या होगा जब परियोजना क्रियान्वयन की स्थिति में पहुँच जायेगी? ऐसे प्रश्नों का उत्तर प्रभावों की पहचान से प्राप्त होता है। परियोजना चालू हो जाने पर सम्भावित परिवर्तनों की सूची पहले से ही तैयार कर ली जाती है। जैसे आस-पास की वायु की गुणवत्ता में परिवर्तन, जल एवं मृदा गुणों में परिवर्तन, ध्वनिस्तर, जीव-जन्तुओं की प्रजातियाँ, जंगली जानवर, सामाजिक एवं सांस्कृतिक पद्धतियाँ, रोजगार का स्तर आदि। इसके अतिरिक्त धुएं के उत्सर्जन, जल की खपत तथा निस्राव के विसर्जन के स्रोतों की भी पहचान करना जरूरी होता है।

(iv) प्रभावों का मूल्यांकन (Impact Evaluation)—इससे हमें सम्भावित परिवर्तनों की वास्तविकता के विषय का बोध होता है अर्थात् "क्या परिवर्तन वास्तव में होंगे?" यदि परियोजना को ऐसे स्थान पर क्रियान्वित किया जाए जिसके आस-पास का क्षेत्र बहुत ही कम जैविक बस्ती वाला है तथा जहाँ पर बहुत कम आबादी निवास करती हो, तो ऐसे क्षेत्र में परिवर्तन में होने वाले थोड़े परिवर्तनों को छोड़ा जा सकता है; यद्यपि सघन आबादी वाले क्षेत्र में यदि परियोजना क्रियान्वित हो तो क्षेत्र में होने वाले अल्प प्रभावों को नगण्य नहीं माना जा सकता है। बल्कि इनको कम करने के समुचित उपाय करने चाहिये अथवा परियोजना को किसी अन्य उचित स्थान पर स्थानान्तरित कर दिया जाना चाहिए।

(v) योजनाओं का प्रबोधन एवं न्यूनीकरण उपाय (Mitigative Measures and Monitoring Plans)—यदि विकास कार्यों के सार्थक अथवा प्रभावी परिवर्तन है तब प्रभावों को कम करने के उपायों (mitigating measures) का परीक्षण करना पड़ता है। अत: सार्थक प्रतिकूल प्रभावों को रोकने, कम करने, छुटकारा पाने अथवा प्रतिपूर्ति करने के उपाय प्रस्तावित किये जा सकते है। शमन अथवा न्यूनीकरण के संभावित उपाय निम्न प्रकार हो सकते हैं—

(i) क्षतिग्रस्त संसाधनों को पुन: स्थापित करना, प्रभावितों को आर्थिक सहायता देना, अन्य विषयों में छूट प्रदान करना एवं सामाजिक जीवन शैली में सुधार करना।

(ii) प्रदूषण नियन्त्रण के उपाय, अपशिष्ट जल उपचार (waste treatment) एवं प्रबोधन (monitoring)।

(iii) परियोजना स्थल, मार्ग, कच्चा माल, संचालन विधि, प्रक्रम, निस्तारण मार्ग (disposal routes) एवं अभियांत्रिकी अभिकल्पना मे परिवर्तन करना।

उपरोक्त किये गये उपायों की एक कीमत होती है। इस कीमत (मूल्य) को उत्पाद की कीमत (Cost) में सम्मिलित कर दिया जाता है। विभिन्न उपायों को अपनाकर प्रोजेक्ट की पृथक-पृथक लागत की गणना कर ली जाती है। इससे निर्णायकों को

(vi) निर्णायकों एवं समाज को सूचित करना (Informing the society and decision makers)—पर्यावरण प्रभाव मूल्यांकन (E.I.A.) की उपलब्धियों का अभिलेखीकरण (Documentation) तथा संप्रेषण (Communication) एक महत्वपूर्ण कार्य है। प्रौद्योगिक रूप से (Technically) अच्छी परियोजनायें भी एक खराब अभिलेखीकरण एवं खराब संप्रेषण के कारण निर्णायकों एवं समाज को सन्तुष्ट नहीं कर पाती हैं। अत: किसी परियोजना के लिए आवश्यक है कि उसका अभिलेखीकरण एवं सम्प्रेषण अति उत्तम होने चाहिए। संप्रेषण में एक बात ध्यान देने योग्य है कि निर्णायक एवं समाज आदि अप्राविधिक लोगों में से है तो परियोजना रिपोर्ट में प्राविधिक आँकड़े (Technical data) हटा देने चाहिए। परियोजना के महत्व पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए ताकि परियोजना कारगर सिद्ध हो सके।

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2006

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2006 में एक स्वच्छ पर्यावरण के लिए भारत की राष्ट्रीय प्रतिबद्धता, लेख 48 ए और 51 ए (G), (DPSP) अनुच्छेद 21 के न्यायिक व्याख्या से मजबूत करने में संविधान में अनिवार्य करने के लिए एक प्रतिक्रिया है। यह मान्यता है कि स्वस्थ वातावरण के रखरखाव अकेले राज्य की जिम्मेदारी नहीं है। यह हर नागरिक की जिम्मेदारी है और इस तरह की साझेदारी की भावना देश के पर्यावरण प्रबन्धन के माध्यम से महसूस किया जा रहा है। यहाँ राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2006 की सार है :

- कुंजी पर्यावरण की चुनौतियाँ
- गिरावट के ड्राइवर
- स्वास्थय पर प्रभाव
- नीति के उद्देश्य
- राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2006 के सिद्धान्त
- "प्रदूषण करने देता है" सिद्धान्त
- नीति में कानूनी देनदारियाँ
- पब्लिक ट्रस्ट के सिद्धान्त
- विधायी सुधार
- पर्यावरण प्रभाव आंकलन
- सीआरजेड़
- LMOs को समस्या
- ESZs
- डेजर्ट निवास
- पंचायत एवं महिलाओं की भागीदारी
- वन्य जीवन
- झीलों

कुंजी पर्यावरण की चुनौतियाँ

प्रमुख पर्यावरण चुनौतियाँ है कि भारत चेहरों कई आयामों में गरीबो और आर्थिक विकास के साथ पर्यावरण के क्षरण के गठजोड़ से संबंधित है। चुनौतियाँ आंतरिक रूप से ऐसी भूमि, जल, वायु और उनके वनस्पतियों और जीव के रूप में पर्यावरण संसाधनों का राज्य के साथ जुड़े हुए है।

गिरावट के ड्राइवर

पर्यावरण क्षरण का आसन्न ड्राइवरो, जनसंख्या वृद्धि, अनुचित प्रोद्योगिकी और खपत विकल्प और गरीबी ऐसे गहन कृषि, प्रदूषणकारी उद्योग और अनियोजित शहरीकरण के रूप मे लोगों और पारिस्थतिकी प्रणालियाँ और विकास गतिविधियों के बीच सम्बन्धों में परिवर्तन के लिए अग्रणी। गिरावअ के अन्य ड्राइवरों स्पष्टता या उपयोग और पर्यावरणीय संसाधनों, नीतियाँ है जो पर्यावरण संरक्षण के लिए हतोत्साहन प्रदान करते हैं (और राजकोषीय व्यवस्था में मूल हो सकता है जो), बाजार विफलताओं (जिसमें कमियो से जोड़ा जा सकता है के उपयोग के अधिकारों के प्रवर्तन की कमी है नियामक व्यवस्थाओं) और शासन की कमी।

स्वास्थय पर प्रभाव

गरीबी पर्यावरण की गुणवत्ता पर प्रतिकूल मानव स्वास्थ्य को प्रभावित किया है। पर्यावरणीय कारक भारत में इस बीमारी के बोझ के लगभग 20 प्रतिशत के लिए कुछ मामलों में जिम्मेदार होने के रूप में होने का अनुमान है और पर्यावरण के स्वास्थ्य कारकों की एक संख्या बारीकी से (जैसे कुपोषण, उपयोग की कमी ऊर्जा और पानी को साफ करने के लिए) गरीबी के आयामों के साथ जुड़े हुए है। इस तरह के, घर के अंदर वायु प्रदूषण को कम करने के लिए सुरक्षित पीने के पानी के स्रोतों की रक्षा, संक्रमण से मिट्टी, सुधार स्वच्छता उपायों और बेहतर सार्वजनिक स्वास्थ्य शासन की रक्षा के रूप में हस्तक्षेप, गंभीर स्वास्थ्य समस्याओ का एक नंबर की घटनाओं को कम करने में काफी अवसर प्रदान करते हैं।

नीति के उद्देश्य

1. महत्त्वपूर्ण पर्यावरणीय संसाधनों का संरक्षण
2. इंट्रा-पीढ़ीगत इक्विटी : गरीबों के लिए आजीविका सुरक्षा
3. अंतर-पीढ़ीगत इक्विटी
4. आर्थिक और सामाजिक विकास में पर्यावरण सम्बन्धी चिंताओं में एकता
5. पर्यावरण संसाधन उपयोग में दक्षाता
6. पर्यावरण शासन
7. पर्यावरण संरक्षण के लिए संसाधनों का संवर्धन

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2006 के सिद्धान्त

पॉलिसी मान्यता है कि केवल इस तरह के विकास टिकाऊ हैं, जो पारिस्थितिकी बाधाओं का सम्मान करता है, और न्याय की अनिवार्यताओं से विकसित। उद्देश्य ऊपर कहा गया है केन्द्रीय राज्य में विभिन्न रणनीतिक हस्तक्षेपों के माध्यम से महसूस की जा करने के लिए कर रहे है। उन्होने यह भी विविध साझेदारी का आधार होगा। सिद्धान्तों नीति में पीछा कर रहे हैं।

1. मनुष्य की सतत विकास चिंताओं के केन्द्र में है।

2. सही विकास के लिए पूरा किया जाना चाहिए ताकि के रूप में समान रूप से वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के विकास और पर्यावरण की जरूरतों को पूरा करने के लिए।

3. आदेश में सतत विकास को प्राप्त करने के लिए, पर्यावरण संरक्षण के विकास की प्रक्रिया का एक अभिन्न हिस्सा माना जाएगा और इसे अलगाव में नहीं माना जा सकता।

4. जहाँ प्रमुख पर्यावरणीय संसाधनों को गंभीर या अपरिवर्तनीय क्षति के विश्वसनीय खतरों में देखते हैं, पूर्ण वैज्ञानिक निश्चितता की कमी पर्यावरण के क्षरण को रोकने के लिए लागत प्रभावी उपायों को टालने के लिए एक कारण के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जायेगा।

Scanned by CamScanner

5. पर्यावरण संरक्षण के लिए विभिन्न सार्वजनिक कार्यों मे, आर्थिक दक्षता महसूस किया जा करने की माँग किया जाएगा।

"प्रदूषण करने देता है" सिद्धान्त

उत्पादन और एक पार्टी की खपत के कृत्यों के प्रभावों तीसरे पक्ष जो मूल कार्य के साथ एक प्रत्यक्ष आर्थिक गठजोड़ की जरूरत नहीं है पर दौरा किया जा सकता है। इस तरह के प्रभावों को "बाहरी" कहा जाता है। राष्ट्रीय पर्यावरण नीति पर्यावरणीय लागत के (internalization) को बढ़ावा देता है। आधारित नीति के साधन प्रोत्साहन के उपयोग में माध्यम सहित, खाते में लेने के दृष्टिकोण है कि प्रदूषण फैलाने चाहिए, सिद्धान्त रूप में, प्रदूषण की लागत, सार्वजनिक हित के कारण सम्बन्ध के साथ सहन और बिना अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और निवेश को विकृत।

नीति में कानूनी देनदारियाँ

पर्यावरण निवारण आपराधिक दायित्व के सिद्धान्तों पर आधारित तंत्र, पर्याप्त रूप से कारगर साबित नहीं किया है और पूरा किया जाना चाहिये। नीति पर्यावरण क्षति है कि पर्यावरण की दृष्टि से हानिकारक कार्रवाई रोकते होता है और पर्यावरण के नुकसान की भरपाई के लिए पीड़ितों नागरिक दायित्व को गोद लें।

नागरिक दायित्व के लिए विकल्प भी अर्थात् आवेदन कर सकते हैं। आधार दायित्व और सख्त देयता गलती है।

- फॉल्ट के आधार देयता में एक पार्टी के लिए उत्तरदायी आयोजित किया जाता है, एक पर्यावरण मानक यदि यह एक पहले से मौजूद कानूनी कर्तव्य उल्लंघनों उदाहरण के लिए।
- सख्त देयता कार्रवाई करने के लिए विफलता है जो जरूरी किसी भी कानून या देखभाल के कर्तव्य का उल्लंघन का गठन नहीं हो सकता से उत्पन्न नुकसान के लिए शिकार की भरपाई के लिए एक दायित्व लगाता है।

पब्लिक ट्रस्ट के सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के अनुसार, राज्य एक निरपेक्ष मालिक है, लेकिन सभी प्राकृतिक संसाधनों, जो जनता के उपयोग और आनंद के लिए होती स्वभाव से कर रहे है की एक ट्रस्टी, उचित शर्तों के अधीन है, लोगों की एक बड़ी संख्या के वैध हितों की रक्षा करने के लिए आवश्यक नहीं है या सामरिक राष्ट्रीय हित के मामलों के लिए।

विधायी सुधार

सिविल और आपराधिक प्रक्रियाओं और प्रतिबंधों की एक विवेकपूर्ण मिश्रण मौजूदा कानून की समीक्षा के माध्यम से लागू करने के लिए कानूनी व्यवस्था में नियोजित किया जायेगा। नीति राष्ट्रीय पर्यावरण नीति के साथ लाइन में, बेहतर वैज्ञानिक समझ, आर्थिक और सामाजिक विकास, पर्यावरण और बहुपक्षीय व्यवस्थाओं के विकास की वजह से नए कानून के लिए उभरते क्षेत्रों की पहचान के लिए कहता है। यह भी आदेश प्रासंगिक विधियों और नियमों के बीच सहयोग को विकसित करने के लिए मौजूदा कानून के शरीर की समीक्षा के लिए कहता है।

पर्यावरण प्रभाव आंकलन

नीति क्षेत्रीय और संचयी पर्यावरणीय प्रभाव आंकलन (आर /CEIAS) को संस्थागत रूप से देने के लिए सुनिश्चित करें कि पर्यावरण सम्बन्धी चिंताओं की पहचान की और योजना के स्तर पर ही संबोधित कर रहे नियामक अधिकारियों, केंन्द्र और राज्य, को प्रोत्साहित करने पर केंन्द्रित है।

सीआरजेड (CRZ)

नीति तटीय नियमन क्षेत्र (सीआरजेड) सूचनाएँ फिर से आना तटीय पर्यावरण नियमन के लिए दृष्टिकोण और अधिक गाल बचाने के लिए और इसी तरह तटीय पारिस्थितिकी प्रणाली, तटीय जल और चरम प्राकृतिक घटनाओं और संभावित समुद्र

करने के लिए कुछ तटीय क्षेत्रों के जोखिम की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए करना है स्तर बढ़ने। पॉलिसी सीआरजेड अधिसूचना 2011 के साथ अनुसरण में हाल ही में जारी किया गया था।

LMOs की समस्या

एलएमओं के रहने से संशोधित जीवों को दर्शाता है। आधुनिक जैव प्रोद्योगिकी से संशोधित जीवों (LMOs के रू में जाना जाता है) के रहने परिणाम मोटे तौर पर अनुवांशिक रूप से संशोधित जीवों के बराबर है।

एक एलएमओ और एक जीएमओ के बीच अन्तर यह है कि एक के रहने से संशोधित जीव बढ़ रही करने में सक्षम है, और आम तौर पर कृषि फसलों को दर्शाता है। अनुवांशिक रूप से संशोधित जीवों दोनों LMOs और जीव जो यानी, बढ़ रही करने में सक्षम नहीं है, मर रहे हैं, शामिल हैं।

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति का कहना है कि अनुवांशिक रूप से संशोधित जीवों प्रासंगिक नियामक प्रक्रियाओं के हिस्से के रूप में अपनी क्षमता का लाभ और जोखिम के मूल्यांकन की आवश्यकता है। LMOs के सबसेट, हो सकता है, हालाँकि, प्रतिकृति के लिए अपनी क्षमता के काण, इसके अलावा में पर्यावरण संबंधी चिंताओं को शामिल करना। LMOs पारिस्थतिक संसाधनों के लिए महत्त्वपूर्ण जोखिम पैदा हो सकता है और शायद मानव और पशुओं के स्वास्थ्य। आदेश में जैव प्रोद्योगिकी, अप्रत्याशित प्रतिकूल प्रभावों के लिए नेतृत्व नहीं करता है कि विकास को सुनिश्चित करने के लिए, नीति LMOs के लिए नियामक प्रक्रियाओं की समीक्षा करने के लिए इतना है कि सभी प्रासंगिक वैज्ञानिक ज्ञान के खाते में पारिस्थतिकी, स्वास्थ्य लिया जाता है और आर्थिक चिंताओं के लिए पर्याप्त रूप से संबोधित कर रहे हैं, करना है।

ESZs

पर्यावरण की दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्रों "अतुलनीय मान" जो उनके संरक्षण के लिए विशेष ध्यान देने की जरूरत होने की पहचान की पर्यावरण संसाधनों के साथ क्षेत्र हैं।

ओदश के संरक्षण और इन संसाधनों को बढ़ाने के लिए, इन क्षेत्र के वैध सामाजिक-आर्थिक विकास में बाधा के बिना में, राष्ट्रीय पर्यावरण नीति की पहचान करने और देश में पर्यावरण की दृष्टि से संवेदनशील क्षेत्रों "अतुलनीय मूल्यों" विशेष संरक्षण के प्रयासों की आवश्यकता होती है के साथ पर्यावरण संस्थाओं होने की कानूनी दर्जा देने के उद्देश्य। नीति भी एक वैज्ञानिक आधार पर इन क्षेत्रों के लिए तैयार करने के क्षेत्र के विकास की योजना, स्थानीय समुदायों द्वारा पर्याप्त भागीदारी के साथ परिकल्पना की गई है।

डेजर्ट निवास

भारत के शुष्क और अर्द्धशुष्क क्षेत्र भारत के भौगोलिक क्षेत्र का 127·3 गृह मंत्रालय 38·8% शामिल है और 10 राज्यों में फैला हुआ है। भारतीय रेगिस्तन जीव स्तनधारी और सर्दियों में प्रवासी पक्षियों की प्रजाती विविधता में अत्यन्त समृद्ध है। हालाँकि प्राकृतिक संसाधन के आधार पर एक तेजी से बढ़ती जनसंख्या के दबाव के रेगिस्तान पारिस्थितिकी प्रणालियों के संरक्षण के लिए नवीन और एकीकृत उपायों को अपनाने की जरूरत है। नीति ऐसी गहन पानी और पारंपरिक और विज्ञान आध्यारित ज्ञान पर आधारित प्रथाओं के माध्यम से नमी संरक्षण, और पारंपरिक बुनियादे ढांचे पर निर्भर जैसे उपायों के लिए करना है।

नीति वन निर्भर ध्यान में (पेसा) के प्रावधानों लेने के समुदायों के पारंपरिक हकों की कानूनी मान्यता देने की दिशा में काम कर करना है। यह एक गंभीर एतिहासिक अन्याय उपाय होता है, उनकी आजीविका को सुरक्षित, वन विभाग के साथ संघर्ष की संभावनाओं को कम करने और वनों के संरक्षण के लिए इन समुदायों के लिए समय से termincentives प्रदान करते हैं।

Scanned by CamScanner

वन्य जीवन

नीति संरक्षण और सामुदायिक भंडार सहित देश के संरक्षित क्षेत्र (पीरा) नेटवर्क का विस्तार करने के देश के सभी जैव-गौगोलिक क्षेत्रों के लिए उचित प्रतिनिधित्व देने के लिए करना है। ऐसा करने में, उद्देश्यों और राष्ट्रीय पर्यावरण नीति के सिद्धान्तों, विशेष रूप से करने के मामले में कदम के चित्रण के लिए मानदण्डों का विकास, स्थानीय समुदायों, संबंधित सरकारी एजेंसियों और अन्य हितधारकों जो सुरक्षा और संरक्षण मे प्रत्यक्ष और ठोस हिस्सेदारी है की भागीदारी वन्य जीवों के सामाजिक-आर्थिक विकास की जरूरतों के साथ पारिस्थितिकी और भौतिक सुविधाओं के अनुरूप करने के लिए।

झीलें

रामसर कन्वेंशन झीलों के रूप में, दलदल, पीट भूमि या पानी के क्षेत्रो को परिभाषित करता है कि क्या प्राकृतिक या कृत्रिम, स्थायी या अस्थायी, पानी है कि स्थिर या बह रही है, ताजा, खारा या नमक है, जो समुद्री पानी की गहराई के क्षेत्रों सहित के साथ जो कम ज्वार में छह मीटर से अधिक नहीं है, जिससे अवधि के लिए एक व्यापक गुंजाईश दे रही है। झीलों को प्रदूषण इसके अलावा, जल निकासी और कृषि और मानव बस्तियों के लिए रूपांतरण से खतरे में हैं। नीति पहचान मूल्यवान झीलों के लिए एक कानूनी रूप से लागू नियामक तंत्र, उनके गिरावट को रोकने और उनके संरक्षण को बढ़ाने के लिए की स्थापना करना है।

पर्यावरण प्रबन्ध (Environmental Management)

पर्यावरण एक जटिल प्रक्रिया है। पर्यावरण प्रबन्ध द्वारा मुख्यत: पर्यावरणीय प्रक्रियाओं एवं जैव प्रणालियों का अनुरक्षण, जैव विविधता की रक्षा, पर्यावरणीय प्रदूषण का नियन्त्रण, जनसंख्या स्थिरीकरण, व्यर्थ पदार्थों का पुन:उपयोग, भूमि अपघटन का नियन्त्रण तथा जैव प्रजातियों एवं पर्यावरणीय तन्त्रों का सतत् उपयोग इत्यादि कार्य सम्पन्न होते हैं। प्रबन्ध का अर्थ है विविध वैकल्पिक सुझावों में से जागरूकता, पूर्ण चयन जिसमें मान्य एवं वांछित लक्ष्यों के प्रति वचनबद्धता हो प्रबन्ध के अन्तर्गत वास्तविक अल्पकालिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु निर्मित रणनीति या रणनीतियों की सुविचारित स्वीकृति को सम्मिलित किया जाता है। इसमें दीर्घकालीन चयनों के संरक्षण के लिये पर्याप्त लचीलापन होना चाहिये।

पर्यावरण प्रबन्ध के उद्देश्य (Objectives of Environmental Management)

व्यक्ति अथवा समाज की वरीयताओं तथा आवश्यकताओं के अनुसार पर्यावरण प्रबन्ध के अनेक प्रकार के उद्देश्य होते है। सामान्यत: पर्यावरण प्रबन्ध का मुख्य उद्देश्य पर्यावरण की गुणवत्ता को बनाये रखना है। पर्यावरण गुणवत्ता का विश्लेषण भिन्न-भिन्न व्यक्ति भिन्न-भिन्न प्रकार से करते हैं। पर्यावरण प्रबन्ध के मुख्य उद्देश्यों को निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है—

(1) सौन्दर्य प्रसाधनों, मनोरंजन तथा आवश्यकताओं की पूर्ति सुनिश्चित करने हेतु पर्यावरण की गुणवत्ता का संरक्षण करना।

(2) उत्पादन और नवीनीकरण के संतुलित चक्र के माध्यम से उपयोगी वनस्पतियों, पदार्थों के अनवरत उत्पादन को सुनिश्चित करना।

पर्यावरणीय प्रबन्ध के महत्वपूर्ण पहलू (Important Aspects of Environmental Management)

पर्यावरण प्रबन्ध के अन्तर्गत निम्नलिखित प्रकार के कार्य आते है—

1. पर्यावरण प्रदूषण पर नियन्त्रण।
2. पर्यावरणीय प्रक्रियाओं एवं जैव प्रणालियों का अनुरक्षण।
3. भूमि अपघटन का नियन्त्रण।
4. समन्वित भूमि उपयोग।

5. व्यर्थ पदार्थों का पुन: उपयोग।
6. जैव विविधता की रक्षा।
7. जनसंख्या स्थिरीकरण।
8. वनों के विनाश एवं रेगिस्तान की वृद्धि की रोकथाम।
9. जैव प्रजातियों तथा पर्यावरणीय तन्त्रों का सतत् उपयोग।
10. पर्यावरण संगत मानव बस्तियों का निर्माण।
11. पर्यावरण शिक्षा, जागरूकता व अधिनियम।

पर्यावरण प्रबन्ध के अंग
(Parts of Environmental Management)

पर्यावरण प्रबन्ध को निम्न वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

(i) पर्यावरणीय नियोजन (Environmental Planning)

(ii) पर्यावरणीय स्थिति का आकलन (Environmental status evaluation)

(iii) पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन (Environmental impact assessment)

(iv) पर्यावरणीय अधिनियम एवं प्रशासन (Environmental acts and administration)

पर्यावरण प्रबन्ध पद्धति
(Environmental Management System) (E.M.S.) (ISO-14000)

यद्यपि संस्थायें पर्यावरण का ही अंग होती है फिर भी वे पर्यावरण पर प्रभाव छोड़ती हैं। प्रत्येक व्यवसाय अपने-अपने प्रकार से पर्यावरण को प्रभावित करता है। पर्यावरण प्रबन्ध पद्धति का मुख्य उद्देश्य संस्थानो को पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों को नियंत्रित करने तथा कम करने के लिये मार्गदर्शन देना है।

पर्यावरण प्रबन्ध पद्धति का विकास
(Evolution of E.M.S.)

विश्व के विभिन्न भागों मे हुई दुर्घटनाओं एवं पर्यावरण जागरूकता के कारण विश्व स्तर पर प्रदूषण कम करने की आवश्यकता अनुभव की गयी। वर्ष 1993 में मान्ट्रियल कान्फ्रेंस (Montreal Conference) आयोजित की गयी जिसमें वर्ष 2000 तक क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC) गैस की मात्रा को कम करने का निर्णय लिया गया।

विभिन्न प्रकार के प्रदूषकों का मुख्य प्रभाव निम्न प्रकार है—

1. जंगलों की समाप्ति
2. ओजोन पर्त का नष्ट होना
3. अम्ल वर्षा एवं बंजर भूमि का बढ़ना
4. पादप गृह प्रभाव

प्रदूषण नियन्त्रण के उद्देश्य से बहुत से अधिनियम समय-समय पर बनाये गये हैं। अन्तर्राष्ट्रीय मानक संस्थान (International Standard Organisation – ISO) ने एक नीतिगत सलाहकार समिति (Strategic Advisory Group on Environment – 'SAGE') स्थापित की। इसे समिति ने वर्ष 1995 में प्रकाशित किया।

ISO - 14001 (प्रमाणीकरण की आवश्यकता)

किसी भी संस्था को उक्त प्रमाण पत्र लेने की आवश्यकता निम्न कारणों से होती है—

Scanned by CamScanner

1. बीमा सम्बन्धी खतरों में कमी।
2. ग्रीन कार्पोरेट इमेज को उभार कर शेयर प्राप्त करना।
3. गिरफ्तारी अथवा अभियोग के खतरे में कमी।
4. कीमत घटना।
5. अधिक नियमानुसार निवेश करना।

विभिन्न अनुच्छेद (Different Clauses)

(1) सामान्य अनुच्छेद (General Clause)—सामान्य अनुच्छेद में पर्यावरण प्रबन्ध पद्धतियों के उद्देश्यों का उल्लेख किया गया है। इसके अन्तर्गत स्थापना, मासिक प्रगति मीटिंग, सुधार कार्य, मरम्मत, सुधार कार्य एवं प्रबन्ध सुधार आदि के विषय में जानकारी उपलब्ध करायी गयी है।

(2) योजना अनुच्छेद (Planning Clause)—योजना अनुच्छेद एक निर्देशक के रूप में कार्य करता है। इसमें निम्नलिखित उप-अनुच्छेद है—

(i) कानूनी एवं अन्य आवश्यकतायें
(ii) पर्यावरणीय मामले
(iii) पर्यावरण प्रबन्ध कार्यक्रम
(iv) उद्देश्य एवं लक्ष्य

(3) नीतिगत अनुच्छेद (Policy Clause)—परिस्थितियों को अपने अनुसार चलाने में सक्षम होने हेतु हमें इस प्रमाण पत्र की आवश्यकता होती है। इससे निम्नलिखित संस्थायें आकर्षित होती हैं—

(i) संस्थान के आस-पास का समाज
(ii) बीमा कम्पनियाँ
(iii) शेयर धारक
(iv) कर्मचारी वर्ग
(v) संस्थान उत्पाद के उपभोक्ता
(vi) वित्तीय संस्थायें जैसे बैंक आदि।

(4) प्रबन्ध सुधार अनुच्छेद (Management Review Clause)—इस अनुच्छेद में किसी संस्थान की प्रगति को मापने एवं उसका आकलन करने में सहायक होने वाली बातों पर विचार किया जाता है। इस कार्य को प्रत्येक तिमाही या छमाही में पूर्ण कर लेना चाहिए।

(5) उप-अनुच्छेदों को लागू करना (Implementation of Sub-Clause)—इस कार्य को निम्नलिखित प्रकार से किया जाता है—

(i) प्रशिक्षण एवं जागरूकता द्वारा
(ii) पर्यावरण प्रबन्ध विधियों के अभिलेखीकरण द्वारा
(iii) आकस्मिक घटनाओं हेतु पूर्व तैयारी द्वारा
(iv) संचालन पर नियन्त्रण द्वारा
(v) संप्रेषण द्वारा
(vi) अभिलेखों पर नियन्त्रण द्वारा
(vii) ढाँचा एवं जिम्मेदारी द्वारा

(6) जाँच एवं सुधार कार्य उप-अनुच्छेद (Checking and Corrective Action Sub-Clause)—इस उप-अनुच्छेद में निम्नलिखित का उल्लेख किया गया है—

(i) अभिलेख (Records)
(ii) प्रबोधन एवं मापन (Monitoring and Measurement)
(iii) पर्यावरण प्रबन्ध पद्धतियों का लेखा परीक्षण (Audit)
(iv) सुधार तथा नियन्त्रण कार्यों की जाँच करना।

ISO-14001 लागू करना (Implementation of ISO-14001)

ISO-14001 लागू कराने के लिये किसी संस्थान को सर्वप्रथम आरम्भिक पर्यावरण पुनर्निरीक्षण (Preparatory Environmental Review) (P.E.R.) तैयार कर लेना चाहिये, इसके अन्तर्गत निम्नलिखित चरण आते हैं—

(i) पर्यावरण परिस्थितियों का सार्थक मूल्यांकन (Evaluation of Significant Environmental Aspect)
(ii) वर्तमान पर्यावरणीय उपायों एवं विधियों का परीक्षण (Examination of Existing Environmental Practices and Procedures)
(iii) पूर्ववर्ती घटनाओं का आकलन
(iv) नियम एवं कानून का अनुपालन

यह रिपोर्ट पर्यावरण प्रबन्ध पद्धति (EMS) के सभी ज्वलन्त मुद्दों को उजागर करती है।

प्रश्नावली

1. जल (प्रदूषण रोकथाम एवं नियंत्रण) अधिनियम-1974 के बारे में संक्षिप्त नोट लिखिये।
2. जल अधिनियम-1974 की आवश्यकता एवं महत्व पर प्रकाश डालिये।
3. वायु (प्रदूषण रोकथाम एवं नियंत्रण) अधिनियम-1981 के बारे में आप क्या जानते हैं? इसका अनुपालन कैसे कराया जा रहा है? (B.T.E. 2015)
4. पर्यावरण संरक्षण अधिनियम-1986 पर टिप्पणी लिखिये।
5. भयावह अपशिष्ट पर नियन्त्रण के लिये कौन-से नियम बनाये गये हैं? संक्षिप्त विवरण दीजिये।
6. खतरनाक रसायनों पर नियन्त्रण कैसे किया जा रहा है? सम्बन्धित नियम का उल्लेख कीजिये। यह नियम अन्तिम बार कब संशोधित किया गया है?
7. ध्वनि प्रदूषण (नियमन एवं नियंत्रण) (संशोधन) नियम (2002) पर संक्षिप्त नोट लिखिये।
8. नगरपालिका अपशिष्ट (प्रबन्धन एवं हस्तान) नियम 2000 क्या है? बताइये।
9. पुन: चक्रीकृत प्लास्टिक (निर्माण एवं प्रयोग) (संशोधन) नियम 2003 में क्या-क्या प्रावधान किये गये हैं?
10. निम्न पर टिप्पणी लिखिये—
    (a) पुन: चक्रीकृत प्लास्टिक (b) जैव चिकित्सीय अपशिष्ट
    (c) भयावह अपशिष्ट (d) भयावह रसायन।
11. जल (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1974 में वर्णित प्रमुख प्रावधानों पर प्रकाश डालिये।
12. वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1981 के मुख्य प्रावधान क्या हैं? (B.T.E. 2016)
13. पर्यावरण प्रदूषण (प्रदूषण का निवारण व नियंत्रण) अधिनियम 1986 का संक्षिप्त परिचय दीजिये।
14. पर्यावरण प्रदूषण (प्रदूषण का निवारण व नियंत्रण) अधिनियम 1986 के प्रमुख प्रावधानों का उल्लेख कीजिये।
15. भयावह रसायनों के निर्माण, भण्डारण एवं आयात (संशोधन) नियम-2000 के क्या उद्देश्य हैं? बताइये।

Scanned by CamScanner

16. पचव्ह अपशिष्ट (प्रबन्ध एवं हस्तगन) (संशोधन) नियम-2003 के प्रमुख प्रावधानो का उल्लेख कीजिये। (UPBTE 2014)
17. ध्वनि प्रदूषण (नियमन एवं नियंत्रण) (संशोधन) नियम-2000 के प्रमुख प्रावधानों का संक्षिप्त विवरण दीजिये।
18. नगरपालिका ठोस अपशिष्ट (प्रबन्ध एवं हस्तगन) नियम-2000 के प्रमुख प्रावधानो का उल्लेख कीजिये।
19. पर्यावरणीय विधान (Environmental Legislation) पर विस्तृत टिप्पणी लिखिए। (B.T.E. 2008)
20. निम्नांकित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए—
    (i) पर्यावरणीय विधि निर्माण (Legislation) की आवश्यकता। (B.T.E. 2011)
    (ii) जैव चिकित्सीय (Bio-Medical) अपशिष्ट [प्रबन्धन एवं हस्तन (Handling)] संशोधन नियम 2003 के महत्वपूर्ण प्रावधान। (B.T.E. 2007, 12)
21. पर्यावरणीय सघात निर्धारण विधि क्या है? (B.T.E. 2008)
22. वातावरणीय प्रभाव के मूल्यांकन को समझाइये। (B.T.E. 2010)
23. विकास परियोजना बनाने में पर्यावरण आघात अनुमान का क्या महत्व है? (B.T.E. 2009)
24. पर्यावरण प्रभाव मूल्यांकन के उद्देश्य कौन-कौन से है? उल्लेख कीजिये। (B.T.E. 2016)
25. पर्यावरण प्रभाव मूल्यांकन की विधियों का संक्षिप्त परिचय देते हुए व्याख्या कीजिये। (B.T.E. 2016)
26. पर्यावरण प्रबन्ध से आपका क्या तात्पर्य है?
27. पर्यावरण प्रबन्ध पद्धतियों (Environmental Management Systems) के कौन-कौन से उद्देश्य हैं? (B.T.E. 2013, 14, 15)
28. पर्यावरण प्रबन्ध पद्धतियों की आवश्यकता पर प्रकाश डालिये। (B.T.E. 2014)
29. पर्यावरण प्रबन्ध पद्धतियों (EMS) - ISO - 14000 पर एक संक्षिप्त नोट लिखिये।
30. राष्ट्रीय पर्यावरण नीति की विवेचना कीजिए। केन्द्रीय हस्तक्षेप की क्या आवश्यकता है? (B.T.E. 2013, 15, 16)

□

अध्याय 7

ऊर्जा के उपयोग का पर्यावरण पर प्रभाव (Impact of Energy Usage on Environment)

भूमण्डलीय तापन (Global Warming)

वायु में कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) की मात्रा बढ़ने और हरित गृह प्रभाव (Green House Effect) के कारण पृथ्वी का तापमान लगातार बढ़ता जा रहा है जिसके फलस्वरूप ध्रुवों पर जमी बर्फ पिघलने लगेगी तथा उससे निकले पानी से समुद्र का तल बढ़ने लगेगा। इससे समुद्र तटीय नगर पानी मे डूब जायेंगे, ध्रुव प्रदेशो पर बर्फ पिघलने लगेगी। तापमान बढ़ने से अनेक स्थान रहने योग्य नही रह जायेंगे। नई-नई बीमारियाँ उत्पन्न होंगी। ऐसी क्रियाये की जानी चाहिए, जिनसे तापक्रम घटे तथा वनों का प्रतिशत भी बढ़ाया जाना चाहिये। ग्रीन हाउस में काँच की दीवारो एवं छत से बना एक मकान होता है। इसके अन्दर पेड़-पौधे पर विभिन्न प्रयोग किये जाते है। इसी को ग्रीन हाउस कहते है। इस ग्रीन हाउस के अन्दर का तापमान काफी समय तक स्थिर रखा ज सकता है। पौधों के वातावरण का ताप ठण्डी हवाओं से कम नही हो पाता है। सूर्य से आने वाली सम्पूर्ण विकिरण अन्दर नहीं पहुँच पाती है और न ही अन्दर से विकिरण बाहर जाने पाता है। काँच का कार्य CO_2 एवं जल वाष्प के मिश्रण की ही भाँति होता है। CO_2 के ग्रीन हाउस की भाँति व्यवहार करने को ग्रीन हाउस प्रभाव कहते है।

कुछ अन्य गैसे भी ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करती हैं। इसमें मुख्यतः कार्बन डाई ऑक्साइड (CO_2), मीथेन (CH_4), नाइट्रस ऑक्साइड (N_2O), क्लोरोफ्लोरो कार्बन (CFC) तथा हाइड्रोफ्लोरोकार्बन (HCF) गैसें होती हैं।

वर्ष 1850 में वायुमण्डल मे उपरोक्त गैसों के सान्द्रण तथा वर्ष 2030 में सम्भावित सान्द्रणं के कारण वायुमण्डलीय औसत तापमान में वृद्धि निम्नानुसार होने की सम्भावना है।

→ CO_2 के कारण 71% (लगभग)

→ CH_4 के कारण 13% (लगभग)

→ N_2O के कारण 5·5% (लगभग)

→ CFC तथा HFC के कारण 10·5% (लगभग)

भूमण्डलीय तापन के प्रभाव (Effects of Global Warming)

भूमण्डलीय औसत ताप के बढ़ने अर्थात् ग्लोबल वार्मिग के प्रभाव निम्नलिखित है—

1. **ध्रुवीय बर्फ का पिघलना**—ध्रुवों पर जमी हुई बर्फ के रूप में लगभग 7 मिलियन घन मीटर पानी है। यदि सम्पूर्ण बर्फ पिघल जाये तो समुद्र का तल 7-8 मीटर तक ऊँचा उठ जायेगा जिससे कई द्वीप समूचे ही जल मग्न हो जायेंगे।

2. **तापमान में वृद्धि**—CO_2 की सान्द्रता इस समय 340 PPm है और सन् 2030 के लगभग इसके 640 PPm तक पहुंच जने की सम्भावना है। यदि ऐसा हुआ तो भूमण्डल का औसत तापमान 1·5–4·5°C तक बढ़ जायेगा।

3. **समुद्र तल का बढ़ना**—भूमण्डल के औसत तापमान में 1·5–5·5°C की वृद्धि से समुद्र का तल 25 cm से 165 cm तक बढ़ जाने की सम्भावना है। पहला समुद्री जल का ऊष्मीय प्रसार एवं दूसरा ध्रुवीय बर्फ का पिघलना, अगर उपरोक्त कारणों से समुद्र तल बढ़ जाये तो खाड़ी के किनारे के क्षेत्र जैसे बांग्लादेश, अमेरिका का बोस्टन शहर, कोलकाता शहर आदि निचले शहरों के पूर्ण रूप से डूब जाने का खतरा उत्पन्न हो जायेगा।

4. **प्रजातियों पर प्रभाव** (Effects on Species)—प्रत्येक पादप एव जन्तु एक विशेष तापक्रम सीमा में जीवित रहते हैं। ताप वृद्धि होने पर बहुत-सी प्रजातियां ध्रुवों की ओर स्थानान्तरित हो सकती हैं तथा कई प्रजातियाँ जल्द स्थानान्तरित न होने के कारण मर भी सकती है। बहुत से पेड़-पौधे विलुप्त हो सकते है।

Scanned by CamScanner

5. मौसम परिवर्तन—भूमण्डल के औसत तापमान में 3°C की वृद्धि से उच्च अक्षांश पर औसतन ताप 10°C तक बढ़ जायेगा। ग्रीन हाउस प्रभाव के कारण सर्दी की ऋतु छोटी एवं आर्द्र हो जायेगी तथा गर्मी की ऋतु लम्बी शुष्क हो जायेगी। ताप वृद्धि से वाष्पीकरण अधिक होगा एवं 7% से 11% तक वर्षा अधिक होने लगेगी।

6. अन्न उत्पादन (Food Production)—भूमण्डलीय ताप वृद्धि बीमारियों के अधिक बढ़ जाने, घास के अधिक उगने व पौधों की श्वसन क्रिया के तेज हो जाने के कारण फसलों की पैदावार घटा देती है। एक अनुमान के अनुसार दक्षिण पूर्व एशिया में चावल का उत्पादन प्रति 1°C ताप वृद्धि में 5% कम हो जायेगा यद्यपि वायुमण्डल में CO_2 सान्द्रण में वृद्धि फसलों की उपज बढ़ाने में सहायक होती है परन्तु विश्व का कुल अनाज उत्पादन भूमण्डलीय ताप बढ़ने पर घट जायेगा।

भूमण्डलीय तापन से बचाव के उपाय
(Remedial Measures with Global Warming)

भूमण्डलीय तापन से बचने के निम्नलिखित उपाय हैं—

1. जमीन के अधिक से अधिक भाग पर वृक्षारोपण करके वायुमण्डल में उपस्थित CO_2 का प्रकाश संश्लेषण कराके CO_2 का सान्द्रण कम कर सकते हैं।
2. भूगर्भीय ईंधन का प्रयोग कम करके तथा ऊर्जा के अन्य स्रोतों जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा आदि का विकास करके ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन कम किया जा सकता है।
3. क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC) के स्थानापन्न का विकास करके भूमण्डलीय तापन कम किया जा सकता है।

ग्रीन हाउस गैसें (Green House Gases)

जलवायु परिवर्तन व तापमान वृद्धि का अध्ययन संयुक्त राष्ट्र की संस्था Intergovernmental Panel on Climate Change (IPCC) द्वारा किया जाता है। इसने अपनी चौथी समीक्षा रिपोर्ट वर्ष 2007 में प्रस्तुत की थी। इस रिपोर्ट के अनुसार यदि पर्यावरण में कार्बन की मात्रा 400 भाग प्रति मिलियन से अधिक हो जाती है, तो विश्व का तापमान 2°C की सीमा पार कर जायेगा। वर्तमान में पर्यावरण में कार्बन की मात्रा 380 प्रति मिलियन है। रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2100 तक विश्व तापमान में परिस्थितियों के अनुसार 1·1°C से 4·6°C तक वृद्धि हो सकती है। अतः वर्तमान में विश्व के तापमान में वृद्धि 2°C से कम होते हुए भी उसके आस-पास होगी।

विश्व तापमान में वृद्धि का प्रमुख कारण ग्रीन हाउस गैसों जैसे—कार्बन डाई-ऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रियस ऑक्साइड, हाइड्रोफ्लोरो कार्बन, सल्फर डाई-ऑक्साइड आदि की मात्रा में वृद्धि होना है। इनकी मात्रा में वृद्धि का मुख्य कारण विकास कार्य, यातायात, औद्योगीकरण एवं वनों की कमी होना है। जब पर्यावरण में इन गैसों की मात्रा अधिक होती है तो ये गैसें सूर्य से आने वाली ऊष्मा को वापस आकाश में नहीं जाने देती जिससे पृथ्वी के तापमान में वृद्धि हो जाती है। इस घटना को ग्रीन हाउस प्रभाव भी कहते हैं।

अमेरिका सहित अन्य विकसित देश ग्रीन हाउस गैसों में कटौती के लिए किसी बाध्यकारी लक्ष्य को स्वीकार करने के लिए तब तक तैयार नहीं हैं, जब तक बड़े विकासशील देश जैसे भारत, चीन भी बाध्यकारी कटौती के लक्ष्य को स्वीकार नहीं करते। दूसरी तरफ विकासशील देशों का यह तर्क है कि अभी तक तापमान वृद्धि व कार्बन उत्सर्जन में सबसे अधिक योगदान विकसित देशों का है। अतः सबसे पहले विकसित देशों को कटौती करनी चाहिए। कार्बन वृद्धि में उनकी ऐतिहासिक जिम्मेदारी है दूसरी तरफ विकासशील देश अभी विकास के लक्ष्य से दूर हैं। अतः कार्बन कटौती की बाध्यता बाद में थोपी जानी चाहिए। इन चारों देशों ने कोपेनहेगन सम्मेलन के दौरान जिस समूह का निर्माण किया था उसे BASIC समूह (Brazil, India, South Africa, China) के नाम से जाना जाता है।

ओजोन (Ozone O_3)

स्ट्रैटोस्फियर (Stratosphere) के ऊपरी भाग में कुल O_2 का 90% भाग मौजूद है। यह मानव जाति एवं जीव-जन्तुओं के लिये एक सुरक्षा कवच का कार्य करती है। सूर्य से आने वाली पराबैंगनी किरणों को रोकती है। लेकिन पृथ्वी पर इस गैस का

उपयोग संक्रामक, दोषनाशक (Disinfectant) के रूप में कपड़ों का रंग उड़ाने आदि में किया जाता है। ओजोन की हाइड्रोकार्बन से क्रिया बड़ी खतरनाक हो जाती है। इससे पैदा होने वाली गैसें धूम्र-कुहासे को जानलेवा बना देती हैं। सौर विकिरण के कारण ही ओजोन स्ट्रैटोस्फियर के ऊपरी भाग में बनती है। यह गैस खाँसी, दमा, सिर दर्द, आँख, नाक एवं गले की बीमारियाँ उत्पन्न करती हैं। ओजोन गैस पेड़-पौधों की पत्तियों में प्रवेश करके कोशिकाओं को नष्ट कर देती है और यह पेन्ट, रबर, बुनाई के धागे एवं रंगों को शीघ्र ही ऑक्सीकृत कर देती है।

भूतल पर ओजोन की उपस्थिति प्राणिजगत के लिये अत्यन्त ही हानिकारक है जबकि ऊपरी वायुमण्डल में यह गैस प्राणिजगत के लिये सुरक्षा कवच का कार्य करती है। गैस की पूर्ति सूर्य से निकलने वाली पराबैंगनी किरणों को अवशोषित कर लेती है जिससे मनुष्य इन हानिकारक विकिरणों के प्रभाव से सुरक्षित रहता है। पराबैंगनी किरणों को अवशोषित करके ओजोन गैस O_2 तथा O में बदल जाती है। दुबारा ये दोनों गैसें संयुक्त होकर O_3 बना देती हैं और साथ ही ऊष्मा का भी उत्सर्जन करती हैं।

$$O_3 \xrightarrow{\text{पराबैंगनी विकिरण}} O_2 + O$$

$$O_2 + O \longrightarrow O_3 + \text{ऊष्मा}$$

दोनों क्रियाओं में सन्तुलन बना रहता है। यह गैस स्ट्रैटोस्फियर में समुद्र तल से 20 से 26 किमी॰ की ऊँचाई के मध्य स्थित रहती है और यदि इस गैस को ऊर्ध्वाधरतः मानक ताप एवं दाब (0° सेल्सियस एवं 760 mm पारे का दाब) तक संपीडित किया जाये तो भूमध्य रेखा के ऊपर इसकी मोटाई 0·29 सेमी॰ (290 DU) तथा ध्रुवों के ऊपर इस पर्त की मोटाई 0·40 सेमी॰ (400 DU) पायी जाती है। ओजोन पर्त की मोटाई Dabson Unit (DU) में ज्ञात की जाती है।

1 DU = 0·01 mm संपीडित गैस (मानक ताप एवं दाब पर)

= 1 PPb (Part per billions)

पराबैंगनी विकिरण तीन प्रकार का होता है—

1. UV-A (320-400 nm)
2. UV-B (280-320 nm)
3. UV-C (200-280 nm)

UV-B तथा UV-C विकिरण काफी खतरनाक है जबकि UV-A खतरनाक नहीं है। सौभाग्य से UV-C ऊपरी वायुमण्डल में स्थित O_2 तथा O_3 के द्वारा अवशोषित कर ली जाती है। UV-B भी स्ट्रैटोस्फियर में O_3 द्वारा अवशोषित कर ली जाती है। इसका केवल 2 से 3 प्रतिशत भाग ही जमीन पर पहुँच पाता है।

ओजोन छिद्र या ओजोन रिक्तीकरण
(Ozone Hole or Ozone Depletion)

ओजोन परत के किसी स्थान पर पतले हो जाने को ही ओजोन छिद्र या ओजोन रिक्तीकरण कहते हैं। वर्ष 1956-1970 तक बसन्त ऋतु (फरवरी-अप्रैल) में एण्टार्टिका के ऊपर ओजोन पर्त की मोटाई 325 DU से 280 DU तक बदल गयी। वर्ष 1979 में यह तेजी से घटकर 225 DU रह गयी तथा वर्ष 1985 में यह मात्र 136 DU रह गयी, इसी कमी को ओजोन छिद्र कहा गया। 200 DU से अधिक मोटी पर्त सामान्य पर्त कहलाती है तथा इससे कम मोटाई की पर्त को ओजोन छिद्र की श्रेणी में माना जाता है।

कई प्रदूषक स्ट्रैटोस्फियर में पहुँचकर ओजोन पर्त को नष्ट करते हैं। जैसे क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC_5), मीथेन (CH_4) तथा नाइट्रोजन के ऑक्साइड (NOx) इनमें से CFC_5 बहुत अधिक घातक हैं। CFC की ओजोन से क्रिया निम्न प्रकार है—

$$CFC_5 \xrightarrow{UV} Cl$$

Scanned by CamScanner

$$\text{Halons} \xrightarrow{UV} Br$$

$$Cl + O_3 \longrightarrow ClO + O_2$$

$$ClO + O_3 \longrightarrow Cl + 2O_2$$

वायुमण्डल में CFC विघटन पराबैंगनी किरणों द्वारा होता है तथा इससे क्लोरीन मुक्त होती है। यह क्लोरीन फिर O_3 से क्रिया करके क्लोरीन ऑक्साइड (ClO) बनाती है तुरन्त ही क्लोरीन ऑक्साइड विघटित होकर अक्सीजन परमाणु (O) मुक्त कर देती है जो कि अणुओं में परिवर्तित हो जाती है। इस प्रकार पुनः मुक्त हुई क्लोरीन फिर ओजोन से क्रिया करती है। क्लोरीन बिना नष्ट हुए ओजोन गैस को आक्सीजन में बदलती रहती है। यह क्लोरीन 100 वर्षों तक सक्रिय रहती है और HCl में परिवर्तित होने से पूर्व एक क्लोरीन परमाणु (Cl) एक लाख ओजोन अणुओं को नष्ट कर सकता है।

क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC) का प्रयोग रेफ्रीजरेटर, वातानुकूल यंत्र, परफ्यूम, शेविंग फोम, पफ (PUF), अग्निशमन यंत्र, माइक्रोचिप्स धोने का घोल एवं कम्प्यूटर मे इलेक्ट्रोनिक परिपथ बोर्ड बनाने मे किया जाता है। CFC का जीवन काल (10-100) वर्ष का होता है। CFC का 90% वायुमण्डल में चला जाता है।

पराबैगनी विकिरणों से कई तरह की बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती है, जैसे—त्वचा रोग, त्वचा कैंसर, अंधापन एवं मोतिया बिन्द आदि। पराबैगनी किरणें पौधो की बाढ़ प्रकाश संश्लेषण एवं फुलवाड़ी को काफी नुकसान पहुंचाती है। बहुत से पदार्थ जैसे लकड़ी, प्लास्टिक, रबड़ आदि भी क्षतिग्रस्त हो जाते हैं।

अम्ल वर्षा (Acid Rain)

सल्फर डाईऑक्साइड (SO_2) सल्फ्यूरस अम्ल H_2SO_3 बनाती है।

$$SO_2 + H_2O \longrightarrow H_2SO_3$$

अम्ल वर्षा जल के pH मान को कम कर देते हैं। जब वर्षा जल का pH मान 5·7 से कम हो जाता है तब यह अम्ल वर्षा कहलाती है। वायुमण्डल में उपस्थित नाइट्रोजन ऑक्साइड गैसें भी वर्षा जल से मिलकर नाइट्रिक अम्ल (HNO_3) बनाती है। अम्ल वर्षा कुल 60 से 70% सल्फर डाईऑक्साइड के कारण होती है। कार्बन मोनोऑक्साइड (CO) एवं कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) भी वर्षा जल के साथ कार्बोनिक अम्ल बनाते हैं जोकि जल को अम्लीय बना देते हैं। कुछ स्थानों पर अम्ल वर्षा का pH मान 2·8 तक पाया गया है। अम्ल वर्षा से होने वाले प्रभाव निम्नलिखित है—

1. **पेड़ पौधों पर प्रभाव** (Effect on Plants)—अम्ल वर्षा से पौधे नष्ट हो जाते है तथा पत्तों का रंग भी उड़ने लगता है एव पत्तो के क्लोरोफिल की कमी के कारण फसल की बढ़त भी रुक जाती है।

2. **जीव-जन्तुओं पर प्रभाव** (Effect on Animals)—जल में रहने वाले सभी जीव 4 से कम pH मान की वर्षा की एक बूंद भी सहन नही कर सकते हैं। सामान्यतः 6 से कम pH पर कई अल्गाई (algae) जैसी कोमल वनस्पतियाँ भी नष्ट हो जाती है।

3. **पदार्थों पर प्रभाव** (Effect on Materials)—सल्फ्यूरिक अम्ल एक तीव्र क्रियाशील एवं क्षयकारी (Corrosive) है। इसके प्रभाव से लोहे की सतह पर नीला $FeSO_4$, कॉपर की सतह पर हरा $CuSO_4$ एवं ऐलुमिनियम की सतह पर सफेद $Al_2(SO_4)_3$ जम जाता है। यह कपड़े, कागज तथा चर्म उत्पादो का रंग उड़ा देता है और उनकी सामर्थ्य भी नष्ट कर देता है।

अम्ल वर्षा से विशेषकर क्षारीय भवन निर्माण सामग्री जैसे चूना पत्थर, डोलोमाइट स्लेट एवं संगमरमर आदि खराब हो जाते हैं। इनकी सतह खुरदरी एवं कमजोर हो जाती है। $CaCO_3$ को यह $CaSO_4$ में बदल देता है जो जल मे घुलनशील होता है।

प्रकृति संरक्षण के अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास
(International Efforts for Conservation of Nature)

प्रकृति के संरक्षण हेतु किये गये कुछ अन्तर्राष्ट्रीय प्रयास निम्नलिखित है—

1. वर्ष 1977 मे संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP) के सहयोग से ओजोन पर्त की सुरक्षा पर एक विश्वव्यापी योजना हेतु वाशिंगटन में 32 देशों की एक बैठक बुलायी गयी।

2. **मॉंट्रियल प्रोटोकॉल** (Montreal Protocol)—वर्ष 1987 में विश्व के 27 औद्योगिक देशों ने स्ट्रैटोस्फियर में स्थित ओजोन पर्त की सुरक्षा हेतु एक अन्तर्राष्ट्रीय सहमति पत्र पर हस्ताक्षर किये। इसी सहमति पत्र को मॉंट्रियल प्रोटोकॉल कहते है। इस प्रोटोकॉल के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं—

(i) ओजोन नष्ट करने वाले पदार्थों को बदल देना।

(ii) CFC के स्थान पर अन्य पदार्थों के प्रयोग में विकासशील देशो की सहायता करना।

(iii) ओजोन पर्त को नष्ट करने वाले पदार्थों का उत्पादन कम करना।

अब तक कुल 175 से अधिक देश इस सहमति पत्र पर हस्ताक्षर कर चुके है। भारत ने 17 सितम्बर 1992 को इस पर हस्ताक्षर किये थे। वर्ष 1987 से प्रत्येक वर्ष 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस के रूप में मनाया जाता है।

3. **टोरन्टो सम्मेलन** (Toronto Conference)—कनाडा के टोरन्टो सिटी में जून 1988 में एक विश्व सम्मेलन का आयोजन किया गया था जिसमें 2005 तक कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) के उत्सर्जन में 20% तक की कमी करने का निर्णय लिया गया था परन्तु इसके अनुपालन मे अनेकों व्यावहारिक समस्याएँ थी।

4. **भू-शिखर सम्मेलन** (Earth Summit)—संयुक्त राष्ट्र शिखर सम्मेलन (UNCED) वर्ष 1992 में पर्यावरण पर ब्राजील के रियोडी जैनेरो मे आयोजित किया गया था। इसे ही भू-शिखर सम्मेलन कहते हैं। इस सम्मेलन में ग्रीन हाउस गैसें को कम करने पर विचार किया गया।

5. **क्योटो प्रोटोकॉल** (Kyoto Protocol)—दिसम्बर 1997 में जापान के क्योटो शहर में एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन किया गया। इसमें सभी देशों द्वारा तय किया गया कि वर्ष 2008 से 2012 तक ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में 1990 के स्तर से 5% की कमी अवश्य की जाये।

6. जून 1997 मे न्यूयार्क में पृथ्वी सम्मेलन समीक्षा सम्मेलन आयोजित किया गया। इसमें 170 देशों से अधिक ने भाग लिया। इसमें ग्रीन हाउस प्रभाव तथा ओजोन छिद्र के खतरों पर चर्चा की गयी।

7. मराकस सम्मेलन—मोरक्को के मराकस शहर में वैश्विक ताप वृद्धि रोकने के लिये वर्ष 2001 में बनायी गयी आचार संहिता पर 165 देशों ने हस्ताक्षर किये।

8. सितम्बर 1998 में मॉंट्रियल (कनाडा) में 47 देशों की एक बैठक बुलायी गयी, जिसमें CFC तथा हैलन्स के उत्पादन पर 15 वर्ष मे पूर्ण प्रतिबन्ध का निर्णय लिया गया।

ग्रीन बिल्डिंग (Green Buildings)

पिछले तीन से चार दशकों मे, कई क्षेत्रों में जिनमें मानव सक्रियता से सक्रिय है, Cure की अवधारणा को निवारण की अवधारणा मे बदलना शुरु हो गया है। समानान्तर में निर्माण उद्योग के भीतर, ग्रीन बिल्डिग कॉन्सेप्ट अपने एक या दूसरे रूप में अस्तित्व में आया और यह अब दुनिया भर में अपनी गति प्राप्त कर रहा है।

ग्रीन बिल्डिंग कॉन्सेप्ट (Green Building Concept)

ग्रीन बिल्डिग अवधारणा व्यापक शब्दो मे, एक इमारत शामिल है, जो कि स्थायी स्वास्थ्य, सुधारकारी उत्पादउकता की रक्षा करने, बुद्धिमानी से प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग करने और पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने के उद्देश्य से डिजाइन, निर्मित, संचालित,रखरखाव या पुनः उपयोग की जाती है। दूसरे शब्दों में ग्रीन बिल्डिग प्रक्रिया भवन निर्माण के पर्यावरणीय

Scanned by CamScanner

चरण में पर्यावरण सम्बन्धी विचारों को शामिल करता है। यह प्रक्रिया डिजाइन, निर्माण, संचालन और रखरखाव चरणों पर केंद्रित है और बहुत डिजाइन और विकास-मेंटल दक्षता, ऊर्जा और जल दक्षता, संसाधन दक्षता, इनडोर पर्यावरणीयता, भवन-मालिक रखरखाव और पर्यावरण पर भवन के समग्र प्रभाव को ध्यान में रखती है। ग्रीन बिल्डिंग अवधारणा के कुछ पहलुओं को नीचे उल्लिखित किया गया है।

प्लॉट डिजाइन, तैयारी और विकास (Plot design, Preparation and Development)

विचारशील और कुशल साइट डिजाइन, विकास प्रथाओं से पर्यावरणीसय प्रभावों को कम करने में मदद मिलती है और नए निर्माण ऊर्जाप्रक्रिया में सुधार होता है। पेड़ों को बचाने पर ध्यान देने के साथ डिजाइन तूफानी जल, प्रतिधारण/घुसपैट सुविधाओं का निर्माण और सौर ऊर्जा को अधिकतम करने के लिए घर को उन्मुख करना एक हरे रंग की इमारत में बुनियादी पहलू है।

संसाधन क्षमता (Resource Efficiency)

यह एक तथ्य है कि हरे रंग की इमारत सबसे सफल होती है, जब डिजाइन चरण में संकल्पना शामिल और कार्यान्वित किए जाते है और उसे समय पर जो सामग्री/उत्पाद/प्रणाली चयन होता है। प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग को अनुकूलित करते हुए संसाधन कुशल डिजाइन और उपयोग करने वाले कुशल सामग्री का उपयोग करके कार्य को अधिकतम किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, इंजीनियर लकड़ी के उत्पाद संसाधनों का उपयोग पारंपरिक टिम्बर की तुलना में ५० प्रतिशत से अधि संरचनात्मक लकड़ी का उपयोग करके संसासधनों को अनुकूलित करने में मदद कर सकते हैं लेकिन हमें इस तरक के उत्पादों के लाभ की तुलना प्रक्रिया के दौरान खपत होने वाली ऊर्जा से करनी आवश्यक है। इसे ध्यान में रखकर ही हमें चयन करना चाहिये। संसाधन कुशल निर्माण का उद्देश्य नौकरी-स्थल की बर्बादी को कम करना है। वास्तव में इस प्रकार की निर्माण प्रक्रिया से निर्माण सामग्री बचती है। एक निर्माण अपशिष्ट मानव-आयु योजना का पालन करने में मदद मिलती है। यह रिसाइकिल करने योग्य सामग्री के लिए उपलब्ध रीसाइक्लिंग सुविधाओं और बाजारों का लाभ उठाते हुए हासिल किया जा सकता है। यह निर्माण कचरे को कम से कम दो-तिहाई कम करने, बिल्डरों के लिए लागत बचत बनाने और लैंडफिल स्पेस पर बोझ को कम करने में मदद करेगा।

Green Building

Over the last three to four decades, in many fields in which human beings are activelyinvolved in, the concept of 'Cure' has begun to be transformed into the concept of Preven-tion, In parallel, within the construction industry, the Green Building Concept evolved andcame into existence in its one form or another and it has now been gaining its momentumrapidly across the world.

What is Green Building Concept?

Green building concept, in broader terms, involves a building, which is designed, built.operated, maintained or reused with objectives to protect occupant health, improve employee productivity, use wisely natural resources and reduce the environmental impact. In other words the green building process incorporates environmental considerations intoevery stage of the building construction. This process focuses on the design, construction.operation and maintenance phases and takes into account the lot design and develop-ment efficiency, energy and water efficiency, resource efficiency, indoor environrnentalquaSity. building-owner maintenance and the building's overall impact on the environment.A few aspects of green building concept are outlined below.

Lot design, preparation and development

Thoughtful and efficient site designand development practices help lessen environmental impact and improve the energyperformance of new Constructions. The designs with a focus on saving trees, constructingonsite storm water retention/infiltration features and orienting the house to maximise solarpower gain are basic aspects in a green building.

Resource efficiency

It is a fact that a green building is most successful when theconcepts are incorporated and implemented at the design phase - the time at whichmaterial/product/system selection occurs. Creating resource efficient designs and using iesource efficient materials can maximize function while optimizing tne usr: ct natural resources. For instance, engineered wood products can help optimize resources by using materials in which more than 50% more of the log is converted into structural timber than conventiona! dimensional timber. But we reed to weigh the benefit of such products against the amount of energy consumed during the process and accordingly make our selection.One aim of resource efficient construction is to reduce job-site waste. Invariably, there are leftover materials from the construction process. Adhering to a construction waste man-agement plan helps reducing the quantity of landfill material. This can be achieved through taking advantage of available recycling facilities and markets for recyclable mate-rials, This will help reducing the construction waste by at least two-thirds, creating poten-tial cost savings for builders and reducing the burden on landfill space.

विपत्ति (Hazard)

परिभाषा (Definition)—ऐसी कोई भी खतरनाक घटना अथवा परिस्थिति, जिसमें घायल करने, जीवन समाप्त करने अथवा सम्पत्ति, प्राणी जगत एवं पर्यावरण को क्षति पहुँचाने की क्षमता हो या स्वास्थ्य बिगाड़ने का बड़े पैमाने पर कारण बने, इसे हम विपत्ति कहते हैं।

विपत्ति के प्रकार (Types of Hazard)

विपत्ति का वर्गीकरण उसके स्रोत के अनुसार कई प्रकार से किया जा सकता है, परन्तु मुख्य रूप से विपत्तियाँ दो प्रकार की होती हैं।

1. प्राकृतिक विपत्तियाँ (Natural hazards)—इसके अन्तर्गत प्राकृतिक रूप से उत्पन्न की गयी विपत्तियाँ सम्मिलित हैं, जैसे—भूकम्प, ज्वालामुखी विस्फोट, सुनामी, भूस्खलन, बाढ़, सूखा, प्रचण्डवात (hurricane), चक्रवात (cyclone), आग आदि।

2. अप्राकृतिक विपत्तियाँ (Unnatural hazards)—इसके अन्तर्गत मनुष्यों के द्वारा स्वयं उत्पन्न की गयी विपत्तियाँ सम्मिलित हैं, जैसे—विस्फोटक, जहरीली गैसों का रिसाव, रेडियोधर्मी विकिरण का रिसाव, बाँध फटना, वाहन दुर्घटनायें (विमान, ट्रेन, बस एवं कार दुर्घटना आदि), युद्ध, गृहयुद्ध, प्रदूषण आदि।

आपदा की परिभाषा (Definition of Disaster)

ऐसी कोई भी प्राकृतिक घटनायें, जिनके कारण सर्वव्यापी मानव हानि (Human loss), प्राणी जगत (Livelihood) एवं सम्पत्ति की हानि तथा मानवी पीड़ा (Human Suffering) होती है, आपदा कहलाती है।

दूसरे शब्दों में, प्राकृतिक अथवा मानव-जनित उन चरम घटनाओं को आपदा की संज्ञा दी जाती है, जो प्राकृतिक पारिस्थितिक तन्त्र के अजैविक तथा जैविक संघटकों की सहन-शक्ति की

Scanned by CamScanner

उत्पन्न परिवर्तनों के साथ समायोजन करना दुष्कर हो जाता है, धन व जन की अपार क्षति होती है। प्रलयकारी स्थिति पैदा हो जाती है तथा ये चरम घटनाएँ विश्व स्तर पर समाचार पत्रों, रेडियो व दूरदर्शन इत्यादि विभिन्न समाचार माध्यमों की प्रमुख सुर्खियाँ बन जाती हैं। वास्तव में देखा जाए तो आपदायें (Disasters) उपलब्ध संसाधनों (Existing Infrastructure) का भारी विनाश करतीं हैं तथा भविष्य में होने वाले विकास का मार्ग अवरुद्ध करती हैं।

आपदा के प्रभाव (Effects of Disaster)

(i) समाज के सामान्य क्रिया-कलापों में गम्भीर अवरोध
(Serious disruption of normal functioning of Society)

(ii) प्राणियों एवं सम्पत्तियों की बड़े पैमाने पर हानि
(Large Scale loss to life and property)

(iii) आपदा में हुई क्षति का सामना करने के लिए बाहरी सहायता की आवश्यकता
(Need of external aid to cope with the losses)

आपदा का वर्गीकरण (Classification of Disaster)

स्रोत के आधार पर आपदा का वर्गीकरण अग्र प्रकार से किया जाता है—

1. **माप सम्बन्धी** (Meterological)—प्रचण्डवात (Hurricane), चक्रवात (Cyclone), बाढ़ (Flood), सूखा (Draught) आदि।

2. **स्थलाकृति सम्बन्धी** (Topographical)—भूस्खलन, बर्फ, बोल्डर एवं कीचड़ का प्रवाह (Avalanches)

3. **टेक्टॉनिक प्लेटों से सम्बन्धित** (Tectonic)—भूकम्प, ज्वालामुखी आदि।

4. **संक्रमण सम्बन्धी** (Infestic)—टिड्डी दल का फसलों पर आक्रमण, रोगाणु सम्बन्धी आपदायें (Epidemic), प्लेग, हैजा आदि।

5. **मानवी** (Human)—औद्योगिक दुर्घटनायें (जैसे भोपाल गैस काण्ड, चेरनोबेल दुर्घटना आदि) परमाणु बम आदि।

विपत्ति एवं आपदा में अन्तर (Difference between Hazard and Disaster)

आपदा विपत्ति का ही उत्पाद है। विपत्ति (Hazard) और असुरक्षा (Vulnerability) जब आपस में मिलते हैं, तब आपदा उत्पन्न होती है। बिना विपत्ति के अथवा बिना असुरक्षा के आपदा उत्पन्न नहीं हो सकती है। जैसे भूकम्प का आना एक विपत्ति है, जिसमें मानवीय, पर्यावरणीय एवं सम्पति सम्बन्धी भारी क्षति पहुँचाने की क्षमता है। यदि उस क्षेत्र के लोगों में भूकम्प से असुरक्षा के प्रति पर्याप्त जागरूकता नहीं है। उनके आवास मिट्टी के घास-फूस की छत डालकर बनाये गये हैं अथवा साधारण ईंटें चिनाई के बिना अभिकल्पन कराये बना लिये गये हैं तो भूकम्प के उस क्षेत्र में भारी जन-धन की हानि निश्चित है। परन्तु उस क्षेत्र में पहले से लोग भूकम्प के प्रति सचेत हैं। उनके मकानों में पर्याप्त भूकम्परोधी उपाय किये गये हैं तो वहाँ न्यूनतम क्षति होगी। दूसरी स्थिति में यह भूकम्प आपदा नहीं कहलायेगा जबकि प्रथम स्थिति में यह एक आपदा है। एक अन्य उदाहरण में यदि किसी परिवार के एकमात्र पैसा कमाने वाले व्यक्ति की किसी कार दुर्घटना में मृत्यु हो जाती है तो यह घटना उस परिवार के लिए एक आपदा है और उस समाज के लिए, जिसमें वह रहता था, मात्र एक दुर्घटना है।

भेद्यता या असुरक्षा (Vulnerability)

किसी विपत्ति के फलस्वरूप, जिस सीमा तक समाज के प्रभावित होने की सम्भावना है, उसे उस समाज की असुरक्षा कहते हैं। समाज में असुरक्षा, गरीबी, सूचना की कमी, दयनीय रहन-सहन, अपर्याप्त सुरक्षा उपाय आदि के कारण उत्पन्न होती है।

असुरक्षा को प्रभावित करने वाले कारक (Factors affecting Vulnerability)

1. **भौतिक कारण** (Physical Factors)—समुद्र तटीय क्षेत्र में घास-फूस से बने मकान चक्रवात आने पर पूर्णतः असुरक्षित है, जबकि ईंट से बने मकानों पर चक्रवात का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। दूसरी ओर भूकम्प के समय ईंट का मकान पूरी तरह से धराशायी हो जाता है अर्थात् भूकम्प में ईंट के मकान भेद्य या असुरक्षित (Vulnerable) हैं जबकि घास-फूस के मकान भूकम्प के समय सुरक्षित रहते हैं। अतः किसी संरचना को सभी आपदाओं मे भौतिक रूप से सुदृढ़ होना चाहिए।

2. **आर्थिक एवं सामाजिक कारक** (Economical and Social Factors)—आर्थिक एवं सामाजिक रूप से कमजोर तथा पिछड़े लोग (downtroden people) आपदाओं के प्रति ज्यादा असुरक्षित होते हैं, क्योंकि वे गाँवों के निचले इलाकों में रहने के लिए बाध्य होते है, जहाँ बाढ़ आने की हमेशा सम्भावना होती है। उनके मकान पक्के नहीं होते हैं, उनके पास असुरक्षित शरणस्थली (Shelter), शिक्षा, जागरूकता एवं संसाधन जुटाने की क्षमता नहीं होती है। उनके पास सीमित संसाधन होने के कारण आपदा का सामना (Cope) करने की क्षमता नहीं होती है। इसी कारण भारत जैसे विकासशील देश में आपदा के कारण व्यापक विनाश होता है, जबकि विकसित देशों में आपदा का सामना करने की क्षमता काफी अधिक पाई जाती है।

3. **उम्र एवं लिंग** (Age and Sex)—किसी भी आपदा के समय हुई विनाशलीला में यह देखा गया है कि गर्भवती एवं दूध पिलाने वाली महिलायें, बच्चे, वृद्ध पुरुष किसी आपदा के समय स्वस्थ पुरुषों की तुलना में अधिक असुरक्षित होते है। भूकम्प एवं चक्रवात के समय मरने वालों में महिलाओं, बच्चों एवं वृद्ध पुरुषों की संख्या काफी अधिक होती है।

4. **जनसंख्या वृद्धि** (Population Growth)—जनसंख्या वृद्धि से ही गरीबी बढ़ती है। गरीबी बढ़ने से लोग रोजगार प्राप्त करने हेतु शहरों की ओर भागते हैं और ऐसे इलाकों में रहने के लिए बाध्य हो जाते हैं, जिनमें आपदा (जैसे बाढ़, भूस्खलन आदि) आने की सम्भावना होती है।

5. **असुरक्षित क्षेत्र में बस्ती** (Settlement in unsafe area)—पहाड़ी क्षेत्र भूकम्प एवं भूस्खलन से पूर्णतः असुरक्षित होते हैं। निचले इलाकों में बाढ़ की हमेशा सम्भावना बनी रहती है।

आक्रमण की गति (Speed of Onset)

आक्रमण की गति के आधार पर आपदा दो प्रकार की होती है—

1. तीव्र (Quick)
2. धीमी (Slow)

1. **तीव्र** (Quick)—कुछ आपदायें बिना किसी पूर्व चेतावनी के बहुत जल्दी आ जाती है। अत्यन्त सूक्ष्म समय में विनाश ही विनाश दिखाई देता है। ऐसी आपदाओं में जीवन और सम्पत्ति बचाने के लिए कोई समय नहीं होता है, जैसे—भूकम्प, सुनामी, भूस्खलन आदि।

2. **धीमी** (Slow)—कुछ आपदायें धीरे-धीरे आती हैं। ऐसी आपदाओं के आने पर जीवन एवं सम्पत्ति दोनों को बचाने का पर्याप्त अवसर रहता है। हम सुरक्षा उपाय अपनाकर आपदा के प्रभाव को कम कर सकते हैं।

खतरा (Risk)

किसी क्षेत्र में विशिष्ट तीव्रता की आपदा के कारण सम्भावित हानियों, जैसे—मृत्यु, घायल, सम्पत्ति, आर्थिक कार्य-कलाप आदि की माप को खतरा (Risk) कहते हैं।

जब विपत्ति की तीव्रता उच्च हो तथा क्षेत्र की भेद्यता भी अधिक हो, तब उस क्षेत्र मे आपदा का खतरा (Disaster Risk) भी काफी अधिक होता है। इसके विपरीत हल्की विपत्ति एवं कम भेद्यता की स्थिति में आपदा का खतरा भी कम रहता है। आपदा के खतरे को निम्न सूत्र से ज्ञात करते है—

$$\text{आपदा का खतरा} = \frac{\text{विपत्ति} \times \text{भेद्यता}}{\text{क्षमता}}$$

Scanned by CamScanner

$$\text{Disaster Risk} = \frac{\text{Hazard} \times \text{Vulnerability}}{\text{Capacity}}$$

क्षमता (Capecity)—किसी समाज द्वारा किसी विपत्ति के प्रभाव को कम करने के लिए किये गये उपायों एवं व्यवस्थाओं की सामर्थ्य को ही समाज की क्षमता कहते हैं।

कुछ उदाहरण (Some Examples)

1. भारत में 70% से अधिक कृषि योग्य भूमि सूखाग्रस्त है।
2. कृषि योग्य भूमि का 12% भाग बाढ़ग्रस्त रहता है।
3. कृषि योग्य भूमि का लगभग 8% भाग चक्रवात से प्रभावित रहता है।
4. भारत की कुल भूमि का 60% भाग भूकम्प सम्भावित क्षेत्र में आता है।
5. कश्मीर एवं उत्तर पूर्व का क्षेत्र आतंकवाद एवं युद्ध की सम्भावनाओं से ग्रसित है।

खतरा उत्पन्न करने वाले कारक (Factors Responsible for Risk)

(a) क्षेत्रीय पर्यावरण को खतरा उत्पन्न करने वाले कारक निम्न हैं—
  (i) कूड़े करकट का ढेर।
  (ii) अनाधिकृत पेट्रोल, डीजल एवं अन्य ज्वलनशील पदार्थ बेचने वाली दुकानें।
  (iii) रसायन उत्पादक कारखाने।
  (iv) अनाधिकृत पटाखों की दुकानें।
  (v) नंगे बिजली के तार।
  (vi) संकरी गलियाँ।
  (vii) नाभिकीय रिएक्शन।

(b) घरों के लिए खतरनाक कारक निम्न हैं—
  (i) ज्वलनशील पदार्थ, मिट्टी का तेल आदि।
  (ii) बन्द घर।
  (iii) पेट्रोल एवं डीजल का घर में अनाधिकृत भण्डार।
  (iv) गैस सिलिण्डर।
  (v) पुरानी विद्युत फिटिंग एवं खुले तार।
  (vi) लकड़ी का फर्नीचर।
  (vii) प्लास्टिक के दरवाजे, फिटिंग एवं अन्य सामान।
  (viii) अव्यवस्थित कपड़ों का ढेर।

(c) कार्यालय/विद्यालय को निम्न कारक खतरनाक बनाते हैं—
  (i) फाइलों का ढेर।
  (ii) भण्डार की सामग्री।
  (iii) टूटा हुआ फर्नीचर।
  (iv) अग्निशमन उपकरण का न होना।
  (v) भण्डार कक्ष।
  (vi) पुरानी विद्युत फिटिंग के कारण शॉर्ट सर्किट।
  (vii) पुरानी जर्जर इमारतें।

आपदा प्रबन्धन (Disaster Management)

परिभाषा—किसी आपदा से होने वाली सम्भावित क्षति को कम करने के लिए आपदा से पूर्व, आपदा के समय एवं आपदा के बाद किये जाने वाले सुरक्षात्मक प्रयास, आर्थिक सहायता, पुनर्वास व्यवस्था, चिकित्सीय सहायता आदि आपदा प्रबन्धन कहलाते है।

आपदा प्रबन्धन के प्रकार (Types of Disaster Management)

आपदा प्रबन्धन की मुख्यत: निम्नलिखित दो अवस्थाएँ है—

1. आपदाओं से पहले प्रबन्धन (Management before Disaster)—किसी सम्भावित आपदा के आने से पहले किये जाने वाले प्रबन्धन के अन्तर्गत मानव, भौतिक एवं पर्यावरण सम्भावित हानियों को यथासम्भव कम करना तथा इसको सुनिश्चित करना कि ये हानियां आपदा के दौरान कम-से-कम दृष्टिगोचर है। इसके निम्न प्रकार हैं—

(a) रोकथाम (Prevention)—आपदा सम्भावित क्षेत्र से लोगों को सुरक्षित स्थान पर बसाने का प्रयास करना, आपदा से बचाने के उपाय समझाना आदि सुरक्षात्मक प्रयास इसके अन्तर्गत आते हैं।

(b) शमन (Mitigation)—किसी आपदा की प्रचण्डता को कम करने हेतु किये गये उपाय शमन (Mitigation) कहलाते हैं, जैसे—भूकम्प रोधी भवनों का निर्माण करना, समाज को आपदा के बारे में जागरूक एवं शिक्षित करना, आपदा सम्भावित (Disaster Prone) क्षेत्र में मकान बनाना, प्रतिबन्धित करना आदि।

(c) तत्परता/तैयारी (Preparedness)—समुदायों को आपदा के प्रभावों का सामना करने हेतु तैयार करना अथवा सक्षम बनाना ही तत्परता (Preparedness) कहलाता है। इसके अन्तर्गत प्रमुख कार्य निम्नवत् हैं—
  (i) समुदाय को जागरूक एवं शिक्षित बनाना।
  (ii) आपदा प्रबन्धन हेतु विभिन्न योजनायें तैयार करना।
  (iii) आपदा के प्रभावों को कम करने के लिए प्रयुक्त होने वाले पदार्थों एवं प्रबुद्ध पुरुषों (Human Skill) की सूची तैयार करना।
  (iv) लोगों को आगामी आपदा के बारे में सचेत करने हेतु उचित चेतावनी पद्धति का विकास करना।
  (v) लोगों को आपदा के बचाव हेतु नकली अभ्यास (Mock Drill) एवं प्रशिक्षित करना।
  (vi) समाज को पारस्परिक सहायता व्यवस्था (Mutual Aid Arrangement) हेतु प्रशिक्षित करना।
  (vii) ऐसे असुरक्षित क्षेत्रों की पहचान करना, जहाँ आपदा आने की सम्भावना हो।

(2) आपदा पश्चात् प्रबन्धन (Past Disaster Management)—किसी आपदा के घटित हो जाने के बाद आपदा पीड़ितों की सहायता हेतु निम्न उपाय किये जाते है—

(a) राहत एवं सहायता (Relief and Response)—आपदा के समय अथवा आपदा के तुरन्त बाद पीड़ितों की सहायतार्थ किये जाने वाले राहत कार्य इस श्रेणी में आते है। इन राहत कार्यों को आकस्मिक सहायता कार्य (Emergency Response Activities) भी कहा जाता है। मुख्य कार्य निम्न प्रकार है—
  (i) आकस्मिक संचालन एवं नियन्त्रण कक्ष स्थापित करना।
  (ii) सामूहिक रसोईघर की स्थापना करना एवं सभी पीड़ितो को भोजन उपलब्ध कराना।
  (iii) आपदा ग्रस्त क्षेत्र मे चिकित्सा कैम्प (Medical Camp) स्थापित करना एवं घायलों के उपचार हेतु Trauma Care की व्यवस्था करना।
  (iv) पीड़ितो को आवश्यकतानुसार संसाधन जुटाना।
  (v) आपदा पीड़ितों के ठहरने की पर्याप्त व्यवस्था करना एवं उनके लिए पर्याप्त संख्या में शौचालयों की व्यवस्था करना।
  (vi) आपदा ग्रस्त क्षेत्र मे पीड़ितो के परिजनों की तलाश एवं बचाव हेतु टीमें बनाकर काम पर लगाना।
  (vii) आपदा ग्रस्त क्षेत्र में जलापूर्ति व्यवस्था ठीक करना अथवा जलापूर्ति की वैकल्पिक व्यवस्था करना।

Scanned by CamScanner

(b) **पुनर्प्राप्ति (Recovery)**—राहत एवं सहायता कार्यों के बाद पीड़ितों को स्वावलम्बी बनाने हेतु किये जाने वाले कार्य इस श्रेणी में आते है, जैसे—

(i) समुदाय को स्वास्थ्य एवं सुरक्षा के बारे में जागरूक बनाना।

(ii) जिनके सगे-सम्बन्धी आपदा में मारे गये हैं अथवा लापता हैं, उनके जीवनयापन की व्यवस्था करवाना।

(iii) बच्चों की पढ़ाई की व्यवस्था, काफी-किताबों की व्यवस्था एवं घरेलू आवश्यक सामग्री की व्यवस्था करना।

(iv) पीड़ितों के लिए समाज सेवा संस्थाओं (N.G.O.) एवं सरकारी संस्थाओं से आर्थिक सहायता की व्यवस्था करना।

(c) **पुनर्वास (Rehabilitation)**—पुनर्प्राप्ति के साथ-साथ ही पुनर्वास का कार्य प्रारम्भ कर दिया जाता है। इस कार्य में मुख्य रूप से आपदा में नष्ट हो गये मकानों, सड़कों, रेलमार्गों आदि को फिर से मरम्मत करके अथवा पुन: निर्माण करके उपयोग हेतु बनाना आदि सम्मिलित है। प्रमुख कार्य निम्नवत् हैं—

(i) संचार के साधन पुन: स्थापित करना।

(ii) विद्युत आपूर्ति एवं जलापूर्ति व्यवस्था पुन: स्थापित करना।

(iii) सड़कों की मरम्मत करके अथवा नयी सड़क बनाकर संचालन योग्य बनाना।

(iv) क्षतिग्रस्त मकानों की मरम्मत करना एवं ध्वस्त मकानों का पुन: निर्माण करके पीड़ितों को उपलब्ध कराना।

(v) प्रभावित लोगों को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना।

विकास एवं अर्थव्यवस्था पर आपदा के प्रभाव
(Effects of Hazards on Economy and Development)

विश्व का कोई भी देश पूर्ण रूप से सुरक्षित नहीं है। आपदाओं के समय सभी देशों को भारी क्षति का सामना करना पड़ता है। उनकी आर्थिक व्यवस्था बुरी तरह से चरमरा जाती है। कई वर्षों में अथक प्रयास से किये गये विकास कुछ ही पल में धराशायी हो जाते हैं। चूँकि सबसे अधिक क्षति विकासशील राष्ट्रों में होती है। एक अनुमान के अनुसार प्राकृतिक आपदाओं से हुई मौतों की 97% क्षति अकेले विकासशील देशों में होती है जबकि आर्थिक क्षति सबसे अधिक विकसित देशों में होती है। संयुक्त राष्ट्र के अनुमान के अनुसार विश्व में सभी आपदाओं से होने वाली आर्थिक क्षति वर्षवार निम्न प्रकार है—

दशक	1960	1970	1980	1990
क्षति, यू०, एस०, बिलियन डॉलर में	40	70	120	120

आपदा किसी देश के विकास को कई दशक पीछे धकेल देती है। विकास पर आपदा के प्रभाव को निम्न चरणों में समझा जा सकता है—

(i) आपदा से मकान, कारखाने, फसलें, भण्डार, पुल, चिमनियाँ, शिरोपरि पानी की टंकी, बहुमंजिली इमारतें आदि नष्ट हो जाती हैं।

(ii) यातायात, संचार व्यवस्था, जलापूर्ति, विद्युत आपूर्ति आदि तूफान, बाढ़, भूकम्प, भूस्खलन आदि आपदाओं में बुरी तरह से क्षतिग्रस्त हो जाते हैं।

(iii) आपदा ग्रस्त क्षेत्र में सभी कुटीर उद्योग नष्ट हो जाते हैं। लोगों की आर्थिक दशा कमजोर हो जाती है, उन्हें सम्भलने में काफी समय लगता है।

(iv) मोजम्बीक (अफ्रीका) में सन् 2000 को आई बाढ़ में लोगों की जीवन भर की पूँजी नष्ट हो गयी।

(v) समुद्र तटीय गुजरात के आपदा प्रभावित क्षेत्र के लड़कों से कोई अपनी लड़की की शादी नहीं करता।

(vi) 1992–2001 तक औसतन प्रतिवर्ष 60,000 लोग आपदाओं में मारे गये।

आपदा जोखिम/खतरा प्रबन्धन (Disaster Risk Management)

किसी क्षेत्र में जीव-जन्तुओं, संरचनाओं एवं जन उपयोगी व्यवस्थाओं में आपदा का सामना करने की कितनी क्षमता है, उसका अध्ययन करके सबसे पहले चिन्हित किया जाता है और जोखिम को कम करने के प्रयास/उपाय अपनाये जाते हैं अथवा जो स्थल आपदा सम्भावित हो उस स्थान पर लोगों, घरों, अन्य सामानों, फसलों आदि का बीमा कराके जोखिम को स्थानान्तरित किया जा सकता है।

जोखिम प्रबन्धन के घटक (Components of Risk Management)

इसे तीन घटकों में विभाजित किया जा सकता है—

1. आपदा जोखिम पहचान एवं मूल्यांकन।
2. आपदा जोखिम न्यूनीकरण।
3. आपदा जोखिम स्थानान्तरण।

1. आपदा जोखिम पहचान एवं मूल्यांकन (Disaster risk identification and assessment)—**इसे निम्न चरणों में** अच्छी तरह से समझा जा सकता है—

(i) सम्भावित आपदा के क्षेत्र में सर्वप्रथम उन वस्तुओं, संरचनाओं एवं जीव-जन्तुओं की पहचान की जाती है, जिनके आपदा से प्रभावित होने अथवा नष्ट होने की सम्भावना हो।

(ii) जोखिम की मात्रा एवं कारण ज्ञात करके सम्भावित क्षति का अनुमान लगाया जाता है।

(iii) जोखिम की मात्रा का मूल्यांकन करते समय भौतिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं मनोवैज्ञानिक कारकों पर समुचित विचार करना चाहिये।

(iv) कमजोर भौतिक दशायें जैसे—आपदा सम्भावित क्षेत्र, असुरक्षित भवन एवं असुरक्षित इन्फ्रास्ट्रक्चर का पता लगाया जाता है।

(v) कमजोर आर्थिक एवं सामाजिक दशाओं जैसे—पशुधन का जोखिम, अल्प आय स्तर, निम्न स्वास्थ्य दशा आदि की पहचान एवं मूल्यांकन किया जाता है।

2. आपदा जोखिम न्यूनीकरण (Disaster Risk Reduction)—**जोखिम न्यूनीकरण को हम निम्न चरणों में अच्छी तरह** से समझ सकते हैं—

(i) इसके अन्तर्गत वे सभी उपाय आते हैं, जो जीवों, सम्पत्तियों एवं संसाधनों की क्षति को कम करते हैं।

(ii) ऐसे अवयव जो किसी आपदा में क्षतिग्रस्त होने के लिए खुले होते हैं, जोखिम मुक्त अवयव कहलाते हैं।

(iii) आपदा जोखिम-न्यूनीकरण को पुन: तीन घटकों में विभाजित किया जा सकता है—

(a) तत्परता (Preparedness)

(b) शमन करना (Mitigation)

(c) रोकथाम (Prevention)

3. आपदा जोखिम स्थानान्तरण (Disaster Risk Transfer)—**निम्न प्रकार से आपदा जोखिम का स्थानान्तरण** किया जाता है—

(i) घरों, सामग्रियों, उपकरणों एवं फसलों का बीमा कराकर आर्थिक क्षति की प्रति-पूर्ति की जा सकती है।

(ii) आपदा प्रबन्धन योजना द्वारा सामाजिक अनुषांगिक फण्ड तैयार किया जाता है। इसके लिए समाज के लोगों के द्वारा एक निश्चित धनराशि आपात काल में काम आने के लिए एकत्र की जाती है।

(iii) विकसित देशों में प्राइवेट बीमा कम्पनियाँ आपदा ग्रस्त लोगों को मकान बनाने हेतु धन उपलब्ध कराती हैं। बीमा प्रीमियम की धनराशि काफी कम रखी जाती है।

Scanned by CamScanner

(iv) विकासशील देशों में सरकारी संस्थाओं द्वारा व्यक्तिगत रूप से आपदा पीड़ितों को धन उपलब्ध कराया जाता है। विकास कार्यों का फण्ड ही राहत कोष में परिवर्तित कर दिया जाता है। इससे विकास कार्य लम्बित हो जाते हैं।

भूकम्प (Earth Quakes)

भूकम्प को महाप्रलयकारी प्राकृतिक आपदा माना जाता है, जो आकस्मिक रूप से बिना किसी पूर्व सूचना के तीव्र गति से घटित होती है अर्थात् विरूपित चट्टानों में संचित ऊर्जा के आकस्मिक रूप से उत्सर्जन से फलस्वरूप उत्पन्न तरंगों से भूपटल में उत्पन्न दोलन को ही भूकम्प कहते हैं।

आक्रमण का प्रकार एवं चेतावनी (Onset Type and Warning)

भूकम्प आकस्मिक आक्रमणकारी विपत्ति (Sudden onset hazard) है। साधारणतया अधिकांश भूकम्प पहले बहुत धीमे अथवा मामूली कम्पन के रूप में प्रारम्भ होते हैं तथा ये शीघ्र ही अत्यन्त तीव्र रूप धारण कर लेते हैं। फिर शनैः-शनैः इनकी तीव्रता कम होती जाती है और अन्ततः कम्पन बन्द हो जाती है। यह हमेशा बिना चेतावनी दिये आता है। बहुत-सी खोजों के बाद भी अभी तक भूकम्प की भविष्यवाणी करना सम्भव नहीं हो सका है।

जोखिम युक्त अवयव (Elements at Risk)

निम्न अवयव भूकम्प प्रभावित क्षेत्र में जोखिम भरे होते हैं—

(i) नरम मृदा वाले क्षेत्र, भूस्खलन सम्भावित क्षेत्र एवं फाल्ट लाइन के अनुदिश धँसाव की सम्भावना अधिक होती है। ऐसे स्थानों पर बने मकान एवं अन्य संरचनायें जोखिम भरी होती हैं।

(ii) बिना अभिकल्पन कराये मिट्टी, ईंट एवं पत्थर से बनी इमारतें भी जोखिम भरी होती हैं।

(iii) भारी छतों के मकान, कमजोर निर्माण सामग्री से निर्मित मकान, कमजोर मंजिल वाले बहुमंजिले मकान एवं खराब अनुरक्षण वाले मकान भूकम्प के समय जोखिम भरे रहते हैं।

विशिष्ट प्रभाव (Typical Effect)

भूकम्प के विशिष्ट प्रभाव निम्न प्रकार हैं—

(i) **भौतिक क्षति (Physical Damage)**—भवनों एवं संरचनाओं की क्षति, शॉर्ट-सर्किट से लगी आग, बाँध के टूटने से आई बाढ़ एवं पहाड़ी क्षेत्रों में भूस्खलन आदि भौतिक क्षति के अन्तर्गत आते हैं।

(ii) **मौतें (Casualties)**—भूकम्प के समय मरने वालों की संख्या उत्केन्द्र के पास, सघन आबादी वाले स्थल (जैसे बहुमंजिली इमारतें) एवं ऐसे भवनों में, जो भूकम्परोधी न बनाये गये हों, सबसे अधिक होती है।

(iii) **जनस्वास्थ (Public Health)**—हड्डियों का कई जगह से टूटना, सामान्य एवं गम्भीर रूप से घायल होना आदि सामान्य घटनायें हैं। सफाई की दशा बिगड़ जाती है। जीव-जन्तुओं के मरने से बीमारी का खतरा उत्पन्न हो जाता है।

(iv) **जलापूर्ति (Water Supply)**—जलापूर्ति, वितरण प्रणाली एवं भण्डारण टंकियों के ध्वस्त हो जाने के कारण गम्भीर समस्या उत्पन्न हो जाती है। फायर हाइड्रेन्ट के ध्वस्त हो जाने से आग पर नियन्त्रण पाना काफी कठिन हो जाता है।

(v) **यातायात व्यवस्था (Transport Network)**—सड़कों, पुलों, रेलमार्गों, हवाई पट्टियों एवं सम्बन्धित संरचनाओं के नष्ट हो जाने से यातायात व्यवस्था बुरी तरह से चरमरा जाती है।

(vi) **ज्वारीय तरंगें (सुनामी)**—भूकम्प आने की वजह से समुद्र में भी उथल-पुथल होती है, अर्थात् समुद्र में ज्वारीय विशाल तरंगें काफी तीव्र वेग से उठती हैं, जिनसे तटवर्ती क्षेत्रों में तबाही की स्थिति उत्पन्न हो जाती है अर्थात् समूचे क्षेत्र उजड़ जाते हैं।

(vii) **भूस्खलन का होना**—भूमि में कम्पन उत्पन्न होने की वजह से प्रभावित क्षेत्र की मिट्टी में तरलता आ जाती है, जिसके कारण वहाँ भूस्खलन होने की सम्भावना प्रबल हो जाती है।

भूकम्प विनाशकारी होने की परिस्थितियाँ

मुख्य रूप से निम्नांकित परिस्थितियों में भूकम्प अत्यन्त विनाशकारी सिद्ध होता है—

(i) नगरों व कस्बों के घने-बसे क्षेत्रों में अत्यधिक घनत्व का होना।

(ii) बहु-मंजिली इमारतों का अभिकल्पन (Design) मानकों के अनुरूप न होकर त्रुटिपूर्ण होना।

(iii) भूकम्प से बचाव कराने वाली प्रबन्ध व्यवस्था का अभाव होना।

(iv) संवेदनशील क्षेत्रों में भूकम्परोधी व्यवस्था के बिना भवनों का निर्माण कराना।

(v) निम्न कोटि की गुणवत्ता (Quality) वाली भवन निर्माण प्रक्रिया को अपनाना।

(vi) लोगों में भूकम्प के प्रति जागरूकता का अभाव होना।

भूकम्प के विनाशकारी प्रभाव को कम करने हेतु बरती जाने वाली सावधानियाँ

(i) संवेदनशील क्षेत्रों में शहरी आवासं विकास योजनाओं के नियमों का अनुपालन करते हुए भवनों का निर्माण किया जाना चाहिए।

(ii) मकानों में स्थित सभी विद्युतीय एवं गैस उपकरण परस्पर पाइपों में से होकर संयोजित होने चाहिएँ, साथ ही भली-भाँति वे कसे हुए भी होने चाहिएँ।

(iii) परिवार के सभी सदस्यों को पूर्ण जागरूक होना चाहिए। प्रत्येक सदस्य को इतना अवश्य पता होना चाहिए कि भूकम्प से बचने के लिए भूकम्प आने पर उसे क्या करना है।

(iv) भूकम्प के दौरान यदि व्यक्ति मकान के बाहर हो तो उसे मकान से दूर खुले स्थान की ओर प्रस्थान करना चाहिए। कभी भी भवन की दीवार के नजदीक तथा बिजली की केबिलों के नीचे भूकम्प के दौरान खड़ा नहीं होना चाहिए।

(v) प्राधिकारियों के निर्देशों (Authorities Instructions) का सदैव पालन किया जाना चाहिए।

(vi) आपातकालीन बंडलों (Emergency Packages) तथा रेडियो को हाथ के नजदीक ही रखना चाहिए।

(vii) भूकम्प के तुरन्त बाद प्रभावित क्षेत्र को मात्र देखने या केवल जायजा लेने हेतु भूकम्प ग्रसित क्षेत्र की ओर नहीं जाना चाहिए, क्योंकि इससे किये जा रहे रक्षा कार्य (Rescue work) में व्यवधान (Hamper) उत्पन्न होता है।

भूस्खलन (Land Slide)

भूकम्प एवं भारी वर्षा के समय ऊँचे पहाड़ों पर स्थित पत्थर, मिट्टी एवं कीचड़ का अपने भार के कारण ढालू जमीन पर फिसलना ही भूस्खलन कहलाता है। यह विश्व में घटने वाली विशाल प्राकृतिक आपदाओं (Major Natural Disasters) या विपत्तियों (Calamities) में से एक है। भू-गतिशील क्षेत्रों की पट्टियों में ही अधिकतर भूस्खलन दृष्टिगोचर होता है। इसके अलावा भारी वर्षा के प्रभाव से बाढ़ आ जाने से पहाड़ी-क्षेत्रों में भी भूस्खलन हो जाता है। विशेष रूप से हिमालय पर्वतीय क्षेत्रों तथा उत्तर-पूर्व के पहाड़ी क्षेत्रों में प्रायः सर्वाधिक भूस्खलन सतत् होते रहते हैं। इस आपदा से प्रभावित पूरे पर्वतीय क्षेत्र में भूस्खलन के कारण यातायात एवं संचार व्यवस्था एकदम ठप या अवरुद्ध हो जाती है। भूस्खलन प्रायः भूकम्प, बाढ़ एवं ज्वालामुखी के साथ-साथ होते हैं। भूस्खलन की पूर्व जानकारी देने वाले चेतावनी यन्त्र अभी तक नहीं बनाये जा सके हैं, जो इसकी पूर्व जानकारी दे सकें।

भूस्खलन के कारक (Causes of Land Slide)

अनेक कारक हैं जिनके परस्पर मेल से भूस्खलन होता है। भूस्खलन (Land Slides) होने के प्रमुख कारकों को निम्नांकित दो वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है—

Scanned by CamScanner

1. **प्राकृतिक कारक (Natural Causes)**
   - (i) अत्यधिक वर्षा (Excessive Rainfall)
   - (ii) उदग्र या खड़ी ढलानें (Steep Slopes)
   - (iii) ढलानों की कड़ापन (Stiffness of Slopes)
   - (iv) गुरुत्व के अन्तर्गत निर्मित मृदा परतें (Soil Layers formed under Gravity)
   - (v) अत्यधिक छिन्न-भिन्न चट्टानों की परतें (Highly Weathered Rock Layers)
   - (vi) भूकम्पीय गतिविधियाँ (Seismic Activities)
2. **मानव-जनित कारक (Man-made Causes)**
   - (i) वनों की कटाई (Deforestation)
   - (ii) मृदा अपरदन (Soil Erosion)
   - (iii) भूमि उपयोग प्रतिरूप (Land use pattern)
   - (iv) गैर-इंजीनियरिंग भवन रचना (Non-engineering Building Construction)
   - (v) खनन एवं उत्खनन (Mining and Quarrying)

विशिष्ट प्रभाव (Typical Effects)

विशिष्ट प्रभाव निम्न प्रकार हैं—

(i) भौतिक क्षति (Physical Damage)—भूस्खलन के रास्ते में जो भी आता है, नष्ट हो जाता है। भूस्खलन सड़कों, संचार लाइनों, बस्तियों, नदी के बहाव एवं खेतिहर भूमि को मिट्टी में दबा देते हैं अथवा अवरुद्ध कर देते हैं। भूस्खलन से बाढ़ भी आ सकती है।

(ii) मौतें (Casualties)—भूस्खलन से होने वाली मौतों की संख्या भूस्खलन के समय एवं स्थान पर निर्भर करती है। भंयकर भूस्खलन में अब तक बहुत से लोग मारे गये हैं। सन् 1970 को पेरु के हुआस्कारान की ढालू जमीन पर भूकम्प के कारण उत्पन्न भूस्खलन में रोड़ी के फिसलने से 1800 से अधिक लोग मारे गये।

प्रमुख शमन नीतियाँ (Main Mitigation Strategies)

भूस्खलन को रोकने के लिए निम्न नीतियां अपनाई जाती हैं—

1. विपत्ति मापन (Hazard Mapping)—इससे भूस्खलन सम्भावित क्षेत्रों की जानकारी प्राप्त की जाती है। ऐसे क्षेत्रों में मकान नहीं बनाने चाहिए।

2. भू-प्रयोग की स्थिति (Land use Practices)—जमीन के प्राकृतिक स्वरूप की रक्षा करनी चाहिए जैसे जमीन की सतह पर घास एवं पेड़-पौधों की पर्त को नष्ट नहीं होने देना चाहिए। ढालू भूमि पर जल निकासी व्यवस्था सुचारु रूप से करनी चाहिए।

3. प्रतिधारक दीवार (Retaining Wall)—भूस्खलन को रोकने के लिए ढालू भूमि पर प्रतिरोध दीवारें बना देनी चाहिए।

4. अभिकल्पित संरचनायें (Engineered Structures)—सुदृढ़ नींव पर बनी इमारतें रोड़ी एवं पत्थर के बहाव को सहन करने की क्षमता रखती हैं।

5. वनस्पति की पर्त (Vegetation Cover)—भूस्खलन से बचने का सबसे सस्ता एवं प्रभावी उपाय जमीन की सतह को वनस्पतियों (घास, पेड़-पौधे आदि) से ढक देना चाहिए।

चक्रवात (Cyclone)

उष्ण कटिबन्धी क्षेत्रों में निम्न वायुमण्डलीय दाब के शान्त (Calm) केन्द्र बिन्दु के परित: वायु के तीव्र गति से घूमने के फलस्वरूप उत्पन्न उच्च तीव्रता के प्रचण्ड तूफान को चक्रवात कहते हैं। चक्रवात एक प्रबल भंवर की भाँति होता है, जिसके दक्षिणी गोलार्द्ध मे घड़ी की सुइयो की विपरीत दिशा में तथा उत्तरी गोलार्द्ध में घड़ी की सुइयों की दिशा में तीव्र हवाओं (जो कि कभी-कभी लगभग 350 Km/hr की गति से अधिक) के साथ-साथ तीव्र मूसलाधार वर्षा होती है एवं विशाल महासागरीय लहरें उठती हैं। निम्न वायुमण्डलीय दाब का यह केन्द्र बिन्दु अक्सर 50 Km/hr के वेग से आगे बढ़ता रहता है।

आक्रमण का प्रकार एवं चेतावनी (Onset Type and Warning)

चक्रवात उत्पन्न होने में अधिक समय लगता है परन्तु यह अचानक आक्रमण कर देता है। चक्रवात की गति की दिशा उपग्रह (Satellite) के द्वारा ज्ञात की जा सकती है। चक्रवात के निर्माण की प्रक्रिया एवं उसके मार्ग को टी०वी० के पर्दे पर प्रक्षेपित किया जा सकता है। चक्रवात की चेतावनी उसके प्रक्षेपित मार्ग के अनुदिश प्रसारित की जा सकती है। परन्तु प्रक्षेपित मार्ग का सही अनुमान कठिन है। सही अनुमान केवल चक्रवात के आने के कुछ घंटे पूर्व ही किया जा सकता है। चक्रवात एवं अन्य मौसम सम्बन्धी चेतावनी विभाग द्वारा ही प्रसारित की जाती है। चक्रवात सम्बन्धी चेतावनियाँ उपग्रह आधारित आपदा चेतावनी पद्धतियां, रेडियो, टेलीविजन, टेलीफोन, टेलीग्राम, फैक्स एवं प्रेस बुलेटिन के माध्यम से प्रसारित की जाती है।

चक्रवात की विनाशक शक्ति (Destructive Power of Cyclone)

चक्रवात ऐसी घातक प्राकृतिक आपदा होती है जो विश्व के जिस किसी भाग मे घटती है, तो वहाँ के जीवन एवं सम्पत्ति को भयंकर खतरा उत्पन्न हो जाता है। प्राय: देखने में आता है कि हर वर्ष इन आकस्मिक एवं प्रचण्ड चक्रवातों से समुद्र तट के क्षेत्र और उनकी राह मे आने वाले द्वीपों में भयंकर व विशाल विनाशलीला का कहर दृष्टिगोचर होता है। चक्रवात के दौरान ऊँची उठने वाली तीव्र हवाएँ बाढ़ लाने वाली वर्षा एवं इससे जुड़ी हुई तूफानी लहरें ही इस भीषण विनाशक लीला के कहर का कारण बनती हैं। चक्रवात विनाशक शक्ति का किसी मानव बस्ती पर प्रभाव मुख्यत: इस बात पर निर्भर करता है कि वह बस्ती किस स्थान पर स्थित है, वहाँ चक्रवात आने की सम्भावना कितनी है और इससे किस हद तक भवनों व इमारतों को क्षति पहुँच सकती है। चक्रवात की विनाशक शक्ति के सम्भावित दुष्प्रभाव मुख्यत: निम्नांकित हैं—

1. भौतिक क्षति (Physical Damage)—प्रचण्ड वायु वेग, बाढ़ एवं तूफान (Storm Surge) के कारण मकान आदि संरचनायें अत्यधिक क्षतिग्रस्त हो जाती हैं। हल्के भार वाली ढालू छतों में भारी क्षति होती है।

2. जनस्वास्थ्य एवं मौतें (Public health and Casualties)—बाढ़ एवं उड़ती हुई वस्तुओं से अत्यधिक मौतें होती हैं। गिरते हुए मकान छतें एवं दीवार भी अनगिनत मौतों का कारण बनती हैं। हजारों लोग घायल हो जाते हैं और लाखों बेघर। बाढ़ एवं प्राणियों की मौतों से जल प्रदूषित हो जाता है और यह प्रदूषित जल वायरल जनित बीमारियों, डायरिया एवं मलेरिया फैलाता है।

3. यातायात एवं संचार प्रणाली का क्षतिग्रस्त होना (Devastation of Transportation and Communication System)—चक्रवात द्वारा सर्वप्रथम संचार प्रणाली क्षतिग्रस्त होती है तथा यातायात सम्पर्क विच्छेद हो जाते हैं।

4. फसलें एवं खाद्य भण्डारण (Crops and Food Storage)—तेज हवा एवं भारी वर्षा से खड़ी फसलें नष्ट हो जाती हैं। केला एवं नारियल की फसलें चक्रवात में पूर्णरूप से असुरक्षित हैं। निचली भूमि पर अनाज के भण्डार जलमग्न होने से अनाज निष्प्रयोज्य हो जाता है। समुद्री जल से जमीन में सॉल्ट की मात्रा बहुत अधिक हो जाती है जिससे भूमि अनुपजाऊ हो जाती है।

5. कृषि एवं कृषि से सम्बन्धित उद्योगों को भारी नुकसान (Heavy Devastation of Agriculture and Industries related to Agriculture)—यह सर्वविदित सत्य है कि भारत एक कृषि प्रधान देश है। हमारी अधिकांश जनसंख्या कृषि और कृषि से सम्बन्धित उद्योगों पर आश्रित है। चक्रवाती तीव्र हवाएँ तथा भारी वर्षा खड़ी फसलों तथा निचले क्षेत्रों में संग्रहित अनाज को काफी क्षतिग्रस्त कर देती है। केला एवं नारियल जैसी बागानी फसलों को तो इनसे भारी नुकसान पहुँचता है।

Scanned by CamScanner

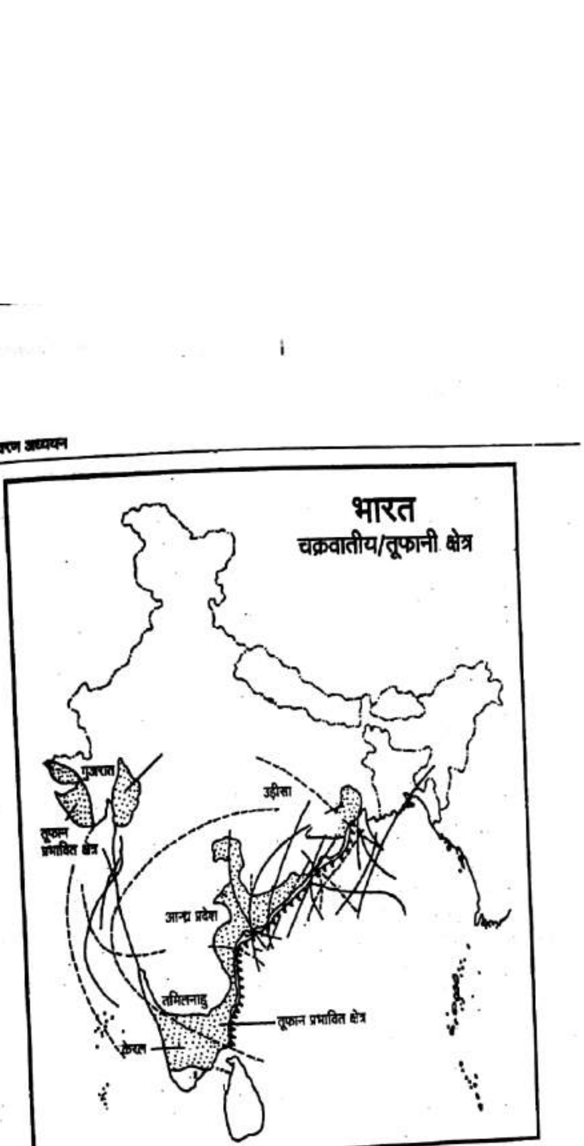

चित्र 7.1

प्रमुख शमन नीतियाँ (Main Mitigation Strategies)

1. विपत्ति मापन (Hazard Mapping)—आपदा सूचक नक्शों से तीव्र हवा वाले क्षेत्रों की जानकारी प्राप्त हो जाती है। इस नक्शे में चक्रवात सम्भावित क्षेत्र एवं उनके मार्ग दशाये जाते हैं। ये नक्शे पूर्व में आये चक्रवातों के आधार पर तैयार किये जाते हैं।

2. भू-प्रयोग योजना (Land Use Planning)—जमीन का प्रयोग इस प्रकार करना चाहिए जिसमें चक्रवात सम्भावित क्षेत्र का प्रयोग स्थाई संरचनाओं एवं आवास हेतु न किया जाये बल्कि चक्रवात एवं सम्बन्धित बाढ़ सम्भावित क्षेत्र का प्रयोग पार्क, खेल के मैदान एवं चरागाह हेतु किया जाना चाहिए।

3. बाढ़ प्रबन्धन (Flood Management)—चक्रवातीय तूफान से बाढ़ उत्पन्न होती है। तूफानी लहरें तटीय क्षेत्र को जलमग्न कर देती हैं। भारी वर्षा से मैदानी क्षेत्र में बाढ़ आ जाती है। अतः ऐसे समय बाढ़ नियन्त्रण उपाय की आवश्यकता होती है।

4. अभिकल्पित संरचनायें (Engineered Structure)—भवनों की नींव इतनी सुदृढ़ होनी चाहिए कि यह प्रचण्ड चक्रवातीय हवा के झोकों को सहन कर सके। भवन के स्थल का चयन भी सुरक्षित क्षेत्र में करना चाहिए। तटीय क्षेत्र में अधिकतर मकान स्थानीय सामग्री से निर्मित किये जाते हैं। उनका उचित प्रकार से अभिकल्पन भी नहीं कराया जाता। इसी कारण तटीय क्षेत्र के मकानों में क्षति बहुत अधिक होती है।

5. वानस्पतिक आवरण (Vegetation Cover)—जमीन के ऊपर घास, पेड़-पौधों आदि की पर्त मृदा में जल रिसाव की क्षमता को बढ़ाती है। पेड़-पौधों की जड़ें मिट्टी को बाँधे रखती हैं। यह मृदा अपरदन को भी रोकती है तथा जल धारा के प्रवाह को भी धीमा कर देती है। इससे बाढ़ की मात्रा कम हो जाती है। तटीय इलाकों में समुद्र के किनारे पेड़ों की एक कतार उगा देनी चाहिए। यह कतार हवा के तीव्र वेग को कम कर देती है। तटीय क्षेत्रों में सुदृढ़ शरण स्थलों का निर्माण कर देना चाहिए।

बाढ़ (Flood)

जल प्रकृति द्वारा प्रदत्त एक अनमोल उपहार है जो प्रत्येक जीव, जन्तु एवं प्राणी के जीवन का आधार है, अर्थात् कोई भी जीव-जन्तु एवं प्राणी बिना जल के जीवित नहीं रह सकता, यह बात निर्विवाद सत्य है, किन्तु दूसरी ओर यह भी एक आश्चर्यजनक सत्य है कि जब यही जल बाढ़ के रूप में होता है तो हजारों जीव-जन्तुओं के प्राणों की बलि ले लेता है, अर्थात् बाढ़ का जल, जान व माल दोनों का भक्षक हो जाता है। जब जल अपने नियमित स्तर से ऊपर उठकर या अपने नियमित मार्ग से विचलित होकर निद्वन्द्व स्थिति में अवांछित दिशाओं में बहता है तो ऐसी स्थिति बाढ़ की स्थिति हो जाती है जो कि जान व माल दोनों के लिए काफी खतरनाक होती है।

सामान्यतः बाढ़ धीरे-धीरे आती है और इसके आने में कई घण्टों का समय लग जाता है, किन्तु भारी वर्षा बाँधों के टूटने, चक्रवात (Cyclones) या समुद्री तूफान आने के कारण बाढ़ अचानक या अति शीघ्र भी आ जाती है। जब नदी का जल स्तर बढ़ने की वजह से आस-पास के किनारे के मैदानों में पानी फैलने लग जाए तो उसे नदी तटीय बाढ़ कहा जाता है। अत्यधिक वर्षा अथवा अत्यधिक बर्फ पिघलने के कारण नदी तटीय बाढ़ आने की सम्भावना बढ़ जाती है। क्योंकि अत्यधिक वर्षा तथा अत्यधिक बर्फ पिघलने से जल की मात्रा नदियों की धारण क्षमता से अधिक हो जाती है और यही अतिरिक्त अधिक जल बाढ़ का रूप धारण कर लेता है। ज्वार, समुद्री तूफान, चक्रवात एवं सुनामी लहरों के कारण समुद्रीय तटवर्तीय क्षेत्रों में बाढ़ आती है।

चेतावनी (Warning)

पिछले दो दशकों से बाढ़ चेतावनी उपग्रह एवं सुदूर संवेदी उपकरणों (Remote Sensing Equipments) के कारण बहुत विकसित हो गयी है। आकस्मिक बाढ़ के अलावा अन्य बाढ़ों में चेतावनी हेतु पर्याप्त समय उपलब्ध रहता है। भारी वर्षा एवं तेज हवा के साथ ऊँचा ज्वार स्वयं में सम्भावित बाढ़ की चेतावनी दे देता है। बाढ़ सम्बन्धित चेतावनियाँ केन्द्रीय जल कमीशन (CWC), सिंचाई एवं बाढ़ नियन्त्रण विभाग तथा जल संसाधन विभाग (WRD) द्वारा प्रसारित की जाती हैं। केन्द्रीय जल कमीशन द्वारा 132 चेतावनी प्रसारण केन्द्र स्थापित किये जा चुके हैं। इनके द्वारा प्रतिवर्ष लगभग 6000 बाढ़ चेतावनियाँ प्रसारित की जाती हैं। यह विभाग प्रशासनिक एवं तकनीकी संस्थाओं से समुचित समन्वय बनाये रखता है।

विशिष्ट प्रभाव (Typical Effects)

बाढ़ के विशिष्ट प्रभाव निम्न प्रकार हैं—

1. भौतिक क्षति (Physical Damage)—बाढ़ के प्रवाह से संरचनायें नष्ट हो जाती हैं। मिट्टी के संतृप्त होने के कारण उत्पन्न भूस्खलन से भी बहुत से मकान नष्ट हो जाते हैं। नावें एवं मछली पकड़ने के उपकरण नष्ट हो जाते हैं।

2. जनस्वास्थ्य एवं मौतें (Public Health and Casualties)—बाढ़ के कारण अनेकों लोग, जीव-जन्तु डूबकर जान गँवा देते हैं तथा सैकड़ों व्यक्ति घायल हो जाते हैं। बाढ़ की वजह से डायरिया, मलेरिया, वायरल, जीवाणु जनित बीमारियाँ एवं महामारी फैलने की पूरी सम्भावना रहती है।

Scanned by CamScanner

3. जल आपूर्ति (Water Supplies)—बाढ़ के कारण पीने का पानी गंदा एवं दूषित हो जाता है। फलस्वरूप पीने योग्य स्वच्छ पानी की कमी हो जाती है तथा जन-जीवन खतरे में पड़ जाता है।

4. फसलों तथा भोजन आपूर्ति पर कुप्रभाव (Bad effect on Crops and Food Supply)—आकस्मिक आने वाली बाढ़ों से फसलों को काफी नुकसान होता है तथा भण्डारित अनाज भी खराब हो जाता है। बाढ़ के दौरान पानी के जमाव से मिट्टी (Soil) के गुणों में परिवर्तन आ जाता है। ऊपरी सतह का अपरदन होने की वजह से मिट्टी की उर्वरक शक्ति कमजोर हो जाती है। समुद्रीय तटवर्ती क्षेत्रों में बाढ़ के खारे पानी के जमाव के कारण मिट्टी में नमक की मात्रा बढ़ जाती है।

मुख्य शमन नीतियाँ (Main Mitigation Strategies)

1. विपत्ति मापन (Hazard Mapping)—प्राचीन अभिलेखों के आधार पर बाढ़ सम्भावित क्षेत्र, बाढ़ आने के समय एवं बाढ़ से जलमग्न क्षेत्रफल की जानकारी एकत्र करके नक्शा तैयार किया जाता है। अधिक बाढ़ की सम्भावना होने पर पूर्व चेतावनी प्रसारित कर देनी चाहिए। तैयार किये गये नक्शे से बाढ़ के जल प्रवाह की दिशा एवं बाढ़ द्वारा आच्छादित क्षेत्र का पूर्व अनुमान लगाना सम्भव हो जाता है।

2. भू-प्रयोग नियन्त्रण (Land Use Control)—बाढ़ सम्भावित क्षेत्रों में आवासीय भवन नहीं बनाये जाने चाहिये। यदि पहले से ही इस क्षेत्र में मकान बने हों तो बाढ़ के सम्भावित समय पर एक अस्थाई आवास सुरक्षित एवं ऊँची जमीन पर बनाकर उसमें चले जाना चाहिए ताकि बाढ़ में लोगों, जानवरों एवं खाद्य सामग्री आदि को बचाया जा सके।

असुरक्षित क्षेत्र में महत्वपूर्ण एवं बड़ी संरचनाओं का निर्माण नहीं करना चाहिए।

3. बाढ़ नियन्त्रण (Flood Control)—भारत सरकार ने सन् 1976 में राष्ट्रीय बाढ़ आयोग (Rastriya Bara Ayog) (RBA) का गठन किया। RBA की 1980 की रिपोर्ट के अनुसार भारत में कुल बाढ़ सम्भावित क्षेत्र 40 मिलियन हैक्टेयर है। बाढ़ नियन्त्रण का तात्पर्य है बाढ़ से सम्भावित क्षति को कम करना एवं बाढ़ के प्रवाह के कुछ उपाय अपनाकर रोकना। पुन: पेड़-पौधे उगाना, पेड़-पौधों एवं वनस्पतियों की सुरक्षा करना, नदियों, नालों से कचरे को साफ करना, तालाबों एवं झीलों का निर्माण करना आदि उपाय बाढ़ को कम करने के लिए किये जाते हैं। बाढ़ के जल प्रवाह की दिशा बदलने के लिए बांध, तट बन्ध एवं नहर सुधार कार्य किये जाते हैं। बाढ़ शरण हेतु लोग बीच में एक बड़ा गड्ढा खोदते हैं। इसकी मिट्टी को किनारों पर एकत्र करके ऊँचाई 5 मी० तक बढ़ा लेते हैं। इस ऊँचाई स्थल पर क्षेत्र कई किलोमीटर तक फैला होता है। बाढ़ के समय लोग इसी ऊँची भूमि पर जानवरों एवं समान के साथ निवास करने लगते हैं। बीच के तालाब का प्रयोग मछली पालन हेतु किया जाता है, जो अनाज की कमी होने पर मनुष्य के भोजन का साधन बन जाता है। लोग जूट केन से एक विशेष प्रकार का मुड़ने वाला घर तैयार कर लेते है, जिसे बाढ़ के समय ऊँचे स्थल पर ले जाकर स्थापित कर लेते हैं, इसे ही चल घर कहते हैं।

ब्लू बेबी सिंड्रोम

कुछ बच्चे ऐसे होते है जिनका नन्हा दिल गर्भावस्था में ही कुछ विकृतियों का शिकार हो जाता है जो जन्म के बाद ही अपना प्रभाव दिखाती है, मसलन ऐसे बच्चे, को अक्सीजन युक्त रक्त की आपूर्ति ठीक से नहीं हो पाती है। इनकी चमड़ी का नीला रंग इसी (Deoxygenated State) का परिणाम होता है। खून का रंग तभी लाल होता है जब उसे पूरी ऑक्सीजन मिलती हो, ठीक से उसका ऑक्सीजनीकरण होता रहे।

सामान्यत: चार कक्षों वाले हमारे दिल में यह व्यवस्था स्वंय चालित तरीके से सम्पन्न होती रहती है। बाँए प्रकोष्ठ (या हृदय कक्ष) में ऑक्सीजनयुक्त रक्त रहता है। बाएँ में ऑक्सीजन वंचित वह रक्त रहता है जो तमाम ऊतकों और कोशिकाओं से होकर आया है।

कभी-कभी साइनोटिक (Cynotic child) या ब्लू बेबी ऐसे बदनसीबों को भी कहा जाता है जिनके फेफड़े रक्त कोऑक्सीजन पूर्ति का सामान्य काम भी ठीक से नहीं कर पाते हैं। साइनोकटिक का अर्थ 'नीला' होता है।

एक और मेडिकल परिस्थिति उत्पन्न होती है। जिसमें ऐसे भूजल के उपयोग से जिसमें नाइट्रेटों की मात्रा मानक स्वीकृत मात्रा से अधिक पायी जाती है। आजकल अनेक रासायनिक खाद बे-हिसाब इस्तेमाल किये जा रहे हैं। नगरों की सरहद में ही भूमि में शहरी मलबा दफन किया जा रहा है। (Pit Latrines) से रिस कर यह नाइट्रेट भू-जल लगातार संदूषित कर रहा है। कुछ विकसित राष्ट्रों में लोग अब सम्भल रहे हैं।

शिशुओं का पांचन तन्त्र इन नाइट्रेटों को नाइट्राइट में परिवर्ति कर देता है। यही नाइट्राइट रक्त में मौजूद ऑक्सीहीमोग्लोबीन से प्रतिक्रिया करके उसे असरग्रस्त कर मीथे-ग्लोबिन में बदल देता है। यह मीथे-ग्लोबिन ऑक्सीजन का वाहन नहीं बन सकती है। जबकि ऑक्सी-हीमोग्लोबिन को जो ब्लड़ प्रोटीन होमोग्लोबिन का एक सक्षम वाहन होता है, यह बेकार कर देता है। इसी प्रोटीन के कारण ही रक्त का रंग लाल रहता है जिसके अभाव मे अब वह नीलापन लेले लगता है। जो चमड़ी और असरग्रस्त साइनोटिक शिशु के इतर अगों मे प्रकट होता है। उँगलियाँ और नाखून भी इस विकृति से असरग्रस्त होते है। नाखूनों की नेल प्लेट की घुमाव, करवेचर या कॉन्वेकजीटी बढ़ जाती है।

उपचार, सर्जरी

29 नवम्बर, 1944 को टेट्रालजी के लिए पहला सफल संचालन में प्रदर्शन किया था जॉन्स हॉपकिंस अस्पताल। 1943 में, सिंड्रोम सर्जन के ध्यान में लाया गया था। अल्फ्रेड Blalock बाल हृदय रोग विशेषज्ञ द्वारा हेलेन बी Taussing। Taussig शिशुओं और बच्चो को जो जन्मजात ब्लू बेबी सिंड्रोम था के सेकड़ों के इलाज के लिए एक तरह से यह पता लगाने की कोशिश कर रहा था। Blalock की शल्य चिकित्सा तकनीशियन, विविएनथॉमस, पहले एक प्रक्रिया सम्मिलन से जुड़े या फेफड़े के धमनी को Subclavian धमनी के शामिल होने अन्य उद्देश्य के लिए विकसित की थी। टेट्रालजी की टेट्रालजी के साथ रोगियों के लिए इस प्रक्रिया को आदत डाल रक्त ऑक्सीजन बनने के लिए एक और मौका दे दिया। सर्जरी है, जो एक के रूप में जाना गया Blalock taussig अलग धकेलना, तेजी से टेट्रालजी की टेट्रालजी के लिए पसंद की उपचार के रूप में दुनिया भर में फैल गया। थॉमस, एक अफ्रीकी अमेरिकी, बाद मे प्रक्रिया का सच डवलपर, जो कभी-कभी कहा जाता है के रूप में मान्यता दी गई थी। Blalock Taussig-thomas अलग धकेलना। 1976 मे, जॉन्स हॉपकिन्स विश्वविद्यालय डॉक्टरेट की मानद उपाधि से थॉमस को पुरस्कृत किया।

सुनामी आपदा का केस अध्ययन (Case Study of Tsunami)

दिसम्बर 26, 2004 रविवार, काला रविवार (Black-Sunday) के रूप मे इतिहास मे सदैव अविस्मरणीय रहेगा। इस दिन इंडोनेशिया के द्वीप उत्तरी सुमात्रा तथा अंडमान व निकोबार द्वीप समूह पर दो भयकर भूकम्प आये जिनमें उत्तरी सुमात्रा में रिऐक्टर पैमाने पर 8.9 सघनता का भूकम्प तथा निकोबार द्वीप समूह पर 7.3 रिऐक्टर पैमाने वाला भूकम्प आया। इन दोनों भूकम्पो के कारण हिन्द महासागर मे भयकर सुनामी लहरें उत्पन्न हुई जिसने मुख्यत: इंडोनेशिया, थाईलैण्ड, श्रीलंका, मालदीव, मलेशिया, भारत तथा पूर्वी अफ्रीकी देशों जैसे कीनिया, इथोपिया, जंजीबार एवं सोमालिया आदि के समुद्र तटीय क्षेत्रों में भारी तबाही मचाई। इस सुनामी ने 150000 जीवन को समाप्त कर दिया। प्रथम भूकम्प का केन्द्र सुमात्रा से लगभग 165 km पश्चिम में समुद्र तल से लगभग 30 km नीचे ''रिंग ऑफ फायर (Ring of Fire)'' नामक क्षेत्र था।

सुनामी शब्द जापानी भाषा का शब्द है। यह दो शब्दों ''सू (Tsu)'' अर्थात् समुद्री किनारा या बन्दरगाह (Harbour) तथा ''नामी (Nami)'' अर्थात लहरों (Waves) से बना है। ये (सुनामी) लहरें, भूकम्पों, ज्वालामुखीय विस्फोटन तथा जलगत भूस्खलनों (Underwater Landslides) के कारण उत्पन्न होती है। सुनामी लहरे 50 km प्रति घण्टे की गति से चलती हैं तथा 15 मीटर ऊँची या उससे अधिक हो सकती हैं। सुनामी लहरों में भयावह शक्ति (Devastating Force) होती है जिनके आगे बड़ी-बड़ी चट्टानें भी असहाय हो जाती है।

Scanned by CamScanner

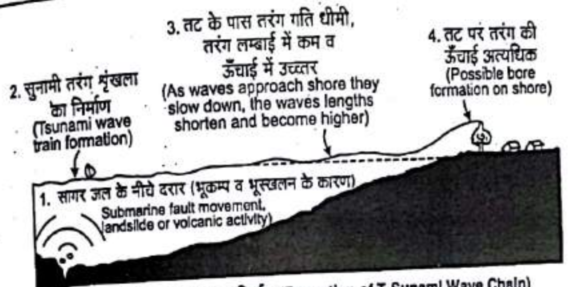

चित्र 7.2–सुनामी लहर शृंखला का निर्माण (Formation of T-Sunami Wave Chain)

दिसम्बर 26, 2004 को घटित सुनामी के कारण (Causes of T-Sunami Occurred on 26th of December, 2004)—पृथ्वी की सम्पूर्ण सतह नौ बड़ी तथा कई छोटी गतिशील प्लेटों में खण्डित अवस्था में होती हैं। ये प्लेटें टैक्टॉनिक प्लेटों (Tectonic Plates) के नाम से जानी जाती हैं। प्रत्येक टैक्टॉनिक प्लेट लगभग 50 मील मोटाई वाली होती हैं। ये प्लेटें हर

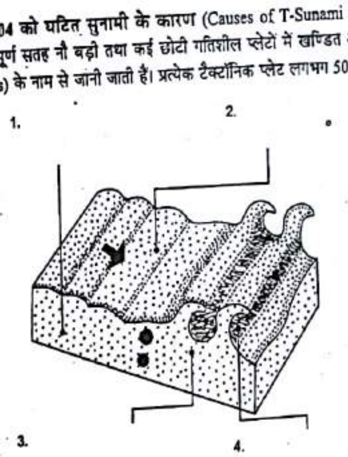

चित्र 7.3–सुनामी लहर शृंखला का बनना
(Formation of T-Sunami Wave Train)

वर्ष एक-दूसरे की ओर औसतन कुछ इंच सापेक्ष गति करती हैं। दिसम्बर 26, 2004 (रविवार) को बर्मा (म्यांमार) प्लेट के नीचे भारतीय प्लेट फिसल गई और इससे दबाव उत्पन्न हो गया। प्लेटों के अचानक खिसक जाने से भूकम्प आया। टैक्टॉनिक हलचल (Tectonic Movement) की वजह से महासागर का एक भाग विस्थापित हो गया तथा इस दबाव से पानी ऊपर आ गया। जिसके परिणामस्वरूप ये लहरें लगभग 750 किमी॰ प्रति घण्टा या उससे अधिक की गति से समुद्र तट की ओर दौड़ने लगीं। चित्र 7.3 में सुनामी का बनना तथा चित्र 7.4 में सुनामी 2004 की उत्पत्ति एवं इसके प्रभावित क्षेत्रों को दर्शाया गया है।

सुनामी आपदा की विनाशक शक्ति (Destructive Power)—बहुत ही भयावह था दिसम्बर 26, 2004 का सुनामी जो विश्व

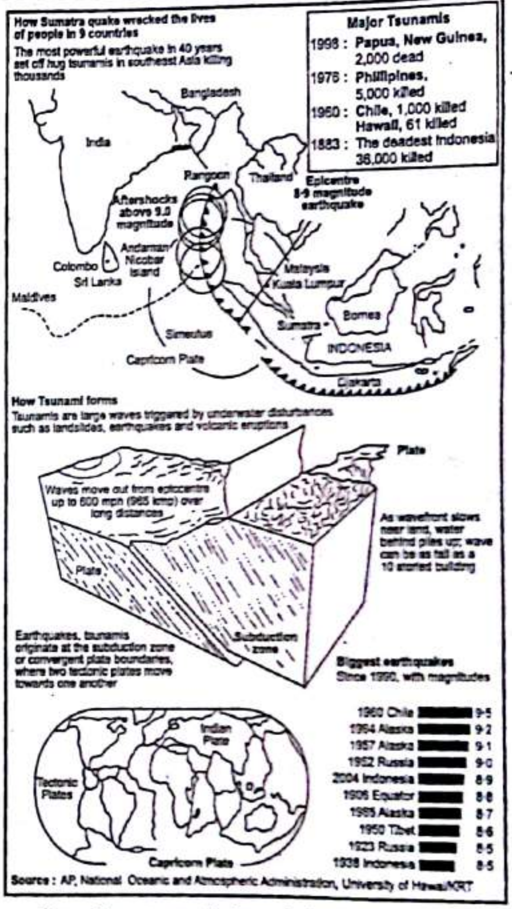

चित्र 7.4–दिसम्बर 26, 2004 को घटित सुनामी की उत्पत्ति तथा इसका प्रभाव
(Origin of T-Sunami occurred on 26th December, 2004 and its effected areas)

के इतिहास में आधुनिक समय की सबसे भयावह त्रासदी (आपदा) के रूप में सदैव अविस्मरणीय रहेगी। समस्त अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय समाचार पत्रों व टी॰ वी॰ चैनलों की सूचना के अनुसार विगत फरवरी 2, 2005 तक कुल 2,90,000 से अधिक व्यक्ति सुनामी में काल के ग्रास बने। इस सुनामी से 2,37,071

भारतवर्ष में, 5,393 थाईलैण्ड में, 82 मालदीव में, 68 मलेशिया में, 61 म्यांमार में, 29 सोमालिया में, 10 तन्जानिया में, 2 बंग्लादेश में एवं एक कीनिया व एक व्यक्ति सैशल्स में मारे गये। इस आपदा की चपेट से करोड़ों व्यक्ति बेघर हो गये, हजारों व्यक्ति लापता हो गये तथा अरबों व्यक्तियों को भारी आर्थिक नुकसान हुआ था। अतः इंडोनेशिया में मृतकों की संख्या का आकलन उपरोक्त संख्या से कहीं अधिक के अनुमान की आशंका जतायी। इस हादसे के दौरान सिर्फ भारत को 5350 करोड़ रुपये का आर्थिक नुकसान पहुँचा था।

सुनामी ने पूरे विश्व का नक्शा ही बदल डाला। वास्तविकता यह है कि सुमात्रा की इंडोनेशियन टेरीटेरी के उत्तर-पश्चिम छोर को दक्षिण-पश्चिम की तरफ लगभग 36 मीटर विस्थापित कर दिया तथा सुमात्रा के दक्षिण-पश्चिम के द्वीपों को पश्चिम की ओर लगभग 20 मीटर की दूरी तक आगे खिसका दिया। इस सुनामी ने सुमात्रा के उत्तर-पश्चिमी छोर को दक्षिण की ओर लगभग 36 मीटर आगे खिसका दिया।

उपरोक्त दुष्प्रभावों के अलावा इस सुनामी की विनाशक शक्ति के अन्य घातक दुष्प्रभाव निम्नांकित हैं—

(i) समुद्री तटवर्ती क्षेत्रों के समीप स्थित पर्यटक स्थलों, रिजोर्टों तथा होटलों इत्यादि का क्षतिग्रस्त हो जाना।

(ii) संक्रामक रोगों की चपेट में भारी संख्या में व्यक्तियों का ग्रसित होना।

(iii) समुद्री जल का दूषित हो जाना।

(iv) रेल मार्गों का क्षतिग्रस्त हो जाना।

(v) संचार एवं यातायात व्यवस्था के ध्वस्त हो जाने से देश का आर्थिक रूप से काफी पिछड़ जाना।

(vi) अनेक मछुआरों की उपयोगी नावों तथा जहाजों का क्षतिग्रस्त हो जाना तथा उनकी जीविका पर बुरा प्रभाव होना।

(vii) विद्युत खम्भों इत्यादि के टूटने से बिजली की व्यवस्था का खराब होना, फलतः औद्योगिक प्रगति में व्यवधान होना।

सुनामी का सामना करने के उपाय (Measures to Face T-Sunamis)

(A) सुनामी आने से पूर्व की जाने वाली बचाव की क्रियाएँ (Measuring Activities to be done before T-Sunami)

(i) आपदा के समय उपयोग में आने वाली वस्तुओं को अपने पास उपलब्ध रखना चाहिए।

(ii) यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि अपना क्षेत्र सुनामी ग्रसित क्षेत्र की सीमा के अन्तर्गत आता है अथवा नहीं।

(iii) अपने घर/मकान/दुकान इत्यादि की समुद्र तल से ऊँचाई के बारे में मालूम रखना चाहिए तथा समुद्र तट से इसकी दूरी का पता भी रखना चाहिए।

(iv) अपने किसी ऐसे अत्यधिक नजदीकी रिश्तेदार को सम्पर्क व्यक्ति के रूप में मदद के लिए तैयार रखना चाहिए, जो कि सुनामी क्षेत्र से काफी दूर रहता हो।

(v) सुनामी से होने वाली सम्भावित क्षति के बारे में अपने समस्त परिवारजनों के साथ गम्भीरता से विचार-विमर्श करना चाहिए।

(vi) अपने घर/दुकान/स्कूल से बचाव के रास्ते के बारे में भली-भाँति अवगत रहना चाहिए तथा पहले से ही इसे देख भी लेना चाहिए।

(vii) आपदा से पूर्व वैकल्पिक संचार व्यवस्था के बारे में भविष्य की योजना तैयार कर लेनी चाहिए।

(B) सुनामी के खतरे के समय में की जाने वाली क्रियायें (Activities to be done during Danger Period of T-Sunami)

(i) इंजीनियर तथा योग्य वास्तुकार के परामर्श से अपने घर को सुनामी प्रूफ बनवायें।

(ii) आपातकालीन आवश्यक सामग्री अपने पास उपलब्ध रखें।

(iii) अपने एवं अपने समस्त परिवार-जनों की जेब में टेलीफोन नम्बर तथा पूरा पता लिखकर रखना चाहिए।

(iv) सुनामी के दौरान मकान के अन्दर लाने वाले सामान की सूची पहले से ही तैयार रखनी चाहिए।

(v) समुद्र तट से नजदीक के आपदा सम्भावित क्षेत्र में मकान/घर/भवन/दुकान इत्यादि बनवाना सर्वथा अहितकर रहता है, इस बात को ध्यान में रखना चाहिए।

(vi) घरों को बाढ़ के पानी से बचाने के लिए उन्हें ऊँचे स्थान पर बनाना चाहिए।

(vii) स्थानीय टेलीविजन/रेडियो इत्यादि से प्रसारित होने वाले समाचारों को सुनते रहना चाहिए।

(viii) स्थानीय सरकारी अधिकारियों के निर्देशों का अनुपालन किया जाना चाहिए।

(C) सुनामी के दौरान की जाने वाली क्रियायें (Activities to be done during T-Sunami)

(i) सुनामी की चेतावनी के बारे में अपने पूरे परिवार को भली-भाँति अवगत करा दें।

(ii) यदि आपका मकान समुद्र तट के काफी नजदीक हो और आपको यदि भूकम्प के झटकों का आभास हो जाए तो तुरन्त उसी समय किसी ऊँचे स्थान पर पहुँच जाएँ।

(iii) पोताश्रय अधिकारियों से सम्पर्क बनाये रखें तथा उनके निर्देशों का पालन करें।

(iv) आपदा के दौरान किसी ऊँचे सुरक्षित स्थान पर जाते समय अपने पशुओं को भी अपने साथ ही रखें।

(v) आपदा के दौरान निचले स्थानों से काफी दूर हट जाएँ।

(vi) यदि आपका मकान बहुमंजिली इमारत हो तो सर्वप्रथम अपने परिवारजनों को घर की ऊपरी छत पर पहुँचा दें।

(vii) आपदा के दौरान धैर्य रखें, शान्ति बनायें रखें तथा डरकर परेशान न होंवे।

(viii) सुनामी के दौरान अपनी आपदा सामग्री सदैव अपने साथ रखनी चाहिए।

(ix) रेडियो, टेलिविजन को लगातार सुनते रहें।

(x) सुनामी के बारे में नवीनतम जानकारी पता करते रहें।

(xi) सुनामी के दौरान यदि आप समुद्र तट पर स्थित किसी होटल में हो तो तुरन्त ही आप उसकी ऊपरी छत पर पहुँच जाएँ।

(xii) सुनामी के दौरान यदि आप किसी नाव या जहाज में हों तो समुद्र तट की ओर कदापि न बढ़ें।

(xiii) सुनामी की चेतावनी की प्रतीक्षा कदापि नहीं करनी चाहिए।

(xiv) यदि आप किसी छोटी नाव में हों तथा नाव चलाना यदि आप जानते हों तो अपनी नाव को पियर से बाँध कर स्वयं ऊँचे स्थान पर पहुँच जाएँ।

(xv) नाव या जहाज से सफर करते समय यदि सम्भव हो तो गहरे समुद्र की तरफ शान्त होकर चले जाएँ, क्योंकि वहां पर सुनामी का प्रभाव अपेक्षाकृत कम महसूस होता है।

(xvi) सुनामी के दौरान पोताश्रय अधिकारियों से सम्पर्क बरकरार रखे और उनके निर्देशों का अनुपालन करते रहें तथा उन्हीं के निर्देशों के अनुसार ही आप वापस समुद्र तट की ओर प्रस्थान करें, अन्यथा नहीं।

(D) सुनामी के जाने के पश्चात् की जाने वाली क्रियायें (Activities to be done after the T-Sunami is gone)

(i) सुनामी से हुए नुकसान की वस्तु-स्थिति से अवगत हो जाना चाहिए।

(ii) रेडियो, टेलीविजन से प्रसारित होने वाले ताजा समाचारों को सुनते रहे।

(iii) यदि आपको या आपके परिवार-जनों को शारीरिक चोटें लगीं है तो उनके उपचार की उचित व्यवस्था कीजिये।

(iv) यदि आपदा से क्षतिग्रस्त लोगों का बचाव करना है तो बचाव सामग्री से युक्त दुरुस्त लोगों को बुलाइये और उनसे बचाव कार्य प्रारम्भ करे।

(v) बाढ़ के पानी मे डूबे भवनो से दूर रहें, क्योंकि हो सकता है कि बाढ़ के पानी ने भवनों की नींव को इतना कमजोर कर दिया हो कि वे गिर जाएं। इसके अलावा बाढ़ के पानी के प्रभाव से फर्शों मे दरारें (Cracks) आ सकती है तथा दीवारें भी फटकर जमीन पर गिर सकती है।

(vi) आपदाग्रस्त भवनों/मकानो मे प्रवेश करते समय विशेष सावधानी व सतर्कता बरतें।

Scanned by CamScanner

(vii) मकानों में प्रवेश करते समय पूरी आस्तीन की कमीज, पूरी पैण्ट तथा मजबूत जूते पहिनें और क्षतिग्रस्त होने से बचें।

(viii) आपदाग्रस्त क्षेत्र में अनावश्यक रूप से घूमने न जाएं, जिससे अधिक भीड़ के कारण राहत कार्यों में काफी व्यवधान न पड़े।

(ix) आपदाग्रस्त क्षेत्रों में भयावह विनाशलीला को देखना कभी-कभी काफी घातक सिद्ध हो जाता है अर्थात् दिलो-दिमाग पर इसका अत्यन्त बुरा प्रभाव पड़ता है।

(x) आपदा से प्रभावित क्षेत्र में अधिक रुकना स्वास्थ्य के लिए सर्वथा अहितकर रहता है, वहाँ के दूषित पर्यावरण से अनेकों भयंकर बीमारियाँ लग सकती हैं।

(xi) सुनामी घटने के पश्चात् टेलीफोन का अनावश्यक प्रयोग कदापि न करें, क्योंकि उस समय आपसे ज्यादा किसी अन्य को टेलीफोन की आवश्यकता हो सकती है।

(xii) सुनामी घटने के पश्चात् भवनों का निरीक्षण करते समय निम्नांकित बातों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए—

(a) भवनों के निरीक्षण के दौरान मोमबत्ती का प्रयोग न करके बैटरी चालित लालटेन या फ्लैश लाइट का प्रयोग किया जाना चाहिए।

(b) दरारों इत्यादि के लिए मकान की नींव की जाँच पड़ताल अवश्य कर लें।

(c) मकान की दीवारों, खिड़कियों, रोशनदानों, दरवाजों तथा जीने (Staircase) आदि की उचित जांच पड़ताल कर लें तथा भवन की सामर्थ्य का भली-भाँति परीक्षण कर लें।

(d) भवनों के फटे प्लास्टर, दीवारों तथा छतों की भली-भाँति जाँच-पड़ताल कर लें।

(e) यह देखना भी अति आवश्यक है कि कोई भी बिजली चालित यन्त्र पानी में डूबा तो नहीं है, साथ ही यह भी देख लें कि कोई भी बिजली स्विच ऑन स्थिति में तो नहीं है।

(f) मलवे मे दबे सामान को ढूँढने के लिए लकड़ी या लाठी का प्रयोग किया जाना चाहिए।

(g) बिजली का मैन स्विच बन्द होना चाहिए।

(h) गैस के लीकेज का परीक्षण भी कर लेना आवश्यक है। सुरक्षात्मक दृष्टि से सभी खिड़कियों व रोशनदानों को खोलकर रखना चाहिए।

(i) सीवेज तथा पानी की लाइनें भली-भाँति चेक कर लें।

(j) फ्रिज के जमे पानी को सदैव पिघलाकर पियें। टेप जल का प्रयोग अधिक श्रेयस्कर रहता है।

(k) जहरीले जीव-जन्तुओं से अपना बचाव रखना चाहिए।

सुनामी चेतावनी प्रणाली (T-Sunami Warning System)

सुनामी नामक विषय की अनभिज्ञता 26 दिसम्बर, 2004 की आपदा का कारण बनी। कराची के तटवर्ती क्षेत्र में 27 नवम्बर, 1945 को घटने वाली सुनामी से भी हमारी आँखें नहीं खुलीं। इस सुनामी की वजह से समुद्र में लगभग 14 मीटर ऊँची तरंगें उत्पन्न हुई और इसने महाराष्ट्र एवं गुजरात के तटवर्ती क्षेत्रों में भयंकर तबाही मचा दी थी। यही कारण है कि अधिकांश संवेदनशील क्षेत्र/देश सुनामी चेतावनी प्रणाली का प्रयोग करते हैं। वस्तुत: देखा जाए तो सुनामी चेतावनी प्रणाली के विकास पर काफी खर्चा आता है, फिर भी इस चेतावनी प्रणाली का विकास किये जाने के अतिरिक्त हमारे पास और कोई विकल्प नहीं है। नेशनल ओसनिक एण्ड एस्मोफियरिक एडमिनिस्ट्रेशन सेन्टर हुनुलुलू के डायरेक्टर चार्ल्स मैक कैरी के अनुसार यदि भारत में यह सुनामी चेतावनी प्रणाली होती तो इस आपदा की चपेट से अधिकांश मरने वाले व्यक्तियों को मौत के मुंह से बचा लिया होता।

अब इसलिए सुनामी चेतावनी प्रणाली को विकसित किया जाना अति आवश्यक हो गया है। साथ ही यह अनुमानित आंकड़ा है कि सुनामी चेतावनी प्रणाली के विकास पर सम्भवत: 1000 करोड़ रुपये व्यय करने होंगे। 11,000 लोगों की मौत,

30,000 लोगों के लापता होने एवं लाखों लोगों के बेघर होने के सामने 1000 करोड़ रुपये की राशि का कोई मूल्य नहीं है। इस आर्थिक क्षति के विषय में यदि गम्भीरता से लिया जाए तो यह क्षति 2000 करोड़ से भी कहीं अधिक बैठेगी।

यू० एस० ए० (USA) का पश्चिमी तट प्रशान्त महासागर में आने वाले सुनामी के क्षेत्र में आता है। इसमें सुनामी चेतावनी प्रणाली को विकसित किया गया है। इस प्रणाली के अन्तर्गत व्यक्तियों को सुनामी से बचने हेतु सुरक्षित स्थान पर चले जाने की चेतावनी दी जाती है।

भारत ने भी इस दिशा में काफी पहल की है। भारत में 26 दिसम्बर, 2004 की सुनामी के पश्चात् प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में सुनामी चेतावनी प्रणाली के अन्तर्गत नेशनल डिसास्टर मैनेजमैन्ट आर्थोरिटी की स्थापना की गई है। इस सम्बन्ध में एक बिल भी तैयार किया जा चुका है, जो शीघ्र ही संसद में प्रस्तुत किया जायेगा। तत्पश्चात् देश में स्थायी तौर पर सुनामी आदि से बचने हेतु डिजास्टर मैनेजमैन्ट सिस्टम होगा।

उपरोक्त के अलावा भारत सरकार द्वारा अग्रांकित ठोस कदम तत्काल उठाये गये हैं—

1. भारत ने स्वयं को 26 देशों के नेटवर्क सिस्टम से जोड़ लिया है। इसके फलस्वरूप ये उपरोक्त देश समय पर एक-दूसरे को आवश्यक सूचना प्रदान करते हैं, साथ ही एक-दूसरे की सहायता भी करते हैं।
2. यू० एस० ए० से डिजास्टर डिटैक्टिंग सिस्टम लेने की योजना निर्मित की है।
3. समुद्री तटवर्ती क्षेत्रों में वृक्षारोपण से Shelter Belt बनाने की योजना पर कार्य प्रारम्भ कर दिया है।
4. लोगों में जीवन बचाव क्षमता (Survival Skills) का समुचित विकास किया जायेगा।
5. समुद्र तटीय क्षेत्रों में Building Bye Laws के अनुसार भवनों का निर्माण किया जायेगा।
6. समुद्र तट के साथ-साथ संलग्न दीवार बनाये जाने का सुझाव भी भारत सरकार के समक्ष विचाराधीन है।

सूखा (Drought)

कहीं भी सामान्य से कम वर्षा का होना या पूरे मौसम में वर्षा का न होना, जो प्राणियों, पौधों एवं जानवरों की आवश्यकता को पूरा करने में अपर्याप्त हो, वही प्राकृतिक आपदा या सूखा कहलाती है।

आक्रमण का प्रकार एवं चेतावनी (Onset type and Warning)

यह बहुत ही धीमी गति से आने वाली विपत्ति है। धीरे-धीरे वर्षा का कम होना, भू-जल स्तर का कम होना, कुओं का सूखना, नदियों एवं तालाबों का सूखना आदि सभी धीमी गति से होने वाली घटनायें हैं। जब वर्षा औसत वर्षा की 10% से कम होती है, तब इसे सूखाग्रस्त कहा जाता है। सूखे की चेतावनी की कोई आवश्यकता नहीं होती।

असुरक्षित तत्व (Element at Risk)

वर्षा पर निर्भर फसलें ही सूखे से सर्वाधिक प्रभावित होती हैं जहां पर भूमिगत जल एवं नहर का पानी सिंचाई के लिए उपलब्ध नहीं होता एवं जहां पशुओं के चारे की हरे चारे के अतिरिक्त व्यवस्था नहीं की जाती है। वहां पर सूखा का प्रकोप सर्वाधिक देखा जाता है, इस तरह के सूखे से चरवाहे (Herdsman), भूमिहीन मजदूर, खेती पर निर्भर किसान, बच्चे, औरतें एवं जानवर सर्वाधिक प्रभावित होते हैं।

विशिष्ट प्रभाव (Typical Effects)

अन्य प्राकृतिक आपदाओं की भाँति सूखा संरचनाओं को क्षति नहीं पहुंचाता। इसके विशिष्ट प्रभावों में दुग्ध व्यवसाय, फसल, लकड़ी एवं मछलियों का उत्पादन नष्ट हो जाता है। भूमिगत जल का दोहन अधिक हो जाता है, इसके प्रभाव से बेरोजगारी बढ़ जाती है, भूमिगत जल-स्तर नीचा हो जाता है। भोजन की कमी हो जाती है एवं लोग जीवन एवं रोजगार हेतु पलायन करना प्रारम्भ कर देते हैं।

Scanned by CamScanner

प्रमुख शमन की नीतियाँ (Main Mitigation Strategies)

1. सूखा प्रबोधन (Drought Monitoring)—इस नीति के अन्तर्गत वर्षा की स्थिति, तालाबों, झीलों एवं नदियों में जल की उपलब्धता एवं वर्तमान में जल की कुल आवश्यकता का विस्तृत अध्ययन किया जाता है।

2. जल आपूर्ति वृद्धि एवं संरक्षण (Water Supply Augmentation and Conservation)—वर्षा के जल का संचय करके घरो में एवं खेतों में इस जल का प्रयोग किया जा सकता है। इसके लिए रूफ टॉप रेनवाटर हार्वेस्टिंग द्वारा वर्षा जल को सीधे खेतों में सिंचाई हेतु भेजा जा सकता है या फिर इसे किसी बड़े तालाब या झील में इक्ट्ठा किया जा सकता है। अथवा इसे भूमिगत जल में फिल्टर करके भेजा जा सकता है। इस तरह से हम वर्षा जल को व्यर्थ में नहीं बह जाने देते और इसका उपयोग फसलों की सिंचाई एवं अन्य आवश्यकताओं में किया जा सकता है।

3. रोजगार योजना (Livelihood Planning)—इसके अन्तर्गत ऐसे रोजगार की तलाश की जाती है, जो सूखा से प्रभावित नही होते। ऐसे कुछ रोजगार निम्नलिखित है—

(a) खेती के अलावा अन्य रोजगार अपनाना।

(b) बकरी पालन अपनाना।

(c) लकड़ी का काम करना।

(d) जंगलों से निर्माण में प्रयुक्त न होने वाली लकड़ी (Non Timber) एकत्र करना।

4. सिंचाई संसाधन बढ़ाना (Increase Irrigation Facilities)—सिंचाई की अन्य सुविधायें, जैसे—नलकूप से सिंचाई, नहर से सिंचाई आदि से सूखे के प्रभाव को कम किया जा सकता है।

5. सूखा योजना (Drought Planning)—इसके अन्तर्गत विशेषज्ञों की एक टीम बनाई जाती है, जो सूखे के समय सरकार को निर्णय लेने में सहायता प्रदान करती है। फसलों का बीमा कराने हेतु किसानों को प्रोत्साहित किया जाता है।

6. जनजागरण एवं शिक्षा (Public Awareness and Education)—सूखा प्रभावित क्षेत्र में लोगों को सूखे से बचाव के साधनों की जानकारी राज्य सरकार द्वारा प्रदान की जानी चाहिये। रूफ टॉप रेन वाटर हार्वेस्टिंग एवं जल संरक्षण उपायों की जानकारी लोगो को उपलब्ध करानी चाहिए।

7. एक सफल प्रयास (A Successful Effort)—अब से बीस साल पहले महाराष्ट्र के रालेगान सिद्धि (Ralegon Siddhi) गाँव में कोई पेड़ नहीं था, जमीन बंजर थी, कहीं भी घास तक नजर नहीं आती थी। उसी समय एक सामाजिक कार्यकर्ता अन्ना हजारे ने वर्षा जल संचित करने की दिशा में एक आन्दोलन चलाया। उनके दिशा निर्देशन में गाँव वालों ने नदियों एवं नालों पर चेक डैम बनाये तथा मैदानी क्षेत्र में टैकों का निर्माण कर उसमें वर्षा जल को संचित किय। मृदा संरक्षण हेतु उन्होंने वृक्षारोपण कराया और इनकी इस कोशिश का परिणाम यह हुआ कि 80 एकड़ सिंचित भूमि 20 साल में बढ़कर 1300 एकड़ तक हो गयी और प्रति व्यक्ति आय 225 रुपये से बढ़कर 2250 रुपये हो गयी। यह सब केवल गाँववासियों के कठिन परिश्रम का फल था, इस कार्य के लिए सरकार से कोई सहायता नहीं ली गयी।

राष्ट्रीय नीति (National Policy)

अक्टूबर 1999 में उड़ीसा में आये चक्रवात और 26 जनवरी 2001 में भुज में आये भूकम्प के बाद आपदाओं से होने वाली क्षति को कम करने हेतु बहुमुखी (Multi-dimensional) प्रयास करने की आवश्यकता महसूस की गयी। अगर हम देखें तो पिछले कुछ वर्षों से भारत सरकार की विकास सम्बन्धी नीतियो मे व्यापक परिवर्तन आया है। भारत सरकार ने यह महसूस किया कि विकास प्रक्रियाओं में आपदा का सामना करने के उपाय किये बिना विकास को जारी रखना सम्भव नहीं है। ये उपाय विकास के सभी चरणो मे बहुमुखी होने चाहिएँ। इस तरह नई नीति का उदगम् इस विश्वास के साथ हुआ है कि राहत एवं पुनर्वास कार्य हेतु किये गये व्यय की तुलना में शमन कार्य (Mitigation) में किया गया व्यय ज्यादा सार्थक एवं प्रभावी होता है।

इस देश मे नीतिगत ढांचे (framework) मे आपदा प्रबन्धन का एक महत्वपूर्ण स्थान है। क्योंकि इस देश में गरीब एवं पिछड़े हुए लोग ही आपदाओं से सर्वाधिक प्रभावित होते है। राष्ट्रीय नीति के अन्तर्गत राष्ट्रीय आपदा का ढांचा (National Disaster Framework) तैयार किया गया। इसे निम्न भागो मे बांटा गया है—

1. संस्थागत रचना (Institutional Mechanism)
2. आपदा निवारण रणनीति (Disaster Prevention Strategy)
3. पूर्व चेतावनी पद्धति (Early Warning System)
4. आपदा शमन (Disaster Mitigation)
5. तैयारी एवं प्रतिक्रिया (Preparedness and Response)
6. मानव संसाधन विकास (Human Resource Development)

सभी मंत्रालयो, भारत सरकार के विभागों, राज्य प्रशासन एवं संघीय गणराज्य के प्रशासन को यह सलाह दी जाती है कि वे उपरोक्त राष्ट्रीय आपदा के ढांचे के अनुरूप ही अपना-अपना निजी ढांचा तैयार करें। इस प्रकार आपदाओं का सामना करने हेतु सभी संस्थाओं को संयुक्त रणनीति (Common Strategy) के अनुसार काम करना चाहिए।

राष्ट्रीय आपदा प्रबन्धन ढाँचा (National Disaster Management and Policy Framework)

1. संस्थागत एवं नीतिगत ढाँचा (Institutional and Policy Framework)

(i) आपदा राहत एवं पुनर्वास हेतु संस्थागत एवं नीतिगत ढांचा आजादी के समय से ही अच्छी तरह से चल रहा है। आपदा प्रबन्धन से सम्बन्धित सभी मामलो के लिए गृह मंत्रालय (Ministry of Home Affairs) एक नियंत्रक मंत्रालय (Nodal Ministry) है। केन्द्रीय राहत कमिश्नर (Central Relief Commissioner) (CRC) इसका नोडल अधिकारी होता है। यह भारतीय माप विभाग (Indian Meterological Department, IMD) एवं केन्द्रीय जल कमीशन (Central Water Commission) (CWC) से पूर्व चेतावनी/भविष्यवाणी से सम्बन्धित सभी प्रकार की सूचनाये नियमित रूप से प्राप्त करता है। इसके अतिरिक्त आपदा प्रबन्धन से सम्बन्धित सभी विभाग/मंत्रालय/संस्थान अपना एक नोडल अधिकारी नियुक्त करते है।

(ii) **राष्ट्रीय संकट प्रबन्धन समिति** (National Crisis Management Committee) (NCMC)—मन्त्रिमण्डल सचिव (Cabinet Secretary) इस समिति का कार्यकारी अधिकारी होता है। सभी विभागों; मंत्रालयों एवं संस्थानों के सचिव इसके सदस्य होते है। गृहमंत्रालय के सचिव की यह जिम्मेदारी होती है कि वह NCMC को विकास से सम्बन्धित सभी जानकारियाँ तुरन्त उपलब्ध कराये। यह समिति किसी भी मंत्रालय/विभाग को संकट की अवस्था में जरूरी निर्देश दे सकती है।

(iii) **संकट प्रबन्धन समूह** (Crisis Management Group) (CMG)—इस समिति का चेयरमैन केन्द्रीय राहत कमिश्नर (CRC) होता है। अन्य मन्त्रालयों, विभागो एवं संस्थानों के नामित नोडल अधिकारी इसके सदस्य होते हैं। सभी विभागो द्वारा तैयार किये गये प्रत्येक वर्ष के आकस्मिक व्यय की योजनाओ का पुनरीक्षण CMG द्वारा किया जाता है। आपदा प्रबन्धन द्वारा अपनाये गये उपायों की भी समीक्षा CMG द्वारा की जाती है।

(iv) **नियन्त्रण कक्ष** (Control Room)—नोडल मंत्रालय (गृह मंत्रालय) मे एक आकस्मिक संचालन केन्द्र (नियन्त्रण कक्ष) (Emergency Operation Centre) (Control Room) की स्थापना की जाती है। यह 24 घंटे खुला रहता है। यह केन्द्रीय राहत कमिश्नर को उनके कर्तव्यों में सहायता प्रदान करता है। यह संकटकाल में सभी सूचनाएं इकट्ठी करने एवं प्रभावित राज्य के सम्बन्धित अधिकारी तक सूचना पहुंचाने का भी कार्य करता है।

(v) **आकस्मिक कार्य योजना** (Emergency Action Plan)—भारत सरकार राष्ट्रीय आकस्मिक कार्य योजना तैयार करती है और उसका निश्चित अन्तराल पर संशोधन भी करती है जिससे प्राकृतिक आपदा से उत्पन्न आकस्मिक आवश्यकताओ की पूर्ति करने में विलम्ब नहीं होता। राहत एवं सहायता शीघ्र उपलब्ध करायी जा सकती है।

(vi) **राज्य राहत नियमावली** (State Relief Mannuals)—सभी राज्यों के पास अपनी राहत नियमावली एवं आई॰ एस॰ कोड्स होते है जो कि आपदा प्रबन्धन में प्रत्येक अधिकारी के कार्यों एवं दायित्वों को निर्धारित करते है। इनका संशोधन समय-समय पर राज्य सरकार द्वारा किया जाता है।

Scanned by CamScanner

(vii) कोष तन्त्र (Funding Mechanism)—प्रत्येक राज्य में एक आपदा राहत कोष (Calamity Relief Fund) (CRF) की स्थापना ग्यारहवें वित्त आयोग की संस्तुति के आधार पर की गयी है। CRF का आकार भी वित्त आयोग द्वारा ही निर्धारित किया जाता है। CRF का 75% भारत सरकार द्वारा एवं 25% राज्य सरकार द्वारा वहन किया जाता है। जब राहत एवं सहायता राशि CRF अधिक हो जाती है तब राज्य सरकार 'राष्ट्रीय आपदा आकस्मिक कोष' (National Calamity Contingency Fund) से आवश्यक कोष की माँग करती है। यह कोष केन्द्र सरकार द्वारा स्थापित किया जाता है।

(viii) आपदा के समय राहत एवं पुनर्वास का मुख्य दायित्व राज्य सरकार का होता है। राज्य स्तर पर राहत एवं पुनर्वास का कार्य मुख्य रूप से राहत एवं पुनर्वास विभाग द्वारा किया जाता है। प्रमुख सचिव की अध्यक्षता में एक राज्य आपदा प्रबन्धन समिति का गठन किया जाता है। राज्य में स्थित सभी संस्थाओं एवं विभागों का प्रतिनिधित्व इस समिति मे रहता है। राहत कमिश्नर के अधीन एक कन्ट्रोल रूम की स्थापना की जाती है।

आपदा शमन एवं रोकथाम (Disaster Mitigation and Prevention)

सतत् विकास के लिए यह आवश्यक है कि समय-समय पर आने वाली आपदाओं से होने वाली जन-सम्पत्ति की हानि को कम करने के लिए आपदा शमन एवं रोकथाम हेतु पर्याप्त उपाय किये जायें वरना विकास कार्य को जारी रख पाना सम्भव नहीं होगा। दसवीं पंचवर्षीय योजना में आपदा प्रबन्धन के अन्तर्गत आपदा शमन एवं रोकथाम को भी सम्मिलित किया गया। आपदा सम्भावित क्षेत्र में किसी भी विकास योजना में आपदा शमन को आवश्यक रूप से लागू करने हेतु केन्द्र सरकार ने आवश्यक दिशा निर्देश जारी किये हैं।

सन् 1950 के बाद बाढ़ शमन हेतु (बाढ़ रोकने हेतु) काफी प्रयास किये गये। इसके अन्तर्गत बाँध, बैराज एवं तटबन्ध बनाये गये। बाढ़ के समय लोगों को सुरक्षित करने के लिए ऊँचे-ऊँचे प्लेटफार्म बनाये जाते हैं। अनियमित मानसून के कारण मध्यम एवं कम वर्षा वाले क्षेत्र में सूखे की अक्सर सम्भावना रहती है। ऐसे क्षेत्र मे वर्षा जल को संचित करने हेतु तालाब, झील आदि का सुधार कर वर्षा जल को संचित किया गया। वर्षा जल को नदी में बह जाने से रोकने हेतु तटबन्ध बनाये गये। भूकम्प से सुरक्षा हेतु भूकम्परोधी भवनों के निर्माण हेतु प्रयास किये गये। इस कार्य हेतु बहुत से अभियन्ताओं, आर्किटेक्ट्स एवं कारीगरों को प्रशिक्षित किया गया, जागरूकता अभियान चलाये गये, पुराने जीवनदायी (Life line) भवनों का आवश्यक रूप से सुदृढ़ीकरण कराया गया। इसी तरह तटीय चक्रवातों एवं तूफानों से जनजीवन बचाने हेतु राष्ट्रीय कोर ग्रुप की स्थापना की गयी। इसमें केन्द्रीय जल आयोग, भारतीय माप विभाग, मौसम विभाग आदि को सम्मिलित किया गया। चक्रवात से बचाव के लिए पूर्व चेतावनी के प्रसारण की व्यवस्था, चक्रवात शरण-स्थली (Cyclone Shelter) का निर्माण, तटीय किनारे पर वृक्षारोपण आदि उपाय अपनाये गये। चक्रवात शरण-स्थली (Cyclone Shelter) में 3000 से 5000 व्यक्तियों के ठहरने की समुचित व्यवस्था होनी चाहिये और इसमें पर्याप्त मात्रा में शौचालयों की भी व्यवस्था होनी चाहिए। जब यह शरण-स्थली खुली रहे तो इसका प्रयोग स्कूल एवं आँगनबाड़ी आदि के लिए किया जाना चाहिए। सभी समुदाय को आपदा शमन एवं रोकथाम के लिए जागरूक बनाने हेतु उन्हें कई प्रकार के प्रशिक्षण दिये जाते हैं जैसे—कृत्रिम श्वसन, प्राथमिक चिकित्सा, जल्दी से मकान छोड़कर बाहर आना, पूर्वाभ्यास (Mock Drills) आदि। सरकारी स्कूलों मे कक्षा आठ के सामाजिक विषय में आपदा प्रबन्धन को सम्मिलित किया गया है। CBSE बोर्ड के कक्षा IX एवं X के पाठ्यक्रम में तथा प्राविधिक शिक्षा परिषद के सभी डिप्लोमा पाठ्यक्रमों में इसे सम्मिलित किया गया है।

विधिक नीतिगत ढाँचा (Legal Policy Framework)

संविधान विधेयक की सातवीं अनुसूची की तीसरी सूची में आपदा प्रबन्धन को सम्मिलित किया गया है। आपदा प्रबन्धन की राष्ट्रीय नीति निम्नवत् है—

(i) सुरक्षित निर्माण हेतु शासनादेश जारी करना।
(ii) विकासशील क्रिया-कलापों एवं योजनाओं में आपदा प्रबन्धन को सम्मिलित करना।
(iii) आपदा प्रबन्धन से सम्बन्धित सभी विभागों का मिलकर कार्य करना।

राज्य सरकार आपदा प्रबन्धन पर निम्न घोषणायें जारी करती है—

(i) सुरक्षित निर्माण हेतु शासनादेश जारी करना।
(ii) विकासशील प्रक्रियाओं एवं योजनाओं की मुख्य धारा में आपदा प्रबन्धन को सम्मिलित करना।
(iii) सभी सम्बन्धित विभागों द्वारा मिलकर आपदा प्रबन्धन में सहयोग देना।
(iv) आपातकालीन सहायता दल/आपदा प्रबन्धन दल/राज्य आपदा प्रबन्धन अधिकारी वर्ग का गठन करना।
(v) वर्तमान राहत कोड, अभाव सम्बन्धी कोड एवं अकाल सम्बन्धी कोड का समय-समय पर संशोधन करना।
(vi) संसाधनों एवं योजनाओं की प्रविष्टियों को संशोधित करके विज्ञप्ति जारी करना।

पूर्व चेतावनी प्रणाली (Early Warning Systems)

किसी भी प्राकृतिक आपदा की सूचना यदि घटने से पूर्व हो जाये तो बहुत से लोगों को मौत के मुँह में जाने से बचाया जा सकता है। इसके लिए पूर्व चेतावनी युक्तियों/उपायों की खोज आवश्यक हो जाती है। अलग-अलग आपदाओं के लिए अलग-अलग चेतावनी युक्तियाँ अपनायी जाती हैं। तटीय चक्रवात में तेज हवायें चलती हैं। भारी वर्षा होती है, तेज समुद्री लहरें आती हैं और तटीय क्षेत्र जलमग्न हो जाता है। भारतीय माप विभाग की यह जिम्मेदारी होती है कि वह चक्रवात की तीव्रता का आकलन करके चेतावनी प्रसारित करे। रिमोट सेन्सिंग तकनीकी (Remote Sensing Techniques) की खोज से चक्रवात की मॉनीटरिंग में क्रान्ति आ गयी है। उपग्रह से प्राप्त चित्रों के अध्ययन से तूफानी तरंगों की भविष्यवाणी सम्भव हो सकी है। पुराने उपलब्ध आँकड़े भी पूर्व चेतावनी में सहायक होते हैं। डॉप्लर राडार विण्ड प्रोफाइलर (Doplar Radars Wind Profiler) हर घंटे पर ध्वनि प्रसारित करता है, जिससे हवा के प्रचण्ड वेग का अनुमान लगाया जा सकता है। चक्रवात सूचक राडार (Cyclone Detecting Radars) कई स्थानों पर स्थापित किये जा चुके हैं। ये राडार 300–400 किमी० की परिधि में तूफान के केन्द्र की जानकारी दे देते हैं। वैसे आजकल जेट एअरक्राफ्ट में डाटा रिले सिस्टम लगे रहते हैं। इनसे प्राप्त आँकड़ों से भारतीय माप विभाग (IMD) मॉनीटरिंग में सहायता मिलती है। इसके अतिरिक्त इन्सैट डाटा (INSAT DATA), क्लाउड मोशन वेक्टर (Cloud Motion Vector) एवं वेरी हाई रिजोल्यूशन रेडियो मीटर का भी प्रयोग पूर्व चेतावनी प्रसारित करने में किया जाता है। इस तरह के चेतावनी केन्द्र विशाखापट्नम, भुवनेश्वर एवं अहमदाबाद में स्थापित किये गये हैं।

सबसे पहले बाढ़ चेतावनी 1958 में केन्द्रीय जल कमीशन द्वारा जारी की गयी। इस समय देश की सभी नदियों पर स्थापित बाढ़ चेतावनी केन्द्रों की कुल संख्या 166 है। बाढ़ चेतावनी कार्य निम्न चरणों में किया जाता है—

1. चेतावनी का प्रसारण करना।
2. चेतावनी प्रसारण केन्द्र पर उक्त आँकड़ों को भेजना।
3. आँकड़ों का विश्लेषण करना एवं चेतावनी तैयार करना।
4. जलीय एवं जलीय माप सम्बन्धी आँकड़े एकत्र करना एवं निरीक्षण करना।

आज इस समय औसतन 6000 बाढ़ चेतावनियाँ प्रत्येक वर्ष प्रसारित की जा रही हैं।

सुनामी की पूर्व सूचना देने वाले यन्त्र को सुनामी चेतावनी यन्त्र (T-Sunami Warning System) अथवा सुनामीटर (T-Sunameter) कहते हैं। यह उपकरण समुद्र में तैरने वाला होता है और समुद्र में रहकर सुनामी के सम्बन्ध में सूचना एकत्र करता है। प्रशान्त सुनामी सतर्कता प्रणाली उपग्रह एवं टेलीफोन के माध्यम से 100 जल स्तरीय निगरानी केन्द्रों से जुड़ी हुई है। ये सुनामीटर DART गेज (Deep Ocean Assessment and Reporting of T-Sunami) के नाम से भी जाने जाते हैं। हमारी भारत सरकार ने भी सुनामी मापक यन्त्र हिन्द महासागर में स्थापित करने का फैसला ले लिया है।

किसी भी तरह की आपदा या भूकम्प की पूर्व सूचना प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है। यह एक आकस्मिक घटना है। इसके अलावा भूस्खलन भी एक आकस्मिक घटना है। अन्य आपदायें जैसे—व्यापक रोग (Epidemic), सूखा आदि धीरे-धीरे घटने वाली विपत्तियाँ है, इनकी सूचना काफी पहले से मिल जाती है, जिसे रेडियो एवं दूरदर्शन के माध्यम से प्रसारित करके समुदाय को सचेत कर दिया जाता है।

Scanned by CamScanner

मानव संसाधन विकास (Human Resource Development)

प्राकृतिक आपदा एवं संकट का सामना करने के लिए योग्य एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों एवं संसाधनों की आवश्यकता होती है। इसलिए सक्षम व्यक्तियों को तैयार करने के लिए निम्न प्रयास किये जाते हैं—

(i) प्रशिक्षकों को विशेषज्ञों द्वारा प्रशिक्षण प्रदान करना।
(ii) आपदा प्रबन्धन के राष्ट्रीय संस्थान को सुदृढ़ बनाना।
(iii) गृह मंत्रालय एवं राज्य सरकार के लिए संक्षिप्त पाठ्यक्रम तैयार करना।
(iv) प्रशिक्षण की आवश्यकता का विश्लेषण एवं मानव संसाधन विकास योजनायें तैयार करना।
(v) NCC, NSS, स्काउट एवं गाइड के प्रशिक्षण कार्यक्रम में लोगों की तलाश एवं सहायता (Search and Rescue) के बारे में जानकारी उपलब्ध कराना।
(vi) IAS/PCS, राज्य के प्रशासनिक अधिकारियों एवं पुलिस अधिकारियों को प्रशिक्षण प्रदान करना।
(vii) अभियन्ताओं, आर्किटेक्ट्स, राजगीरों, ग्रामीणों एवं ब्लॉक स्तर के स्टाफ को प्रशिक्षण प्रदान करना।
(viii) आकस्मिक उपचार प्रबन्ध (Trauma Management) को MBBS के पाठ्यक्रम में सम्मिलित करना।
(ix) संचार नीति के विकास के लिए दृश्य, श्रव्य एवं छपाई (Audio, Visual and Print) माध्यम का प्रयोग जागरूकता अभियान हेतु करना।

सूचना प्रसार एवं संचार (Information Dissemination and Communication)

राष्ट्रीय एवं राज्य के आपातकालीन संचालन केन्द्रों (Emergency Operation Centres) (ECO) तथा आपदा के स्थल के बीच संचार प्रणाली DOT प्रणाली पर निर्भर है। यह निर्णय लिया गया है कि DOT प्रणाली के स्थान पर मल्टी मोड एवं मल्टी चैनल संचार पद्धति का प्रयोग बढ़ाया जाए। आपदा प्रबन्धन हेतु POLNET का भी प्रयोग किया जाये, अत: POLNET संचार सुविधा का विस्तार उप जिलाधिकारी (SDM), जिलाधीश (Collectors) एवं EOC's के मध्य बढ़ाया जाये। आपात-कालीन संचार व्यवस्था हेतु अंतरिक्ष विभाग (ISRO) की सहायता ली गयी है जो राष्ट्रीय/राज्य के ECO, सचल ECO (Mobile ECO) एवं संकट के स्थल को जोड़ने के लिए एक उपग्रह संचार इकाई (Satellite Communication Unit) उपलब्ध करा रहा है। यह प्रणाली मार्च 2006 से कार्य कर रही है। इस समय आकस्मिक संचार व्यवस्था हेतु DOT, POLNET, NIC, NET, ISDN एवं SPACENET प्रणालियों का भी प्रयोग किया जा रहा है।

आपदाओं के दौरान टेली संचार प्रणाली के असफल या बाधित हो जाने के कारण (Reasons for the Failure of Telly Communication System During Disasters)

जब भी आपदा आती है तो उस दौरान टेली संचार व्यवस्था (टेलीफोन, मोबाइल फोन सेवाएं इत्यादि) ठप हो जाती है और सुचारू रूप से कार्य नहीं करतीं, क्योंकि ये आपदाओं के कारण या तो क्षतिग्रस्त हो जाती हैं या फिर अवरुद्ध हो जाती हैं। आपदाओं के समय टेली संचार व्यवस्था के क्षतिग्रस्त हो जाने के प्रमुख कारण निम्नांकित हैं—

(i) बिजली के तार/केबिलों के टूट जाने से बिजली की आपूर्ति व्यवस्था ठप हो जाती है या रुक जाती है। टेलीफोन केन्द्रो, सेलूलर पारेषण टावरों को बिजली, जनरेटर अथवा बैटरी से चलाया जाता है। बिजली के बिना ये सभी कार्य नहीं कर पाते।
(ii) केबिलों का क्षतिग्रस्त हो जाना।
(iii) सेलूलर पारेषण टावरों का क्षतिग्रस्त हो जाना।

उपरोक्त सभी कारणों की वजह से टेली संचार व्यवस्था के क्षतिग्रस्त हो जाने पर पुलिस एवं सिविल अधिकारियों की संचार व्यवस्था बाधित होने के उनके कार्य पर आपदाओं का सर्वाधिक कुप्रभाव दृष्टिगोचर होता है। ऐसी विषम स्थिति में जब सामान्य संचार नेटवर्क सुचारू रूप से काम नहीं कर रहा हो तो उस समय वैकल्पिक संचार प्रणाली की आवश्यकता अपरिहार्य

हो जाती है। वैकल्पिक संचार प्रणाली द्वारा यह बात सुनिश्चित हो जाती है कि अभीष्ट राहत सामग्री जरूरतमन्द व्यक्ति को मिल सके।

आपातकालीन संचार या सम्प्रेषण के साधन (Modes for Emergency Communications)

आपातकालीन संचार के साधनों के अन्तर्गत मुख्यत: निम्नांकित साधनो को सम्मिलित किया जाता है—

रेडियो संचार (Radio Communications)—आपदा के कारण जिन क्षेत्रो में संचार व्यवस्था सुचारू रूप से काम नहीं कर रही हो या संचार व्यवस्था बिल्कुल ठप हो गई हो तो वहाँ हमें ऐसी संचार व्यवस्था की जरूरत होती है, जिससे सरकार के माध्यम से विभिन्न बचाव व राहत संस्थाओं तथा आपदाग्रस्त लोगों के बीच सम्पर्क स्थापित हो सके या अभीष्ट संचार सम्प्रेषित किया जा सके। ऐसी स्थिति में सबसे सुगम व विश्वसनीय संचार साधन सिर्फ एक ही रह जाता है और वह है रेडियो संचार व्यवस्था जिसे अपनाना अपरिहार्य हो जाता है।

रेडियो संचार व्यवस्था की प्रमुख विशेषताएँ निम्नांकित हैं—

(i) रेडियो तरंगे (Radio Waves) विविध आवृत्तियाँ (Frequencies) होती है। रेडियो प्रापक (Radio Receiver) को किसी विशिष्ट आवृत्ति (Specific Frequencies) पर सैट करके एक विशिष्ट संकेत (Signal) लिया जाता है। रेडियो आवृत्ति स्पैक्ट्रम (Radio Frequency Spectrum) का आरेख दर्शाया गया है। इसमें अलग आवृत्ति बैण्ड दर्शाये गये है जिसमे अत्यधिक निम्न आवृत्ति [Very Low Frequency (VLF)], निम्न आवृत्ति [Low Frequency (LF)], मध्य आवृत्ति [Medium Frequency (MF)}, उच्च आवृत्ति [High Frequency (HF)], बहुत उच्च आवृत्ति [Very High Frequency (VHF)], अत्यधिक उच्च आवृत्ति [Super High Frequency (SHF)], अति उच्च आवृत्ति [Super Very High Frequency (SHF)] तथा अतिरिक्त उच्च आवृत्ति [Extra High Frequency (UHF)] वाली तरंगें होती हैं।
(ii) रेडियो तरंग एक वैद्युत चुम्बकीय तरंग (Electro Magnetic Wave) होती है, जिसे एक एन्टीना की सहायता से प्रसारित किया जा सकता है।
(iii) रेडियो तरंगें सदैव सीधी रेखा मे गमन करती हैं, जबकि हमारी पृथ्वी गोल (Spherical) है, ऐसे स्थानों या व्यक्तियो को जिन्हे हम देख नहीं पाते, उनसे संचार किस प्रकार प्राप्त किया जाता है, यह जानकारी होना भी स्वाभाविक है। इस बात को समझने के लिए निम्नांकित तथ्यों को ध्यान से पढ़ना होगा—
  (a) उच्च आवृत्ति वाले बैण्ड मे किसी भी आवृत्ति की तरंगें पूरी दुनिया में गमन कर सकती हैं। यह इसलिए सम्भव होता है कि आयन मण्डल से रेडियो तरंगें धरातल पर परावर्तित (Reflect) कर दी जाती हैं।
  (b) यही कारण है कि लम्बी दूरी के लिए उच्च आवृत्ति बैण्ड (High Frequency Band) को प्रयोग में लाया जाता है।
  (c) ज्यादा उच्च आवृत्ति बैण्ड (Very High Frequency Band) वाले रेडियो सैट का उपयोग कम दूरी (लगभग 5 किमी० से 50 किमी० तक) के संचार के लिए किया जाता है।
  (d) अत्यधिक उच्च आवृत्ति बैण्ड (Ultra High Frequency Band) का उपयोग अपेक्षाकृत और भी कम दूरी के संचार के लिए किया जाता है। चूँकि अत्यधिक उच्च आवृत्ति (UHF) तरंगों से प्रसारित संकेत भवनों से टकराकर दुबारा वापस आ जाते हैं, इसलिए अत्यधिक उच्च आवृत्ति बैण्ड का प्रयोग अपेक्षाकृत कम दूरी से संचार के लिए ही उपयुक्त है। इस तरह के बैण्ड का प्रयोग प्राय: हस्त-चालित बेतार के तार यन्त्रों (Hand-Held Wireless Sets) में किया जाता है।
  (e) यही कारण है कि इन हस्त चालित सैटों का प्रयोग विशेषकर स्थानीय संचार के लिए किया जाता है। ज्यादा लम्बी दूरी के संचार हेतु इन सैटों का प्रयोग कम सफल रहता है।

Scanned by CamScanner

एमेच्योर (हेम) रेडियो (AMATEUR (HAM) RADIO)

एमेच्योर (हेम) रेडियो को हेम रेडियो (HAM RADIO) भी कहते हैं। यह रेडियो साधारण रेडियो जैसा नहीं है, बल्कि यह कुछ नियमों (Rule) से बँधा रेडियो है। इस रेडियो में कुछ विशेष आवृत्ति का प्रयोग किया जाता है जिन्हें अन्तर्राष्ट्रीय टेली सम्प्रेषण यूनियन [International Tele Communication Union (ITU)] द्वारा परिभाषित भी किया गया है। इस रेडियो को संचार मन्त्रालय के बेतार योजना तथा समायोजन डैना (Wireless Planning and Coordination Wing) द्वारा नियन्त्रित किया जाता है। कानूनन इसका प्रयोग शिक्षा, अनुसंधान अथवा व्यक्तिगत उपयोग में किया जाता है। क्योंकि एमेच्योर शब्द का प्रयोग केवल गैर-वाणिज्यिक तथा गैर-व्यावसायिक कार्यों तक ही सीमित होता है। उड़ीसा के 1999 के महाचक्रवात (Super Cyclone) तथा गुजरात के 2001 के भूकम्प (Earthquake) के दौरान इन एमेच्योर (हेम) रेडियो ने अहम् भूमिका निभाई थी। अत्यधिक आपदा/ आपातकालीन घटना के समय यही संचार का अधिक प्रभावशाली साधन है। यह उस समय कारगर रहता है, जिस समय संचार के कई अन्य साधन कार्य नहीं करते। यह संचार का एक ऐसा साधन है, जिसमें धरातली इन्फ्रास्ट्रक्चर की जरूरत नहीं पड़ती तथा इसे संचालित रखने हेतु अपेक्षाकृत कम ऊर्जा (Power) की आवश्यकता होती है, जो कि बैटरी या जनरेटर से प्राप्त की जा सकती है। अब भारत में एमेच्योर (हेम) रेडियो एक सृजनात्मक हॉबी (Hobby) के रूप में बहुत ही लोकप्रिय हो रहा है। इस तरह के हेम रेडियो प्रचालक (Operators) जो सरकार से लाइसेंस शुदा हैं, एमेच्योर (Hams) के नाम से जाने जाते हैं। अधिकांश सरकारें भी आपातकालीन आपदाओं में संचार कार्य सम्भालने हेतु इन्हीं एमेच्योर (Hams) की सेवाओं की अपेक्षा रखती हैं। भारत में वर्तमान में लगभग 1500 एमेच्योर रेडियो प्रचालक (Amateur Radio Operators or Hams) उपलब्ध हैं। रेडियो सम्प्रेषण (Radio Communication) सीखने का सबसे आसान साधन है। इस रेडियो के प्रयोग को सीखने से आपातकालीन आपदा का मुकाबला करने का एक सशक्त आधार प्राप्त होता है।

अन्तरिक्ष प्रौद्योगिकी के विकासशील युग में इन एमेच्योर (Hams) ने सेटेलाइटों का प्रयोग संचार में प्रारम्भ कर दिया है जिसके जरिये ये महत्वपूर्ण आँकड़े इमेजेज (Images) और आवाजें व ध्वनियाँ भेजने में सफल हो गये हैं। एमेच्योर रेडियो सेटेलाइट द्वारा संचार तभी प्राप्त कर पाते हैं, जबकि ये सेटेलाइट सिर पर स्थित हों।

भारत सरकार के सूचना प्रौद्योगिकी विभाग ने इस एमेच्योर रेडियो व्यवस्था को ज्यादा लोकप्रिय बनाने तथा प्रशिक्षित एमेच्योरों (Trained Hams) की संख्या में वृद्धि करने हेतु निम्नांकित ठोस कदम उठाये हैं—

(i) एमेच्योर रेडियो प्रचालकों को प्रशिक्षण प्रदान करने की भी व्यवस्था की जा रही है।

(ii) पूरे देश में जगह-जगह एमेच्योर (हेम) रेडियो स्टेशनों की स्थापना की गई है।

(iii) HAMSAT नामक सूक्ष्म तरंगों वाले सेटेलाइट को भारतीय अन्तरिक्ष अनुसंधान संगठन (Indian Space Research Organisation) द्वारा विकसित किया गया है, जिसकी सहायता से सेटेलाइट आधारित रेडियो एमेच्योर सूचनाएँ भारतीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय HAMS समुदायों को सम्प्रेषित की जाती हैं। भारत में एमेच्योरों (Hams) द्वारा सुनामी नामक आपदा से ग्रसित व्यक्तियों के परिवारों की सेवा करने का जीवन्त उदाहरण दिल्ली में बैठा एक लाइसेंसधारी संदीस बरूआ नामक एमेच्योर सर्वविदित है, जो दिन में तो सरकारी नौकरी करता है और रात में हॉबी के रूप में रेडियो संदेश भेजने का कार्य करता है। इसने 26 दिसम्बर, 2004 को पोर्ट ब्लेयर के साथ सम्पर्क किया। इसने सुनामी के कहर में फँसे व्यक्तियों तथा उनके परिवार-जनों के बीच सम्पर्क सूत्र का कार्य किया और संचार द्वारा उन्हें सूचनाएँ भेजीं। नि:सन्देह दिल्ली में बैठे इस एमेच्योर ने ऐसा सराहनीय कार्य किया, जिसमें हमारी सरकारी संस्थायें सर्वथा नाकाम रही हैं।

सेटेलाइट पर आधारित संचार पद्धतियाँ (Satellite Based Communication Systems)

सेटेलाइट पर आधारित संचार पद्धतियों के अन्तर्गत संचार प्रणाली के यन्त्र तो धरातल पर स्थित होते हैं, जबकि संचार प्रसारण के उपक्रम अन्तरिक्ष में स्थित सेटेलाइट में होते हैं। विभिन्न प्रकार के सेटेलाइट होते हैं जो कि कई प्रकार के कार्यों को सम्पादित करते हैं जैसे किसी वस्तु की स्थिति को अवगत कराने वाला सेटेलाइट, मौसम की सम्भावित तस्वीरें भेजने वाला सेटेलाइट। वस्तुत: संचार सेटेलाइट अन्तरिक्ष में स्थित संचार प्रसारण स्टेशन होता है, जिसे साधारणत: कोमसेट्स (Comsets) या सेटकोम्स (SATCOMS) है जिसे संचार सेटेलाइट या

संचार उपग्रह के नाम से जाना जाता है। इसी तरह सेटेलाइट फोन हेतु सेट फोन (SAT PHONE) नामक संचार सेटेलाइट प्रयोग में लाया जाता है। संचार पद्धतियों में सबसे ज्यादा लोकप्रिय संचार व्यवस्था सेटेलाइट फोन है, जिसके द्वारा सुगमतापूर्वक एवं द्रुतगति से आपदा प्रबन्धन का कार्य किया जा सकता है। इस प्रकार के सेटेलाइटों में मुख्यत: दो प्रकार के सेटेलाइट प्रयोग में लाये जाते हैं—

1. IN MARSAT फोन के लिए पृथ्वी की गति के अनुरूप घूमने वाले Geo Synchronous Satellite (GSS) नामक सेटेलाइट।
2. IRIDIUM तथा THURAYA नामक फोन के लिए निम्न पृथ्वी कक्षा सेटेलाइट (Low Earth Orbit Satellite) का प्रयोग किया जाता है। इन सेटेलाइट फोनों में सबसे बड़ा गुण यह है कि इन सेटेलाइट फोनों को सरलतापूर्वक एक स्थान से दूसरे स्थान पर लाया व ले जाया जा सकता है और साथ ही इन फोनों से भरोसेमन्द सूचनाएँ मिलती हैं, जिनके द्वारा सारी दुनिया मे संचार सम्पर्क स्थापित किये जा सकते हैं लेकिन इन सब के लिए एक एन्टीना की व्यवस्था करनी होती है। आज भारत की आन्तरित संचार व्यवस्था में Indian National Satellite (INSAT) का प्रयोग टेलीविजन प्रोग्राम, टेलीसंचार, मौसम विज्ञान सम्बन्धी सूचनाएँ तथा आपदाओं की पूर्व चेतावनी के लिए किया जाता है तथा Indian Remote Sensing Satellite (IRS) का उपयोग प्राकृतिक संसाधनों का पता लगाने तथा उनके प्रबन्धन में किया जाता है। सेटेलाइट फोन की प्रमुख विशेषता यह भी है कि एक सेटेलाइट में लाखों ट्रॉंसपोंडर्स होते हैं, जिनके द्वारा विविध आँकड़े, टेलीविजन प्रोग्राम एवं सब कुछ टेलीफोन संचार सामान्य रूप से संचरित किये जाते हैं। इस सेटेलाइट में प्रत्येक ट्रॉंसपोंडर एक ऐसा रेडियो है, जो एक आवृत्ति (Frequency) पर वार्तालाप प्राप्त करता है और इसके बाद इसे विस्तृत (Amplify) करके दूसरी आवृत्ति (Frequency) के द्वारा पृथ्वी पर पुन: वापस भेजने की सामर्थ्य रखता है।

भारत सरकार द्वारा किये गये प्रयास (Efforts Made by Govt. of India)

भारत सरकार द्वारा आपदा प्रबन्धन में संलग्न प्रबन्धकों को सेटेलाइट फोन की सुविधा प्रदान की जा रही है। यह ज्यादातर उन क्षेत्रों में है जो कि सामान्यत: आपदाग्रस्त क्षेत्र घोषित किये गये हैं। इस तरह के फोन मोबाइल फोनों की भाँति एक स्थान से दूसरे स्थान तक आसानी से लाये व ले जाये जा सकते हैं। आपदा के समय जब सामान्य संचार लाइनें बन्द या असफल हो जायें तो उस समय प्रशासन के साथ इस संचार प्रणाली को स्थापित रखा जा सकता है। भारत सरकार द्वारा इस दिशा में निम्नांकित सार्थक प्रयास किये गये हैं—

1. पृथ्वी गति के अनुरूप घूमने वाले सेटेलाइट [Geo Synchronous Satellite (GSS)]—ये सेटेलाइट विषुवत वृत्त के एकदम ऊपर लगभग 36000 किमी० की ऊँचाई पर स्थापित किये जाते हैं। इन्हें उसी स्थान पर स्थिर रखा जाता है, जिस स्थान पर इन्हें स्थापित किया गया हो। क्योंकि पृथ्वी की गति और सेटेलाइट की गति एक समान रखी जाती है, इसलिए इन्हें Geo Stationary Satellite कहा जाता है। हमें मौसम से सम्बन्धित सूचनाएँ संकेतों के रूप में मौसम सेटेलाइट से उपलब्ध हो जाती हैं।

2. निम्न पृथ्वी कक्षा सेटेलाइट (A Synchronous Orbit Satellite)—मुख्यत: ये सेटेलाइट निम्नांकित प्रकार के होते हैं, जिन्हें पृथ्वी की निम्न कक्षा (Low Earth Orbit) में स्थापित किया जाता है। इस तरह के सेटेलाइट पृथ्वी के सन्दर्भ में लगातार अपनी स्थिति बदलते रहते हैं—

(I) ग्लोबल पोजीशनिंग पद्धति सेटेलाइट (Global Positioning System Satellite)—ऐसे सेटेलाइट का प्रयोग अक्षांश वृत्तों और देशान्तर रेखाओं के सन्दर्भ में किसी स्थान की भौगोलिक स्थिति की जानकारी में किया जाता है तथा ये सेटेलाइट 9600 किमी० से 19200 किमी० तक की ऊँचाई पर स्थापित किये जाते हैं। Global Mobile Personal Communication Systems (GMPCS) का उपयोग पृथ्वी की निचली कक्षा में संकेत एकत्रित करने हेतु किया जाता है। ये अपेक्षाकृत अधिक विश्वसनीय होते हैं और इनका प्रयोग अनेक कार्यों में होता है। इनसे सम्बन्धित फोन यन्त्रों को सुगमता से एक स्थान से दूसरे स्थान तक लाया व ले जाया जा सकता है। जैसा कि हम पहले भी बता चुके हैं।

(ii) विज्ञान सेटेलाइट (Science Satellite)—ऐसे सेटेलाइट 4800 किमी० से 9700 किमी० तक की ऊँचाई पर

Scanned by CamScanner

(iii) **पर्यवेक्षणीय सेटेलाइट (Observational Satellite)**—ऐसे सेटेलाइट पृथ्वी की कक्षा में 480 किमी० से 970 किमी० तक की ऊँचाई पर स्थापित किये जाते हैं। आपातकालीन सूचनाओं का प्रसारण इनके द्वारा सुगमता से किया जाता है, जो कि सर्वाधिक लाभदायक सिद्ध होता है। नीचे गिरते हुए हवाई जहाजों तथा पानी में डूबते हुए जलयानों से सम्बन्धित सूचनाएं भी इन्हीं सेटेलाइट फोनों द्वारा दी जाती हैं। प्राय: इनको फोटोग्राफी करने तथा खोज व बचाव सेटेलाइट के रूप में काम में लाया जाता है। चित्र में सेटेलाइट पर आधारित संचार पद्धति को दर्शाया गया है।

5. आपदा को तैयार अग्र चेतावनी में रेडियो तथा टेलीविजन की भूमिका (Role of Radio and Television for Disaster Preparedness and Early Warning)—प्रसार भारती (Prasar Bharti) भारत सरकार का अत्यन्त महत्वपूर्ण उपक्रम है। इसके 12 डिजिटल बाहरी ब्रोडकास्टिंग चैनल (Digital Outdoor Broadcasting Channels) है, जो कि INSAT नेटवर्क द्वारा संचालित होते हैं। इन चैनलो द्वारा ज्यादा से ज्यादा महत्वपूर्ण घटनाओ को कवर किया जाता है तथा सम्प्रेषित संचार दिल्ली स्थित स्टेशन पर प्राप्त होता है, फिर दोबारा इनको ब्रोड-कास्ट तथा टेलीकास्ट किया जाता है। INSAT पद्धति ज्वलन्त सूचनाएँ प्राप्त करने में अहम् भूमिका निभाती है। प्रेस ट्रस्ट ऑफ इण्डिया [Press Trust of India (PTI)] एक ऐसी प्रणाली का क्रियान्वयन है जिससे बहुत ही तेजगति से सूचना और संचार उपलब्ध होता है। यह कार्य INSAT-3C Satellite द्वारा ही सम्भव हुआ है। प्रेस ट्रस्ट ऑफ इण्डिया के सेटेलाइट के जरिये से समाचार तथा फैक्स सुविधा भी सुलभ होती है। इसके कुल 15 टर्मिनल हैं, जिनमें एक ऑल इण्डिया रेडियो का टर्मिनल है तथा 14 DTI के हैं। ये सभी टर्मिनल यही कार्य सम्पादित कर रहे हैं।

6. बेतार का तार सेट (Wireless Sets)—यह ऐसी मशीन है, जिसके माध्यम से सन्देश ध्वनि/आवाज के रूप में सम्प्रेषित किये जा सकते हैं। रेडियो की तरंगों द्वारा यह कार्य सम्पूर्ण विश्व में किया जा सकता है। रेडियो तरंगों द्वारा सन्देश सम्प्रेषित किये जाने के कारण आपदाओं का इन पर कोई कुप्रभाव परिलक्षित नहीं होता। यह मशीन तब तक समाचार सम्प्रेषित करती रहती है जब तक इसे कोई क्षतिग्रस्त नहीं कर देता। रेडियो तरंगों द्वारा सन्देश अन्तरिक्ष के माध्यम से भेजे जाते हैं यह पद्धति संचार सम्प्रेषण का एक सस्ता साधन है।

7. टेलीफोन (Telephone)—यह एक ऐसा इलैक्ट्रॉनिक यन्त्र है, जिसकी सहायता से सन्देश दूरस्थ स्थानों को भेजे जाते हैं। इसमें सन्देश देने वाला एक व्यक्ति तथा सन्देश ग्रहण करने वाला दूसरा व्यक्ति होता है। अर्थात् सन्देश (message) देने व लेने में दो व्यक्तियों की आवश्यकता पड़ती है।

आजकल दो प्रकार के टेलीफोन प्रयोग में लाये जा रहे हैं, जो निम्नवत् है—

(i) **लैण्ड लाइन टेलीफोन (Land Line Telephone)**—यह टेलीफोन केबिलों की सहायता से कार्य करता है। प्रत्येक शहर में टेलीफोन एक्सचेन्ज बने हुए हैं, जो इन टेलीफोनों को नियन्त्रित करते है।

(ii) **मोबाइल (सेलूलर) फोन (Mobile Cellular Phone)**—यह एक ऐसा फोन है जो Remote Sensing द्वारा सन्देशों को सम्प्रेषित करता है। प्राकृतिक आपदाओं के दौरान ये फोन अधिक कारगर सिद्ध होते हैं और यदि इनका पारेषण दुरुस्त हो तथा क्षतिग्रस्त न हो तो इनके द्वारा सम्प्रेषण जारी रहता है। इन्हें बहुत ही आसानी से कहीं भी लाया व ले जाया जा सकता है।

8. कम्प्यूटर (Computer)—इन कम्प्यूटरों का प्रयोग अत्यन्त व्यापक एवं बहुआयामी है। इसके कार्यों को मुख्यत: निम्नांकित वर्गों मे वर्गीकृत किया जा सकता है—

(i) कम्प्यूटर आँकड़ों का प्रक्रमण (Processing) करते हैं और अभीष्ट परिणाम पर पहुँचते हैं।

(ii) संख्यात्मक सूचनाएँ इनके द्वारा आगम (Input) के रूप में स्वीकार की जाती हैं।

(iii) कम्प्यूटरों में आँकड़ों (संख्यात्मक सूचना) को संग्रहीत (Store) किया जाता है तथा संग्रहीत आँकड़ों को यादगार (Memory) मे रखा जाता है। जब भी आवश्यकता होती है, तभी इनको देखा जा सकता है।

(iv) कम्प्यूटर उत्पाद (Output) के रूप में सूचनाएँ प्रदान करते हैं।

9. फैक्स (Fax)—यह एक ऐसी मशीन है, जिसे टेलीफोन से जोड़ा जाता है तथा यह मशीन सन्देश सम्प्रेषण के लिए प्रयोग में लायी जाती है। निम्नांकित प्रक्रिया द्वारा फैक्स (Fax) में संदेश सम्प्रेषित किये जाते हैं—

(i) सबसे पहले भेजे जाने वाले सन्देश को टाइप द्वारा या कम्प्यूटर द्वारा प्रिन्ट करके अथवा हाथ से लिखा जाता है।

(ii) इनके बाद फैक्स मशीन को ऑन करके अभीष्ट फोन नं० मिलाया जाता है, जहाँ सन्देश सम्प्रेषित किया जाना हो। इनी फोन नम्बर को फैक्स नम्बर कहा जाता है।

(iii) फिर तत्पश्चात् फैक्स मशीन में सन्देश पेपर लगा दिया जाता है।

(iv) इस सन्देश की ज्यों की त्यों (Same) प्रति सन्देश प्राप्तकर्ता की मशीन पर छप जाती है।

(v) फिर इस सन्देश पेपर को फैक्स मशीन से बाहर निकाल लिया जाता है तथा सूचना प्राप्तकर्ता को इस फैक्स सन्देश को दे दिया जाता है।

(vi) इस तरह फैक्स द्वारा घटनाओं व प्राकृतिक आपदाओं के बारे में तुरन्त जानकारी प्राप्त हो जाती है।

इस प्रकार इन सब प्रक्रिया से फैक्स द्वारा लिखा हुआ या टाइप किया हुआ सन्देश सेकण्डों में दूरस्थ स्थानों पर भेजा जा सकता है। जब भी आपदायें आयें तो उस दौरान सूचनाओं तथा सन्देशों को कहीं भी तुरन्त सम्प्रेषित किया जा सकता है। फैक्स सन्देश बहुत जल्दी पहुँचने से बचाव एवं राहत कार्यों को जल्दी-जल्दी से प्रारम्भ किया जा सकता है। ऐसा करने से जान-माल की हानि होने से बचायी जा सकती है। इस तरह सूचना मिलते ही आपदा से हताहत व्यक्तियों को सुरक्षित स्थान पर पहुँचाया जा सकता है। घायल व्यक्तियों को प्राथमिक उपचार दिया जा सकता है। लोगों को उनके आश्रय स्थल पर आसानी से और जल्दी पहुँचाया जा सकता है। इसी तरह मृत लोगों को अन्तिम संस्कार के लिए यथेष्ट स्थल तक ले जाया जा सकता है। इससे संक्रामक रोगों को फैलने से बचाया जा सकता है। समाचार फैक्स द्वारा प्राप्त होते ही सम्बन्धित व्यक्ति से सम्पर्क करना बहुत ही आसान हो जाता है।

मुम्बई 26/11 में किये गये हमले की केसस्टडी

2008 के मुम्बई हमले नवम्बर 2008 में हुए आतंकवादी हमले के एक समूह थे, जब पाकिस्तान में स्थित एक इस्लामी आतंकवादी संगठन लश्कर-ए-तैयबा के मुंबई में 10 सदस्य ने मुम्बई में चार दिन तक चलने वाली 12 समन्वय शूटिंग और बम विस्फोट की एक शृंखला को अजाम दिया हमले जिनकी व्यापक रूप से वैश्विक निंदा की गई बुधवार, 26 नवंबर को शुरू हुए ओर शनिवर, 29 नवम्बर 2008 तक चले, 164 लोगों की मौत हो गई और कम से कम 308 घायल हो गए।

छतपति शिवाजी टर्मिनस, ओबेरॉय ट्राइडेंट, ताज पैलेस एंड टॉवर, लियोपोल्ड कैफे, कामा अस्पताल, नरीमन हाउस यहूदी समुदाय केन्द्र, मेट्रो सिनेमा और टाइम्स ऑफ इंडिया बिल्डिंग और सेंट जेवियर कॉलेज के पीछे एक लेन में आठ हमले हुए। मुम्बई के बन्दरगाह क्षेत्र में माजगाव में और विले पार्ले में एक टैक्सी में एक विस्फोट हुआ था। 28 नवम्बर की सुबह तक, ताज होटल को छोड़कर सभी साइटों को मुम्बई पुलिस विभाग और सुरक्षा बलों द्वारा सुरक्षित किया गया था। 29 नवम्बर को, भारत के राष्ट्रीय सुरक्षा गार्ड (एनएसजी) ने शेष हमलावरों को फ्लश करने के लिए 'ऑपरेशन ब्लैक टोर्नेडो' का आयोजन किया; यह ताज होटल में अन्तिम शेष हमलावरों की मौत के साथ समाप्त कर दिया।

अजमल कसाब ने खुलासा किया कि हमलावर अन्य लोगों के बीच लश्कर-ए-तैयबा के सदस्य थे। भारत सरकार ने कहा कि हमलावर पाकिस्तान से आए ओर उनके नियन्त्रक पाकिस्तान में थे। 7 जनवरी 2009 को, पाकिस्तान ने इस बात की पुष्टि की कि हमलों का एकमात्र जीवित अपराधी पाकिस्तानी नागरिक था। 9 अप्रैल 2015 को, हमले के अग्रणी षड्यंत्रकारी, जकीउर रहमान लखवी को पाकिस्तान में 200,000 (यूएस $ 1,900) की जमानत बांड पर जमानत दी गई थी।

13 समन्वित बम विस्फोटों के बाद से मुम्बई में कई गैर-राज्य हमले हुए, जिसमें 257 लोगों की मौत हुई और 700 घायल हो गए। माना जाता है कि 1993 के हमले बाबरी मस्जिद विध्वंस के बदले में थे।

6 दिसम्बर 2002 को, घाटकोपर स्टेशन के पास एक BEST बस में एक विस्फोट में दो लोग मारे गए और 28 घायल हो गए। अयोध्या में बाबरी मस्जिद के विध्वंस की 10 वीं वर्षगांठ पर बम विस्फोट हुआ था। मुम्बई में विले पार्ले स्टेशन के पास एक साइकिल बम विस्फोट हुआ, जिसमें 27 जनवरी 2003 को एक व्यक्ति की मौत हो गई और 25 को घायल हो गया, भारत के प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी की यात्रा से एक दिन ट्रेन डिब्बे में एक बम विस्फोट हुआ, जिसमें 10 लोग मारे गए और 70 घयल हो गये। 28 जुलाई 2003 को घाटकोपर में एक BEST बस में [illegible]

Scanned by CamScanner

हुए। 25 अगस्त 2003 को, दक्षिण मुम्बई में दो बम विस्फोट हुए एक गेटवे ऑफ इंडिया के पास और दूसरे कलबादेवी के झवेरी बाजार में। कम से कम 44 लोग मारे गए और 150 घायल हुए। 11 जुलाई, 2006 को मुम्बई में उपनगरीय रेलवे में 11 मिनट के भीतर सात बम विस्फोट हुए, 22 विदेशियों सहित 35 लोग मारे गए और 700 से अधिक घायल हुए। मुम्बई पुलिस के अनुसार, बम विस्फोट लश्कर-ए-तैयबा और स्टुडेंट्स इस्लामिक मूवमेंट ऑफ इंडिया (सिमी) द्वारा किया गया था।

प्रशिक्षण

26 पुरुषों के एक समूह, कभी-कभी 24 मुजफ्फराबाद के पहाड़ी इस्लाकें में एक दूरदराज के शिविर में समुद्री युद्ध में प्रशिक्षण प्राप्त किया। प्रशिक्षण का एक हिस्सा मंगला बांध भंडार पर हुआ था।

भारतीय और अमेरिकी मीडिया रिपोर्टों के मुताबिक प्रशिक्षण के निम्नलिखित चरणों में रंगरूटों को गुजारा गया—

- **मनोवैज्ञानिक :** इस्लामवादी विचारो में यकीन दिलाना, भारत, चेचन्या, फिलिस्तीन और विश्व भर में पीड़ित मुसलमानों के चित्रों का प्रयोग।
- **बुनियादी कॉम्बैट :** लश्कर के मूल युद्ध प्रशिक्षण और कार्यप्रणाली पाठ्यक्रम, दौरा आम।
- **उन्नत प्रशिक्षण :** मनसेहरा के निकट एक शिविर में उन्नत हथियार और विस्फोटक प्रशिक्षण शामिल है, साथ ही सर्वाइवल प्रशिक्षण और आगे की शिक्षा के साथ।
- **कमांडों ट्रेनिंग :** अंत में मुम्बई को लक्षित करने के लिए एक छोटे समूह को चयनित कमांडों रणनीति प्रशिक्षण और समुद्री नौ नेविगेशन ट्रेनिंग के लिए चुना गया और उन्हें फिदायीन यूनिट को सौंपा गया।

छात्रों से, 10 को मुम्बई मिशन के लिए चुना गया था। उन्होंने तैराकी और नौकायन में प्रशिक्षण प्राप्त किया, साथ ही एलईटी कमांडरों की देखरेख में हाई एंड हथियारों और विस्फोटकों के इस्तेमाल भी सिखाया गया। संयुक्त राष्ट्र के पूर्व रक्षा विभाग के अधिकारी का हवाला देते हुए मीडिया रिपोर्ट के मुताबिक, अमेरिका की खुफिया एजेंसियों ने यह तय किया था कि पाकिस्तान सेना और इंटर सर्विस इंटेलिजेन्स एजन्सी के पूर्व अधिकारी प्रशिक्षण में सक्रिय रूप से और निरन्तर सहायता करते थे। उन्हें सभी चार लक्ष्यों के खाके दिए गए थे। ताज महल पैलेस होटल, ओबेरॉय ट्राइडेंट, नरीमन हाउस और छत्रपति शिवाजी टर्मिनल।

हमले

पहली घटनाएं 26 नवम्बर को 20:00 भारतीय मानक समय (आईएसटी) में विस्तृत थी, जब फूलने वाली स्पीडबोट में 10 लोग कुलाबा के दो स्थानों पर तट पर आए थे। उन्होंने कथित तौर पर स्थानीय मराठी-बोलने वाले मछुआरों ने इन लोगों के अलग होने से पहले पूछा था कि ये कौन हैं इन्होंने कहा कि 'अपने काम से काम रखों'। मछुआरों ने बाद में पुलिस विभाग को रिपोर्ट किया पर उन्हें स्थानीय पुलिस से कुछ खास प्रतिक्रिया नहीं मिली और स्थानीय पुलिस असहाय थी।

छत्रपति शिवाजी महाराज टर्मिनस

छत्रपति शिवाजी महाराज टर्मिनस (सीएसएमटी) पर दो बन्दूकधारियों, इस्माइल खान और अजमल कसाब ने हमला किया था। कसाब को बाद में पुलिस ने जिंदा पकड़ा और चशमदीदों ने उसकी पहचान की। हमले लगभग 21:30 बजे शुरू हुए जब दो लोग यात्री हॉल में प्रवेश कर गए और आग लगा दी, एके 47 राइफल्स का उपयोग करते हुए। हमलावरों ने 58 लोग मारे और 104 अन्य घायल हो गए, इनका हमला 22:45 के आसपास खत्म हो गया। सुरक्षा बलों ओर आपातकालीन, सेवाओं के बाद शीघ्र ही पहुँचे रेलवे घोषणाकर्ता विष्णु दत्ताराम जेंड़े ने घोषणा की, यात्रियों को स्टेशन छोड़ने के लिए सतर्क किया और कई जिन्दगी बचायीं। दोनों बंदूकधारी घटनास्थन से भाग गए और सड़कों पर पैदल चलने वालों और पुलिस अधिकारियों पर गोलीबारी की, जिसमें आठ पुलिस अधिकारी मारे गए। हमलावरों ने एक पुलिस स्टेशन को पार कर दिया। यह जानते हुए कि वे भारी हथियारबंद आंतकवादियों से मुकाबला नहीं कर सकते थे, स्टेशन पर पुलिस अधिकारियों ने, आतंकवादियों के सामने जाने के बजाय, रोशनी बन्द करने और द्वार को सुरक्षित करने का फैसला किया फिर हमलावरों ने रोगियों को मारने के इरादे से कामा अस्पताल की ओर रुख किया लेकिन अस्पताल के कर्मचारियों ने सभी रोगी वार्डों को लॉक कर दिया। मुम्बई के

आंतकवादी निरोधी दल की टीम ने पुलिस प्रमुख हेमंत करकरे की अगुआई में छत्रपति शिवाजी टर्मिनस की जाँच का नेतृत्व किया और फिर कसाब और खान की तलाश की तलाश में निकल दिये। कसाब और खान ने अस्पताल के बगल में एक गली में वाहन पर आग लगा दी थी, और प्रतिक्रिया में उन पर गोलीबारी की गई। करकरे, विजय सालसकर, अशोक कामटे और उनके एक अधिकारी मारे गए। एकमात्र जीवित, कांस्टेबल अरुण जाधव गम्भीर रूप से घायल हो गए थे। कसाब और खान ने पुलिस के वाहन को जब्त कर लिया, लेकिन बाद में उसे छोड़ दिया और एक यात्री गाड़ी को जब्त कर लिया। तब वे पुलिस रोडब्लॉक की ओर चले गए, जिसे जाधव के मदद के लिए रेडियो कॉल के बाद स्थापित किया गया था। यहाँ गोलीबारी हुई जिसमें खान मारा गया और कसाब घायल हो गया था। शारीरिक संघर्ष के बाद, कसाब को गिरफ्तार कर लिया गया। एक पुलिस अधिकारी, तुकाराम ओम्बले भी मारे गए, जब वह कसाब के सामने उसे गोली मारने के लिए चले गए।

लियोपोल्ड कैफे

दक्षिण मुम्बई में कुलाबा कॉजवे पर एक लोकप्रिय रेस्तरां और बार, हमला का निशाना बनने वाली साइटों में से एक था। दो हमलावर, शोएब उर्फ सोहेब और नाजिर ऊर्फ अबू उमेर ने 26 सनवम्बर की शाम कैफे पर फायरिंग कर दी, कम से कम 10 लोग मारे गए, (कुछ विदेशियों सहित), और कई और अधिक घायल हो गए।

टैक्सियों में बम विस्फोट

टाइमर बम के कारण दो टैक्सियों में विस्फोट हुए थे। विले पार्ले में पहली बार 22:40 बजे जिसमें ड्राइवर और यात्री मारे गए दूसरा विस्फोट वाडी बन्दी में 22:20 और 22:25 के बीच हुआ। टैक्सी के चालक सहित तीन लोग मारे गए, और लगभग 15 अन्य घायल हुए।

ताज होटल और ओबेरॉय ट्राइडेंट

ताज होटल की पहली मंजिल पूरी तरह से छतिग्रस्त हो गयी थी।

दो होटल, ताज महल पैलेस होटल और ओबेरॉय ट्राइडेट, चार लक्षित स्थानों में से थे। ताज होटल में छ: विस्फोटों की सूचना दी गई थी लॉबी में एक, लिफ्ट में दो, रेस्तरां में तीन और ओबेरॉय ट्राइडेंट में एक ताज में, अग्निशामकों ने पहली रात के दौरान सीढ़ी के उपयोग से 200 बंधकों को खिड़की से बचाया।

सीएनएन ने शुरू में 27 नवम्बर 2008 की सुबह खबर दी थी कि ताज होटल में बंधक की स्थिति का समाधान किया गया था ओर महाराष्ट्र के पुलिस प्रमुख का हवाला देते हुए कहा था कि सभी बन्धकों को मुक्त कर दिया गया था। हालांकि, उस दिन बाद में पता चला कि वहाँ अभी भी था ताज होटल में विदेशियों सहित बंधकों को पकड़ने वाले दो हमलावार थे।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार प्रतिनिधियों की यूरोपीय संसद समिति कुछ संख्या में ताज होटल में रह रही थी, जब उस पर हमला किया गया था, लेकिन उनमें से कोई भी घायल नहीं हुअर था। यूरोपीय संसद के ब्रिटिश कन्जर्वेटिव सदस्य (एमईपी) सज्जाद करीम (जो लॉबी में थे जब हमलावरों ने शुरूआत में आग लगा दी थी) और जर्मन सोशनल डेमोक्रेट एमईपी एरिका मान इमारत के विभिन्न हिस्सों में छिपा रहे थे। इसके अलावा स्पैपिश एमईपी इग्नासी गार्डन्स भी उपस्थित थे, जिन्हें होटल के कमरे में बाड़ दीगयी थी। एक और ब्रिटिश कंजर्वेटिव एमईपी सैयद कमल ने बनया कि उन्होंने कई अन्य एमईपी के साथ होटल छोड़ दिया और हमले से पहले एक पास के रेस्तरों में गए। कमल ने यह भी बताया कि पोलिश कमईपी जान मासीएल को अपने होटल के कमरे में सोता हुआ सोचा था, जब हमले शुरु हुए, लेकिन अंतत: उनके द्वारा होटल को सुरक्षित रूप से छोड़ दिया गया। कमल और काइन्स ने बताया कि एक हंगरीयाई एमईपी के सहायक को गोली मार दी गई थी। ओबेरॉय ट्राइडेंट में केरल के भारतीय सांसद एन एन कृष्णादास और ताज होटल में एक रेस्तरां में रात का खाना खाने के दौरान, मैड्रिड के राष्ट्रपति एस्पेरन्जा एगुडरे भी गोलीबारी में फंस गए थे।

Scanned by CamScanner

नरिमन हाउस

नरिमन हाउस, कुलाबा में एक चाबाद लुबाविच यहूदी केन्द्र, मुम्बई चाबाद हाउस के रूप में जाना जाता है, दो हमलावरों ने कब्जा कर लिया था और कई निवासियों को बंधक बना दिया गया था। पुलिस ने आस-पास की इमारतों को खाली किया और हमलावरों के साथ मुठभेड़ की, जिसमें एक घायल हो गया। स्थानीय निवासियों को अन्दर रहने के लिए कह गया। हमलावरों ने एक ग्रनेड को पास के लेन में फेंक दिया, जिसके कारण कोई हताहत नहीं हुआ। एनएसजी कमांडो दिल्ली से आए और नौसेना के हेलीकॉप्टर ने हवाई सर्वेक्षण किया। पहले दिन के दौरान, 9 बंधकों को पहली मंजिल से बचाया गया था। अगले दिन, एनएसजी कमांडो नेहेलीकॉप्टर से छत पर फास्ट रोपिंग करके अन्दर घुस गए। उन्हें आस-पास के भवनों में स्थित स्नाइपर द्वारा कवर किया गया। लंबी लड़ाई के बाद, एक एनएसजी कमांडो हवलदार गजेन्द्र सिंह बिष्ट और दोनों अपराधी मारे गए। हमलावरों द्वारा घर के अन्दर चार अन्य बंधकों के साथ छः महीने की गर्भवती रब्बी गेवरीयल होल्त्जबर्ग और रिफ्का होल्त्जबर्ग की हत्या कर दी थी।

भारतीय खुफिया द्वारा पकड़े गए रेडियो ट्रांसमिशन के अनुसार, हमलावरों से "पाकिस्तान में उनके हैंडलर्स द्वार कहा जाएगा कि यहूदियों की जान गैर-यहूदियों से 50 गुना ज्यादा थी।" कुछ शवों पर चोट से उन पर अत्याचार के संकेत मिले थे।

आतंकस्थल

घटनास्थल	आक्रमण के प्रकार
छत्रपति शिवाजी टर्मिनल रेलवे स्टेशन	गोलीारी, हथगोले
दक्षिण मुम्बई पुलिस मुख्यालय	गोलीबारी
लियोपोल्ड कैफे, कोलाबा	गोलीबारी
ताजमहल पैलेस एंड टावर होटल	गोलीबारी, दस से अधिक विस्फोट, ऊपरी मंजिल में आग
ऑबिराय ट्रिडेन्ट होटल	गोलीबारी, विस्फोट, बंधक, आगजनी
मजगाँव डॉक	विस्फोट, गोलाबारूद के साथ नौका पकड़ी गई
कामा अस्पतला	गोलीबारी बंधक
नरीमन हाउस	गोलीबारी, धरपकड़, बंधक।
विलेपार्ले उपनगर, उत्तर मुम्बई	कार में बम विस्फोट
गिरगाँव चौपाटी	दो आतंकवादियों को मार गिराया गया।
ताड़देव	एक आतंकवादी को गिरफ्तार किया गया है।

इस गोलीबारी में पुलिस तथा आतंकविरोधी दस्ते के कुल मिलाकर 11 लोगों की मृत्यु हो चुकी है जिसमे अनेक अधिकारी हैं। आतंकविरोधी दस्ते के प्रमुख हेमंत करकरे, मुठभेड़ विशेषज्ञ उप निरीक्षण विजय साठस्कर अतिरिक्त पुलिस आयुक्त अशोक कामटे अतिरिक्त पुलिस आयुक्त सदानन्द दाते तथा राष्ट्रीय सुरक्षा बल के मेजर कमांडों संदोप उन्नोकृष्णन, निरीक्षक सुशान्त शिन्दे, सहायक उप निरीक्षक-नानासाहब भोंसले, सहायक उप निरीक्षक-तुकाराम ओंम्ले, उप निरीक्षक-प्रकाश मोरे, उप निरीक्षक-दुदगुड़े, कांस्टेबल-विजय खांडेकर, जयवंत पाटिल, योगेश पाटिल, अंबादोस पवार तथा एम०सी० चौधरी के शहरीद होने के समाचार हैं।

असम में बाढ़ के कारण

एक बार फिर बाढ़ में डूब गया है। अब यह तो जैसे हर साल होने वाली एक सालाना त्रासदी हो गई है। हर साल राज्य के बड़े भू-भाग को बाढ़ का पानी अपना शिकार बना लेता है। फसलों और सपत्ति को नुकसान पहुँचता है। कई लोगों की जान

जाती है। मवेशियों और वन्य जीवों को बचाने की कोशिशें भी कभी-कभी नाकाम ही रहती है। क्या इसका कोई समाधान नहीं है?

हम बड़े गर्व के साथ दावे करते है कि आजादी के बाद से भारत ने किस तरह तरक्की की है। लेकिन जब बात असम की आती है तो देश मानकर चलता है कि इस राज्य को बाढ़ से नहीं बचा सकते। यह जीवन की ऐसी हकीकत है, जिसका सामना हर साल करना होता है। जैसे ही बाढ़ करा पानी उतरता है, जिन्दगी फिर पटरी पर आ जाती है।

केन्द्र और राज्य में पिछले कई बरसो में कई सरकारें ओई और गइ। उन्होने करोड़रों रुपये का निवेश किया। अब समय आ गया है कि उनकी लम्बी अवधि की योनाओं का आँकलन किया जाए। यह देखा जाए कि जिन समाधानों को अमल में लाया गया, उन्होंने समस्या को दूर करने में सफलता पाई भी या नहीं।

इस साल हुआ नुकसान

असम राज्य आपदा प्रबन्धन प्राधिकरण ने **28 जुलाई 2016 को जो 'फ्लड रिपोर्ट' जारी की है, वह कहती है।**

प्रभावित जिले	:	22
प्रभवित आबादी	:	17.94 लाख
प्रभावित फसल क्षेत्रफल	:	2, 13, 251.52 हैक्टेयर
सबसे ज्यादा प्रभावित असम के जिले	:	मोरीगांव, जोरहट, धुबरी लखीमपुर, गोलाघट, बारपेटा, धेमाजी, सोनितपुर, गोलपारा, बोगाईगाँव और दरांग
राहत शिविरों की संख्या	:	517
राहत विरण केन्द्र	:	186,
राहत शिविरों में लोग	:	2,29,544

इस साल अप्रैल और मई में प्री-मानसून बारिश शुरू हो गई थी। तब से हालात गम्भीर हो चले थे। ब्रह्मपुत्र और उसकी कई सहायक नदियों ने अपने किनारों को तोड़कर राज्य के 35 जिलों में से 23 जिलों को बाढ़ से प्रभावित किया। करीब दो लाख हैक्टेयर में लगी फसलें डूब गई।

इसकी वजह से 11 लाख लोग प्रभावित हुए। 28 लोगों ने अपनी जान गंवाई 1·5 लाख से ज्यादा लोग 460 से ज्यादा राहत शिविरों में आश्रय लिए हुए हैं।

कई हिस्सों में लोग अब भी बाढ़ के पानी से जूझ रहे हैं। उनके पास खाना और पीने का पानी बेहद कम है। वे राहत और बचाव दलों का इंतजार कर रहे है। एनडीआरएफ की टीमों को तैनात किया गया है। वह ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुंचने की कोशिश कर रही हैं।

असम के पर्यटन स्थल काजीरंगा नेशनल पार्क का 80 प्रतिशत हिस्सा डूब गया। राज्य में एक सिंग वाले गेंडे और अन्य वन्यजीवों को बाढ़ ने बुरी तरह प्रभावित किया है। भारत के वाइल्डलाइफ ट्रस्ट के साथ-साथ वन विभाग के कई अधिकारी जानवरों को बचाने के लिए सक्रिय है, लेकिन कई जानवर डूब चुके हैं। कई अब भी डूब क्षेत्र में फसे हुए है।

निचले असम मे मोरीगांव सबसे ज्यादा प्रभावित हुआ है। 3·6 लाख से ज्यादा लोगो को बाढ़ के पानी का सामना करना पड़ा। जोरहट जिले में पड़ने वाला माजुली द्वीप पूरी तरह डूब गया है।

इससे करीब 1·71 लाख लोग प्रभावित हुए हैं।

हर साल, असम में 31·6 लाख हैक्टेयर जमीन के बाढ़ से प्रभावित होने की आशंका रहीत है। इसमें 9·5 लाख हैक्टेयर हर साल सीधे-सीधे बाढ़ से प्रभावित होता है। सालाना 160 करोड़ रुपए से ज्यादा का नुकसान होता है।

बाढ़ की वजह से हाने वाले मिट्टी के कटाव की भारी कीमत असम को चुकानी पड़ी है। 1954 से, अब तक 4·2 हैक्टेयर जर्मन कटाव की वजह से राज्य ने खो दी है। यह राज्य के 7·1 प्रतिशत से ज्यादा है।

Scanned by CamScanner

बीते बरसों में, दक्षिण असम क्षेत्र में सबसे ज्यादा कटाव हुआ है। नलबाड़ी में माकालुमा (80 हजार हैक्टेयर), माजुली द्वीप (42,000 हैक्टेयर), गोलपाड़ा इलाका (40,000 हैक्टेयर) और मोरीगांव (15,000 हैक्टेयर) सबसे ज्यादा प्रभावित हुए हैं।

विशाल ब्रह्मपुत्र नदी

जल संसाधनों के लिहाज से ब्रह्मपुत्र नदी दुनिया की छठे नम्बर की नदी है, जो 629·05 घन किमी/वर्ष पानी अपने साथ ले जाती है। नदी की कुल लम्बाई 2,906 किमी है, जिसमें से 918 किमी भारतमें पड़ती है। इसमें से 640 किमी असम में बहती है।

ब्रह्मपुत्र की 41 सहायक नदियाँ हैं, जिसमें से 26 उत्तरी किनारे की और बहती है। जबकि 15 दक्षिणी किनारे की ओर।

बाढ़ के कारण : मौजूदा बाढ़ की वजह, अरुणाचल प्रदेश, भूटान और ऊपरी असम में हुई तेज बारिश है। इससे ब्रह्मपुत्र और उसकी सहायक नदियों मे पानी का स्तर बढ़ गया और वह खतरे के निशान से ऊपर चले गए हैं। अतिरिक्त पानी ने कई जगहों पर तटबंध तोड़ दिए और पूरे रास्ते में बाढ़ के हालात बने। खासकर निचले असम में।

बाढ़ और मिट्टी के कटाव के मुख्य कारण

प्राकृतिक कारण :

1. क्षेत्र की जियोलॉजी और जियोमॉफोलॉजी
2. घाटी की फिजियोग्राफिक स्थिति
3. सिस्मिक गतिविधि
4. अति वर्षा

मानव-निर्मित कारण :

1. मनुष्यों के बनाए तटबंधों की वजह से निकासी में होने वाली दिक्कतें
2. नदी के इलाकों में मनुष्यों का अतिक्रमण

मानसून के पानी प्रवाह के लिए यू-आकार की संकरी घाटी बंगाल की खाड़ी की ओर खुलते हुए चौड़ी हो जाती है। घाटी की औसत चौड़ाई 80-90 किमी है। जबकि नदी की औसत चौड़ाई 6-10 किमी है। नदी की प्राकृतिक धारा भारत में प्रवेश करते ही बहुत ऊँचाई से गिरती है, जिससे उसका प्रवाह बहुत तेज होता है।

ब्रह्मपुत्र घाटी और उत्तर-पूर्वी पहाड़ों के बीच, मानसू के दौरान 2,480 से 6,350 मिमी के बीच औसत बारिश होती है। ज्यादा बारिश होने की वजह से पानी असम के निचले हिस्सों में आ जाता है। खासकर कमजोर किनारों को तोड़ते हुए भीषण बाढ़ की शक्ल ले लेता है।

इस क्षेत्र की फिजियोलॉजी अभी ज्यादा पुरानी नहीं है। हिमालय के निचले हिससे अब भी निर्माण की प्रक्रिया में हैं। हरियाली के अभाव में, मुलायम चट्टानें आसानी से पानी को राह दे देती हैं। ब्रह्मपुत्र नदी और उसकी सहायक नदियों के आस-पास की रिहायशी बस्तियां समस्या को और बढ़ा देती हैं। नदियों के पानी के प्रवाह में बाधा पैदा करती हैं, जिससे उसका प्राकृतिक प्रवाह गड़बड़ा जाता है।

ब्रह्मपुत्र और सकी सहायक नदियों के तटबंधों का निर्माण बाढ़ की समस्या को कम करने के बजाय बढ़ा रहा है। बाढ़ का पानी बड़ी आसानी से इन तटबंधों को तोड़कर शहरी बस्तियों में घुस रहा है।

रेलवे पुल, सड़कों और छोटे पुलों ने पानी की निकासी को जटिल बना दिया है। पानी का प्राकृतिक प्रवाह प्रभावित होकर पीछे की ओर चला जाता है और कमजोर इलाकों में तटबंधों को तोड़ देता है। महत्वपूर्ण जगहों पर बेरोक-टोक निर्माण गतिविधियों ने भी ग्रामीण इलीकों में पानी की निकासी को प्रभावित किया है, इससे स्थिति और खराब हुई है।

प्रतिबद्धता और दूवर्शिता की कमी

असम में बाढ़ की समस्या को कम करने के लिए काफी कम निवेश किया गया है। 10वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान, 10 बाढ़ प्रबंधन कार्यक्रमों के लिए सिर्फ 22 करोड़ रुपए का निवेश किया गया। एक कार्यक्रम के लिए औसतन 2.2 करोड़ रुपए। जिस राज्य ने 4.2 लाख हेक्टेयर जमीन कटाव की वजह से खो दी हो, जिसे हर साल 160 करोड़ रुपए का नुकसान हो रहा है, उसे इस नुकसान से बचाने के लिए 2.2 करोड़ रुपए ही दिए गए। भले ही अंतरराष्ट्रीय फंडिंग और केन्द्र से वित्तीय निवेश बढ़ा है, लम्बी अवधि के समाधान अब भी नहीं खोजे जा सके हैं।

बाढ़ की समस्या से निदान के लिए ज्यादातर खर्च तटबंध बनाने पर ही दिया गया। स्थानीय टोपोग्राफी पर आधारित प्राकृतिक बाढ़ नियंत्रण कार्यक्रमों पर ध्यान कम ही रहा।

आज तक ब्रह्मपुत्र और उसकी सहायक नदियों पर कई जगहों पर 5,000 किमी तटबंध बनाए गए हैं।

इसकी वजह से नदियों का प्रवाहित नियंत्रित होता है। खासकर मानसून के दौरान पानी के तेज प्रवाह का दबाव इन तटनंधों पर बढ़ जाता है।

नदियों के आस-पास रहने वारले लोगों ने बाढ़ से बचाव के पारंपरिक तौर-तरीके विकसित किए हैं। वह उन पर ही भरोसा करते हैं। तटबंधों के पास के सुरखित इलाकों में रह रहे लागों को जरूर बाढ़ का पानी प्रभावित करता है।

सरकार और सम्बन्धित ऐजेन्सियों को तटबंध बनाने की मौजूदा नीति की समीक्षा करने की जरूरत है। इसमें प्राकृतिक प्रवाह के मुताबिक ज्यादा पानी बहने देने पर सोचा जाना चाहिए। यदि स्थानीय लोगों को इस योजना में भागीदार बनाया गया तो ही परिणाम अच्छे आ सकते हैं। वे स्थानीय टोपोग्राफी के आधार पर स्थानीय समाधान सुझा सकते हैं।

बाढ़ के वक्त, साफ पेयजल की उपलब्धता सबसे बड़ी समस्या होती है। आज, विज्ञान की वजह से कई सस्ती वाटर फिल्टेशन और प्यूरीफिकेशन टेक्नोलॉजी उपलब्ध हैं। बाढ़ के वक्त इनका इस्तेमाल लोग कर सकते हैं। सरकार को इस दिशा में लागरूकता बढ़ाने पर काम करना होगा। साथ ही यह टेक्नोलॉजी लोगों को रिययती दरों पर उपलब्ध करानी होगी।

हम उम्मीद करते हैं कि सरकार इस समस्या पर आवश्यक ध्यान देगी। पर्याप्त निवेश करेगी और 2017 तक असम मानसून की चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार हो चुका होगा।

भुज भूकम्प

गुजरात भूकम्प 2001 भुज में आये भूकम्प के रूप में जाना जाता है। 26 जनवरी भारत के 52वें पर हुई गणतन्त्र दिवस पर और 2 से अधिक समय तक चली। भूकंप का केन्द्र लगभग 9 किमी० के गाँव के दिक्षण-पश्चिम में था। भूकम्प पर 7·7 तक पहुँच तल परिमाण पैमाने और अधिकतम एक्स तीव्रता से महसूस किया था पर मेर्सीली तीव्रता माप एक और 167,000 घायल हो गये और लगभग 400,000 घरों को नष्ट कर दिया।

प्रभाव

भुज में मरने वालों की संख्या कच्छ क्षेत्र 12,300 था। जो केन्द्र से केवल 20 km की दूरी पर स्थित था। काफी नुकसान में भी हुई भचाऊ और अंजार, अंजार, भुज और भचाऊ के तालुका में चपटा गावों के सैकड़ों के साथ एक लाख से अधिक संरचनाओं क्षतिग्रस्त हो गये थे या नष्ट कर दिया, कई एतिहासिक इमारतों और पर्यटकों के आकर्षण भी शामिल है।

अहमदाबाद में 56 लाख की आबादी के साथ गुजरात की वाणिज्यिक राजधानी के रूप में कई रूप में 50 बहु मंजिला इमारतें ढह गई और कई सौ लोग मारे गये थे। कुल संपत्ति का नुकसान 5·5 अरब अनुमान लगाया गया था। कच्छ जिले के 90% मकानों की भोजन एवं पानी की आपूर्ति बन्द हो गयी। जबकि 2,58,000 घर नष्ट हो गये। एक अस्थाई रेड क्रास अस्पाताल भुज में बने रहे, जबकि एक प्रतिस्थापन अस्पताल बनाया गया था देखभाल प्रदान करने के लिये।

विश्व में आये अनेक भूकम्पों का विवरण निम्न प्रकार है :

Scanned by CamScanner

1. कान्टो (जापान) भकम्प (1 सितम्बर 1923)—इसका परिमाणा 8.3 रहा था। इस भीषण भूकम्प से टोक्यो एवं योकोहामा खहर पूरी तरह से नष्ट हो गये है।।भेकम्प एवं आग लगने से लगीग 1,40,000 लोग मारे गये। अनुमानत: 12,86,261 भवन नष्ट हो गये तथा सम्भवत: 4,47,128 भवन आग से जल गये। प्रबलित कंक्रीट की ढांचेदार संरचनाओं में ईंट चिनाई से निर्मित संरचनाओं की तुलना में कम क्षति पायी गयी।

2. क्वेटा (तब भारत) (31 मई 1935)—क्वेटा, जो अब पश्चिमी पाकिस्तान में स्थित है, में आये भूकम्प का परिमाण रिक्टर पैमाने पर 7.5 था इसमें लगभग 60,000 लोग मारे गये थे। इसमें क्वेटा शहर पूरी तरह से नष्ट हो गया था।

3. निगाटा (Nigata), जापान भूकम्प 1964—रिक्टर पैमाने पर इसका परिणाम 7.5 था। इस भूकम्प में विनाश का मुख्य कारण मृदा का द्रवीकरण था। बड़ी-बड़ी इमारतें जमीन में धँस गयीं तथा कुछ इमारतें असमान धँसाव के कारण झुक गईं। प्रबलित कंक्रीट की लगभग 1500 इमारतों में से 310 इमारतें बहुत अधिक क्षतिग्रस्त हुई।

4. अलास्का भूकम्प (27 मार्च 1964)—यह भूकम्प उस समय का सबसे बड़ा भूकम्प था जिसका परिमाण 8.4 आँका गया। भवनों में बहुत अधिक क्षति हुई। बहुत से भवन पूरी तरह से ध्वस्त हो गये। भूमि का दोलन काल लगभग 0.5 सेकेण्ड मापा गया। इसी कारण ऊँची इमारतें जिनका प्राकृतिक आवर्त्तकाल 0.5 सेकेण्ड के लगभग बराबर था उनमें अधिकतम क्षति देखी गई। छोटी इमारतों में अपेक्षाकृत कम क्षति पायी गई। पूर्व प्रबलित कंक्रीट के अवयव में क्षति उनके जोड़ों पर पायी गयी जबकि इन अवयवों में टूट-फूट नहीं देखी गयी।

5. पूरू भूकम्प (13 मई 1970)—इसका परिमाण 7.7 था। इसमें 60,000 लोगों के मारे जाने की जानकारी है। कम से कम 10,000 लोग बड़ी मात्रा में कीचड़ के बहाव में जिन्दा दफन हो गये। भूकम्पीय दोलन के कारण 22,000 फीट की ऊँचाई पर स्थित चोटी के एक बड़े भाग के ढीले (Loose) होकर नीचे गिरने तथा इसने बर्फ तथा पानी के मिल जाने से कीचड़ उत्पन्न हो गया। यह कीचड़ 400 मील प्रति घंटा की रफ्तार से बहता हुआ नीचे आया और इसने यंगे (Yungay) शहर को पूरी तरह से ढक लिया। इस शहर के सभी वासी इस कीचड़ में जिन्दा दफन हो गये।

6. लाटूर (किलारी) भूकम्प (30 सितम्बर 1993)—इसका परिमाण 6.4 था। इसका उद्गम केन्द्र किलोरी के पास स्थित था। इस भूकम्प से तीव्र भू दोलन उत्पन्न हुए जिनका प्रभाव लाटूर, ओसमानाबाद, सोलापुर, बुलकर्ग एवं बिहार में सबसे अधिक हुआ। इसमें 28700 से अधिक मकान ध्वस्त हो गये एवं लगभग 9000 लोग मारे गये। गारा युक्त ढोंका चिनाई से निर्मित सभी मकान ध्वस्त हो गये। इस क्षेत्र में मकानों की दीवारें 70 से 180 सेमी मोटी बनायी जाती हैं। इनकी नींव काली कपास मृदा (Black coton soil) की ऊपरी पर्त से 60 से 250 सेमी गहराई तक बनी होती है। इन मकानों की छत लम्बवत् दिशा में लकड़ी के रैफ्टर डालकर तथा उनके ऊपर लकड़ी के तख्ते लगाकर बनाई जाती है। इन तख्तों के ऊपर मिट्टी की 30 से 80 सेमी मोटी पर्त बिछा दी जाती है जिससे छत भारी हो जाती है। दीवार में इण्टर लॉकिंग पत्थर नहीं लगाये गये थे जिसके कारण ये मकान ध्वस्त हो गये।

7. मुजफ्फराबाद भूकम्प (8 अक्टूबर 2005)—इसका परिमाण 7.4 था। यह 8 अक्टूबर 2005 दिन शनिवार को प्रात: 9 : 20 (भारतीय मानक समय) बजे आया। इसका उद्गम केन्द्र इस्लामाबाद से 100 किमी उत्तर पूर्व दिशा में पाकिस्तान अधिकृत कश्मीर की जंगली पहाड़ियों के मध्य मुजफ्फराबाद में स्थित था। इस भूकम्प के बाद में भी कई झटके महसूस किये गये। ऐसा अनुमान है कि इस भूकम्प में 83000 लोग पाक अधिकृत कश्मीर एवं पाकिस्तान में मारे गये। लगभग 1300 लोग भारत में मारे गये। लगभग 35500 घर ध्वस्त हो गये। उड़ी एवं टंगघर में 85% स्कूल नष्ट हो गये।

जाने क्या है स्वाइन फ्लू और कैसे करे बचाव

स्वास्थ्य मंत्रालय में स्वाइन फ्लू से निपटने के लिए भरपूर इंतजाम किये. जरूरत सिर्फ ये है कि स्वाइन फ्लू के लक्षण दिखते ही मरीज का इलाज शुरू करवा दिया जाये। लिहाजा आपका यह जानना जरूरी है कि स्वाइन फ्लू क्या है, और ये कैसे फैलता है। ये जानकारी तब और भी अहम हो जाती है, जब सर्दी में बारिश से नमी बढ़ जाती है। दरअसल, ऐसे मौसम में ही तेजी से फैलता है स्वाइन फ्लू। जैसे-जैसे ठंड बढ़ रही है। बारिश सर्दी बढ़ा रही है। मौसम खराब हो रहा है। हैदराबाद से लेकर दिल्ली तक स्वाइन फ्लू के मामले बढ़ते जा रहे हैं। दरअसल, स्वाइन फ्लू-वायरल बुखार है, यानी ये वायरल से फैलता है।

बारिश की वजह से स्वाइन फ्लू का वायरस और घातक हो जाता है। वातावरण में नमी बढ़ने के साथ ही ये ज्यादा तेजी से फैलने लगता है। यही वजह है कि मौसम के साथ एकाएक इसके मामलों की बाढ़ सी आ गई है।

मौसम खराब होने के साथ स्वाइन फ्लू से होने वाली मौतें भी बढ़ रही हैं, लेकिन अगर इस बीमारी को अच्छी तरह से जान लिया जाए तो इसे पहचानना और इससे बचना भी आसान हो जायेगा।

क्या है स्वाइन फ्लू

स्वाइन फ्लू, इनफ्लूएंजा यानी फ्लू वायरस के अपेक्षाकृत नये स्ट्रेन इनफ्लूएंजा वायरस A से होने वाला इनफेक्शन है। इस वायरस को ही H1N1 कहा जाता है। इसके इन्फेक्शन ने 2009 और 10 मे महामारी का रूप ले लिया था लेकिन WHO ने 10 अगस्त 2010 में इस महामारी के खत्म होने का भी ऐलान कर दिया था। अप्रैल 2009 में इसे सबसे पहले मैक्सिको में पहचाना गया था। तब इसे स्वाइन फ्लू इसलिए कहा गया था क्योंकि सुअर में फ्लू फैलाने वाले इनफ्लुएंजा वायरस से ये मिलता जुलता था।

क्या है स्वाइन फ्लू के लक्षण?

- स्वाइन फ्लू के लक्षण भी सामान्य एन्फ्लूएंजा जैसे ही होते हैं।
- नाक का लगातार बहना, छींक आना
- कफ, कोल्ड और लगातार खांसी
- मांसपेशियों में दर्द या अकड़न
- सिर मे भयानक दर्द
- नींद न आना, ज्यादा थकान
- दवा खाने पर भी बुखार का लगातार बढ़ना
- गले में खराश का लगातार बढ़ते जाना

स्वाइन फ्लू का वायरस तेजी से फैलता है। कई बार मरीज के आस-पास रहने वाले लोगो और तिमारदारों को चपेट में ले लेता है लिहाजा, किसी में स्वाइन फ्लू के लक्षण दिखें तो उससे कम से कम तीन फोट दूरी बनाए रखना चाहिए। स्वाइन फ्लू का मरीज जिस चीज का इस्तेमाल करे उसे भी नहीं छूना चाहिए।

कैसे फैलता है स्वाइन फ्लू

स्वाइन फ्लू का वायरस हवा में ट्रांसफर होता है। खांसने, छीकने, थूकने से वायरस सेहतमंद लोगों तक पहुँच जाता है। डॉक्टरों का यह भी कहना है कि अगर किसी घर में कोई शख्स स्वाइन फ्लू की चपेट में आ गया तो घर के बाकी लोगों को इससे बचने के लिए डॉक्टरी सलाह ले कर खुद भी इसकी दवाईयाँ खानी चाहिए। राजधानी दिल्ली में स्वाइन फ्लू की रोकथाम के लिये पाँच निजी अस्पतालों समेत 22 अस्पतालों को बड़ी जिम्मेदारी दी गई है। राम मनोहर लोहिया अस्पताल भी उनमें से एक है। राम मनोहर लोहिया अस्पताल में डॉक्टरों और नर्सिंग स्टाफ का एक बड़ा दल स्वाइन फ्लू वार्ड में लगाया गया है। अस्पताल के मुताबिक इस विशेष दल के सदस्यों को भी इस बीमारी से बचने के लिए दवाईयाँ दी जा रही हैं। साथ ही वार्ड में स्वाइन फ्लू के मरीजों को रखने की खास व्यवस्था की गई है।

स्वाइन फ्लू से बचाव ही इसे रोकने का बड़ा उपाय है, हालांकि इसका इलाज भी अब मौजूद है। आराम करना, खूब पानी पीना, शरीर में पानी की कमी न होने देना इसका सबसे बेहतर इलाज है। शुरुआत में पैरासीटामॉल जैसी दवाएँ बुखार कम करने के लिऐ दी जाती हैं। बीमारी के बढने पर एंटी वायरल दवा ओसेल्टामिविर (टैमी) और जानामीविर (रेलेंजा) जैसी दवाओं से स्वाइन फ्लू का इलाज किया जाता है।

लेकिन इन दवाओं को कभी भी खुद से लेना नहीं चाहिए। वैसे सर्दी-जुकाम जैसे लक्षणों के इलाज में इस्तेमाल होने वाली तुलसी, गिलोए, कपूर, लहसुन, एलोवीरा, आंवला जैसी आयुर्वेदिक दवाँईयो का भी स्वाइन फ्लू के इलाज में बेहतर

Scanned by CamScanner

असर देखा गया है। सर्दियों में इन्हें लेने से वैसे भी जुखाम तीन फिट की दूरी पर रहता है, और स्वाइन फ्लू के वायरस से बचने के लिए भी इतने ही फासले की जरूरत होती है।

पदार्थों की पुनर्विनीकरण (Recycling of Materials)

पुनरावर्तनीय पदार्थों में कई किस्म के कांच, कागज, धातु, प्लास्टिक, कपड़े एवं इलेक्ट्रॉनिक्स शामिल है। हालांकि प्रभाव में एक जैसा ही लेकिन आमतौर पर जैविक विकृतियों के अपशेष से खाद बनाने अथवा अन्य पुन उपयोग मे लाने-जैसे कि भोजन (पके अन्न) तथा बाग-बगीचों के कचरों को पुनरावर्तन के लायक नहीं समझा जाता है। पुनरावर्तनीय सामग्रियों को या तो किसी संग्रह शाला में लाया जाता है अथवा उच्छिस्ट स्थान से ही उठा लिया जाता है, तब उन्हे नए पदार्थों में उत्पादन के लिए छंटाई, सफाई तथा पुनर्विनीकरण की जाती है।

सही मायने मे, पदार्थ के पुनरावर्तन से उसी सामग्री की ताजा आपूर्ति होगी, उदाहरणार्थ, इस्तेमाल में आ चुका कागज़ और अधिक कागज़ उत्पादित करेगा, अथवा इस्तेमाल मे आ चुका फोम पोलीस्टाइरीन से अधिक पोलीस्टाइरीन पैदा होगा। हालांकि, यह कभी-कभार या तो कठिन अथवा काफी खर्चीला हो जाता है (दूसरे कच्चे मालों अथवा अन्य संसाधनों से उसी उत्पादन को उत्पन्न करने की तुलना में (जैसे कि कागज के बोर्ड बनाने में) बदले में उनके ही अपने ही पुन: उपयोग शामिल है। पुनरावर्तन का एक और दूसरा तरीका मिश्र् उत्पादों से, बचे हुए माल को या तो उनकी निजी कीमत क कारण (उदाहरणार्थ गाड़ियों की बैटरी से शीशा,या कंप्यूटर के उपकरणों मे सोना), अथवा उनकी जोखिमी गुणवत्ता के कारण (जैसे कि, अनेक वस्तुओं से पारे को अलग निकालकर उसे पुनर्व्यव्हार में लाना) फिर से उबारकर व्यवहार योग्य बनाना है।

पुनरावर्तन की प्रक्रिया में आई लागत के कारण आलोचकों मे निवल आर्थिक और पर्यावरणीय लाभों को लेकर मतभेद है और उनके सुझाव क अनुसार पुनरावर्तन के प्रस्तावक पदार्थों की ओर भी बदतर बना देते है तथा अनुमोदन एवं पुष्टिकरण के पक्षपातपूर्ण पूर्वग्रह झेलना पड़ता है। विशेषरूप से, आलोचकों का इस मामले में तर्क है कि संग्रहीकरण एवं ढुलाई में लगने वाली लागत एवं उर्जा उत्पादन कि प्रक्रिया में बचाई गई लागत और उर्जा से घट जाती (तथा भारी पड़ जाती है) और साथ ही यह भी कि पुनरावर्त के उद्योग में उत्पन्न नौकरियां लकड़ी उद्योग, खदान एवं अन्य मौलिक उत्पादनों से जुड़े उद्योगों की नौकरियो को निकृष्ट समझी जाती है; और सामग्रियों जैसे कि कागज़ की लुगदी आदि का पुनरावर्तक सामग्री के अपकर्षण से कुछ ही बार पहले हो सकता है जो और आगे पुनरावर्तन के लिए बाधक है। पुनरावर्तन के प्रस्तावकों के ऐसे प्रत्येक दावे में विवाद है और इस संदर्भ में दोनों ही पक्षों से तर्क की प्रामाणिकता ने लम्बे विवाद को जन्म दिया है।

एकत्रित सामूहिक सामग्री और ठोस सामान

कंक्रीट ब्लॉक (Concrete Recycling)

विध्वंस को ढाल देने वाले इलाकों से एकत्रित कुल ठोस सामग्रियों की चूर-चूर कर पीसने वाली मशीन (चक्की) से गुजारा जाता है, जिसमें अक्सर ऐस्फौल्ट, ईंट, गंदगी के गुबार एवं चट्टाने शामिल होती है। नए निर्माण की परियोजनाओं के लिए बजरी के रूप मे कंक्रीट क छोटे-छोटे टुकड़ों का इस्तेमाल होता है। पीसे हुए पुनरावर्तित कंक्रीट का भी इस्तेमाल एकदम से नई कंक्रीट के साथ सूखा सूखा मिलाकर भी किया जा सकता हे अगर यह मिलावटो से मुक्त है तो यह दूसरे चट्टानों को खोद कर निकाले जाने की जरुरत को कम करता है, जिससे बदले में पेड़-पौधों और पर्यावरण की रक्षा होती है।

बैटरियाँ (Battery Recycling)

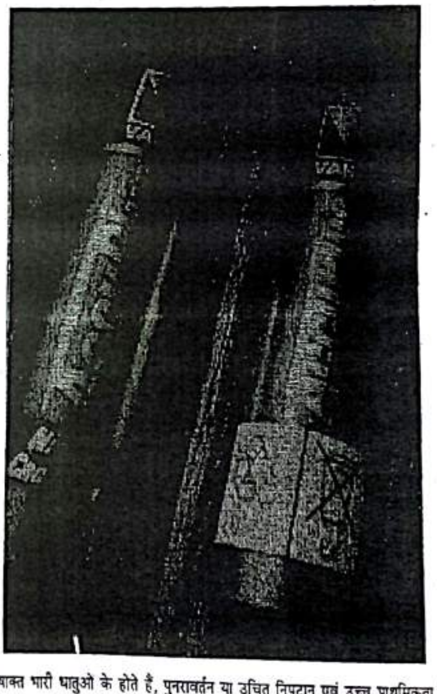

कुछ बैटरी विषाक्त भारी धातुओ के होते है, पुनरावर्तन या उचित निपटान एवं उच्च प्राथमिकता है

बैटरियों के आकार और प्रकार में व्यापक भिन्नता उनके पुनरावर्तन को बेहद मुश्किल बना देती है सबसे पहले उन्हें एक प्रकार से छांट कर अवश्य अलग-अलग कर लेना चाहिए और हर प्रकार के लिए पुनरावर्तन को अलग प्रक्रिया की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त, पुरानी बैटरियों में पारा और कैडमियम होते है, जो हानिकारक पदार्थ है जिनकी देखभाल रखरखाव संभाल कर की जानी चाहिए। पर्यावरणीय क्षति करने की उनकी क्षमता के कारण, कई अंचलों में इस्तेमाल

Scanned by CamScanner

की जा चुकी बैटरियों के उचित निपटान के लिए कानूनी नियमों की आवश्यकता है। दुर्भाग्यवंश, इस जनादेश को लागू किया जाना काफी दुष्कर हो गया है।

शीशा-अम्ल (लेड-एसिड) वाली बैटरियां, जैसे कि ऑटोमोबाइल में इस्तेमाल में आने वाली बैटरियों की तरह, पुनरावर्तन करने में अपेक्षाकृत आसान हैं एवं कई अंचलो में विक्रेताओं को इस्तेमाल मे आ चुके उत्पादों को स्वीकार करने के मामले में कानून की जरुरत होगी। संयुक्त राज्य अमेरिका में, 80% तक पुनरावर्तित सामग्री धारण करने वाली नई बैटरियों के पुनरावर्तन दर 90% है।

प्राकृतिक तरीके से सड़नशील अपशिष्ट (Composting)

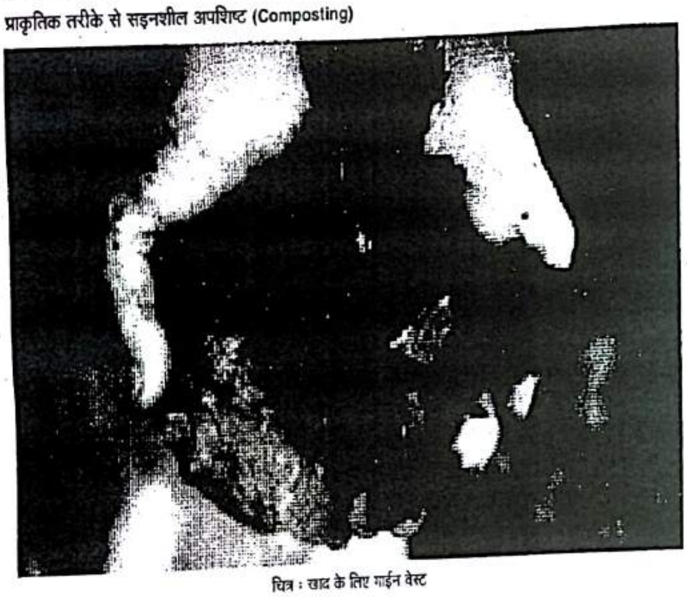

चित्र : खाद के लिए ग्रीन वेस्ट

रसोईघर बगीचा, एवं अन्य हरे अपशिष्टों को सड़ाकर उपायोगी खाद में पुनरावर्तित किया जा सकता है। यह प्रक्रिया प्राकृतिक वायुजीवी बैक्टेरिया की अपशिष्ट विखंडित होने देती है जो मिटटी कि उर्वर के उपरी सतह का निर्माण करती है। सड़ाकर खाद बनाने का काम अधिकतर घरेलू पैमाने पर ही होता है, लेकिन इसके साथ ही साथ नगरपालिका द्वारा भी हरे अपशिष्ट के एकत्रीकरण का कार्यक्रम भी मौजूद है। उत्पादित उपरी उर्वर मिट्टी को बेचकर इन कार्यक्रमों के पूरक के लिए निधीयन हो सकता है।

वस्त्र

प्रेषण अथवा गमागमन के जरिए वस्त्रों का पुनरावर्तन काफी तेजी से लोकप्रिय हो रहा है। वस्त्रों के गमागम्न (स्वैप) में, लोगों का एक समूह एक नियत स्थान पर एकत्रित, होकर आपस में वस्त्रों का आदान-प्रदान करते हैं। क्लोथिंग स्वैप इनका जैसी संस्थाओं मे लावारिस कपड़ों को स्थानीय दान करने के लिए दान स्वरूप दे दिया जाता है।

इलेक्ट्रॉनिक्स उपकरणों के पुरजे अलग करना एवं उद्धार करना (Computer Recycling)

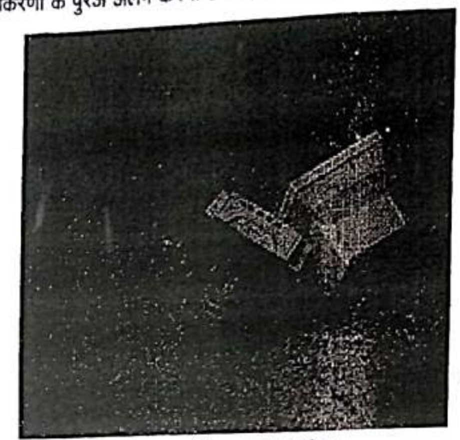

चित्र : एक परित्यक्त कंप्यूटर मॉनीटर

बिजली के उपकरणों के प्रत्यक्ष निपटान-जैसे कि कंप्यूटर और मोबाइल फोन-कुछ अंदरूनी घटको के विषाक्त होने के कारण-कई अंचलो मे प्रतिबंधित कर दिए गए हैं। पुनरावर्तन की प्रक्रिया धातुओं, प्लास्टिक तथा सर्किट जो उन उपकरणों में निहित है उन्हें स्वतः यंत्रवत अलग करती है। जब यह एक अपशिष्ट पुनरावर्तन संयत्र में बड़े पैमाने पर कर लिया जाता है घटक को उद्धार करने का कार्य लागत-प्रभावी तरीके से संपादित किया जा सकता है।

लौह धातुएँ

चित्र : पुनरावर्तन के लिए इस्पात कुचल और बलेड

Scanned by CamScanner

लोहा और इस्पात संसार के सार्वधिक पुनरावर्तित पदार्थ हैं, एवं पुनरावर्तन किए जाने वाले सामानों में सबसे आसान, क्योंकि चुम्बक का इस्तेमाल कर उन्हें अपशिष्ट के ढेर से अलग किया जा सकता है। इस्पात के कारखाने से होकर पुनरावर्तन की प्रक्रिया गुजरती है; वैधुतिक भट्टी में (90-100% स्क्रैप) को या तो फिर से गला दिया जाता है अथवा बेसिक ऑक्सीजन की भट्टी मे (लगभग 25% स्क्रैप) का इस्तेमाल चार्ज के एक अंश के रूप में कर लिया जाता है। किसी भी दरजे के इस्पात उच्च कोटि के नये धातु, में पुनरावर्तित किया जा सकता है, गुणवत्ता के लिहाज से ऊंचे दर से नीचे दरजे में जिसकी पदावनति नहीं होती है क्योंकि इस्पात का बार-बार पुनरावर्तित किया जा सकता है। उत्पादित कच्चे इस्पात का 42% पुनरावर्तित पदार्थ हो ता है।

अलौह धातुएँ (Aluminium recycling)

एल्यूमिनियम व्यापक रूप से पुनरावर्तित पदार्थों में से सर्वाधिक सक्षम है। एल्यूमीनियम को कसकर दबाकर छोटे-छोटे टुकड़ो में पीस लिया जाता है, अथवा गाठों के रूप में कुचल दिया जाता है। इन टुकड़ों या गाठों को पिघले एल्यूमीनियम का उत्पादन करने के लिए एल्यूमीनियम पिघलाने वाली एक भट्टी पिघलाया जाता हैइस चरण तक पुनरावर्तित एल्यूमीनियम की विशुद्ध एल्यूमीनियम की अलग से पहचान नहीं हो पाती है और दोनों के लिए ही आगे चलकर संसाधन एक समान ही होता है। इस प्रक्रिया से धातु में कोई परिवर्तन नहीं पैदा होता है; अत: एल्यूमिनियम अनिश्चितकाल तक के लिए पुनरावर्तित हो सकता है।

नए एल्यूमीनियम के संसाधन करने की तुलना में एल्यूमीनियम के पुनरावर्तन से 95% उर्जा के लागत की बचत होती है। यह केवल इस कारण कि पुनरावर्तित लगभग शुद्ध एल्यूमीनियम को पिघलाने में 600 °C तापमात्रा की आवश्यकता होती है, जबकि एल्यूमीनियम के अयस्क से खनिज एल्यूमीनियम के निष्कर्षण के लिए 900 °C तापक्रम की जरूरत पड़ती है। इतने ऊंचे तापमान तक पहुंचने के लिए अधिक से अधिक उर्जा की आवश्यकता होती है जिससे एल्यूमीनियम के पुनरावर्तन से ऊंचे पर्यावरणीय लाभ की ओर पहुंचा जाता है। अमेरिका प्रतिवर्ष प्रचुर परिमाण एल्यूमीनियम फेंक देते है ताकि पूरे वाणिज्यिक हवाई बड़े का पुनर्निर्माण कर सके इसके अलावा एक एल्यूमीनियम के पात्र के पुनरावर्तन से बचाई गई उर्जा एक टेलीविज़न-सेट को तीन घंटे तक चलाने के लिए काफी है।

काँच (Glass Recycling)

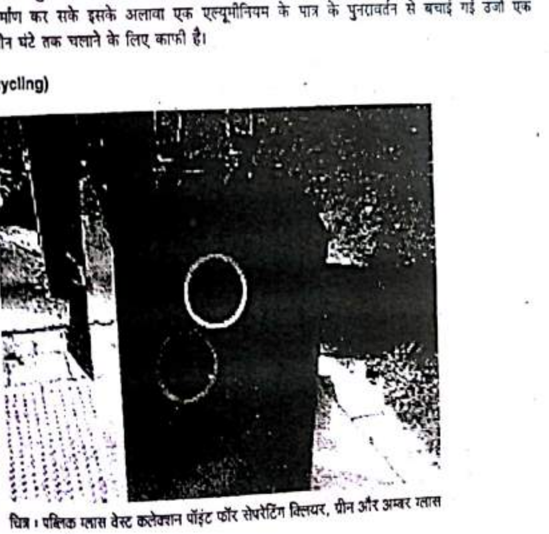

चित्र । पब्लिक ग्लास वेस्ट कलेक्शन पॉइंट फॉर सेपरेटिंग क्लियर, ग्रीन और अम्बर ग्लास

नुक्कड़ों पर रखे कूड़ेदानों से कांच की बोतलें और मर्तबान (जार कंटेनर) इकट्ठे कर संग्रह करने वाले ट्रक तथा बोतल-बैंकों में एकत्रित कर लिए जाते है जहां कांच को रंगों के वर्गीकरण के अनुसार छांट कर अलग-अलग कर लिया जाता है।टूटे-फूटे कांच के टुकड़ों को कांच के पुनरावर्तन संयंत्र में ले जाया जाता है जहां इसकी शुद्धता पर नजर रखी जाती है और मिलावट की गंदगियों को हटा दिया जाता है। कांच के टुकड़ों को कुचल दिया जाता है और कच्चे माल के एक मिश्रण के साथ मिलाकर पिघलाने वाली भट्टी मे डाल दिया जाता है।तब इसे यांत्रिक तरीके से हवा से फुलाकर अथवा पिघला कर नए आकार के जीरों या बोतलों में गाढ़ा जाता है। कांच के टूटे-फूटे टुकड़ों का भी इस्तेमाल समग्र और ग्लासफॉल्ट के रूप में निर्माण उद्योग में किया जाता है। ग्लासफाल्ट सड़क पर बिछाया जाने वाला एक पदार्थ है जिसमें पुनरावर्तित कांच का 30% शामिल है। कांच का पुनरावर्तन अनिश्चितकाल तक किया जा सकता है जैसा कि जब इसका पुनसंसाधन किया जाता है इसकी संरचना नष्ट होकर विकृत नहीं होती,

रंग (Paint recycling)

रंग अक्सर सरकार परिचालित घरेलू खतरनाक अपशिष्ट की सुविधाओं से इकट्ठा किया जाता है। वहां से, इसे पेंट पुनर्चक्रण संयंत्रों में ले जाया जाता है, जहां गुणवत्ता के आधार पर अलग किया जाता है। रंग के उपयोग जिन्हें पुन: संसाधित नहीं किया जा सकता और फिर से बेचा नहीं जा सकता पुनर्चक्रण द्वारा इसकी भिन्नताएं निर्धारित होती हैं।

काग़ज़ (Paper recycling)

कागज का पुनरावर्तन इसे लुग्दी बनाकर तथा नई कटाई वाली लकड़ी की लुग्दी के साथ मिलाकर किया जा सकता है। जैसा कि पुनरावर्तन की प्रक्रिया कागज़ के रेशों को तोड़ती जाती है, अत: जितनी बार कागज का पुनरार्वन होता अहि, इसकी गुणवत्ता में कमी आती जाती है। इसका मतलब यह है कि या तो ऊंचे प्रतिशत में नए रेशों को जरुर जोड़ा जाना चाहिए या कागज को नीची गुणवत्ता वाले उत्पादों में पुनरावर्तित कर देना चाहिए। कोई लेखन या कागज पर रंग सर्वप्रथम डीइंकिंग के द्वारा हटा दिया जाना चाहिए, जो फिलर्स, मिटटी, तथा रेशों (फाइबर) के टुकड़ों को भी हटा देता है।

आज तो लगभग सभी कागज पुनरावर्तित किए जा सकते है, किन्तु ऐसे भी प्रकार के कागज है जिन्हें दूसरों की तुलना में पुनरावर्तित करना कठिन है। कागज जो प्लास्टिक कोटेड होते है या एल्यूमीनियम फॉयल, तथा ऐसे कागज़ जिनपर मोम का लेपन होता है, पेस्टेड या गोंद लगे होते हैं उनका आमतौर पर पुनरावर्तन नही होता है क्याकि यह प्रक्रिया काफी महंगी है। उपहार-सामग्रियों को लपेटने वाले कागज भी अपनी खराब गुणवत्ता के कारण पुनरावर्तित नहीं हो सकते।

कभी -कभी पुनरावर्तक अख़बारों से चमकीले आवेषण को हटा देने को कहते है क्योंकि वे एक अलग ही प्रकार के कागज़ है। चमकीले आवेषणों पर मिट्टी की एक भारी परत होती है जिसे कुछ कागज़ की मिलें स्वीकार नही करती हैं। पुनरावर्तित कागज़ की लुग्दी से अधिकांश मिट्टी को हटा दिया जाता है जिसका जरुर ही निपटान कर दिया कीचड़ के रौंप में किया जाना जाहिए। अगर परत चढ़े कागज़ (कोटेड पेपर) मिट्टी के वजन के कारण 20% अधिक है तो चमकदार कागज़ के प्रति टन से 200 किलोग्राम से भी अधिक कीचड़ और 800 किलोग्राम से भी कम फाइबर पैदा होगा।

प्लास्टिक (Plastic Recycling)

प्लास्टिक का पुनरावर्तन स्क्रैप अथवा अपशिष्ट प्लास्टिकों को उबारने तथा पदार्थ को उपयोगी उत्पादों में पुनर्संसाधित करने की प्रक्रिया है। कांच अथवा धातु के सामानों से तुलना की जाय तो प्लास्टिक को अपूर्व चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। प्लास्टिक के प्रकारो की विशाल संख्या होने के कारण, प्रत्येक प्रकार के पास रेजीन का पहचान कोड़ होता है और पुनरावर्तन से पूर्व उन्हें अवश्य ही छांट कर अलग लेना चाहिए। हो सकता है यह महंगा हो, क्योंकि वैदयुतिक चुम्बकों का उपयोग कर धातुओं को जब अलग-अलग किया जा सकता है ऐसी कोई 'आसान छटाई' वाली क्षमता-संपन्न उपाय या साधन प्लास्टिक के लिए उपलब्ध नहीं हैं। इसके अतिरिक्त, पुनरावर्तन के लिए बोतलों से लेबलों को हटा दी जाने की जरूरत नहीं होती लेकिन ढक्कन अक्सर अलग तरह के अप्रवर्तनीय प्लास्टिक से बने होते हैं।

Scanned by CamScanner

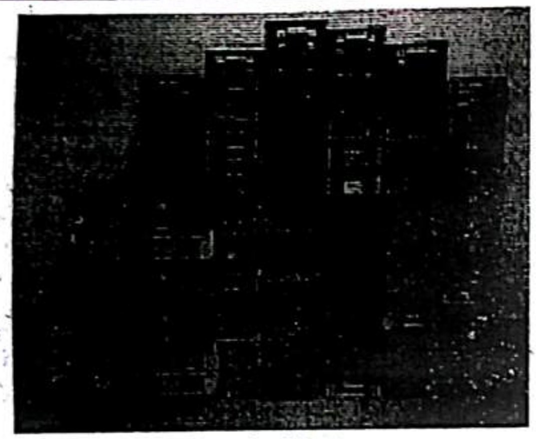

चित्र : प्लास्टिक रिसिंग खांचा

विभिन्न प्रकार के प्लास्टिक के सामानो मे पदार्थो को अलग-अलग पहचान कर पाने के सहायतार्थ छ: आम प्रकार के पुनरावर्तनीय प्लास्टिक रेज़िन्स को पहचान के लिए 1 से 6 तक के रेज़िन्स आइडेंटीफिकेशन कोड नंबर्स आवंटित किए गए हैं। प्रत्येक रजीन कोड को सम्मिलित करने हुए मानकीकृत प्रतीक उपलब्ध है।

वस्त्र (Textile recycling)

कपड़े या वस्त्र के पुनरावर्तन का ख्याल आते ही यह अवश्य समझ लेना चाहिए कि यह किस पदार्थ से बना हैं। अधिकतर कपड़े रुई (प्राकृतिक तरीके से स्वत: सड़नशील पदार्थ) एवं सिंथेटिक प्लास्टिक के संयोजन हैं। कपड़े की संरचना इसके टिकाउपन और पुनरावर्तन की पद्धति को प्रभावित करेगी।

श्रमिक एकत्रित कपड़ो को छांटते और अच्छी क्वालिटी के वस्त्रों तथा जूतों को जिनका दोबारा इस्तेमाल हो सकता या जो पहने जा सकते हैं, उन्हें अलग करते हैं। ऐसी सुविधाओं को विकसित देशों मे विकासशील देशों तक या तो दान की खातिर या सस्ती कीमतों पर बेच दिया जाने के लिए मुहैया करने की प्रवृति है। कई अंतर्राष्ट्रीय संगठन इस्तेमाल किए जा चुके वस्त्रों को दान-स्वरूप इकट्ठा करते हैं और उन्हें तीसरी दुनिया के देशो को दान में दे देते है। पुनरावर्तन की इस आदत को प्रोत्साहित किया जाता है क्योंकि यह अवांछित को कम करने मे मदद देती है साथ ही साथ जरूरत मंदो को वस्त्र मुहैया कराती है। नस्ट हो गए वस्त्रों को आगे चलकर ग्रेडो मे छांट लिया जाता है जिनसे औद्योगिक झाड़न-पोंछन के कपड़े बनाए जाते हैं तथा कागज़ के विनिर्माण मे या फाइबर उद्धार के लिए उपयोगी सामग्री मे तथा भराई के उत्पादो के उपयोग मे लाते हैं। अगर टेक्सटाइल के पुनर्संसाधक संयंत्र जीले अथवा सड़े-गले कपड़े पाते हैं, हालांकि इन्हें फिर भी जमीन की भराई में निपटा दिया जाता है, क्योंकि छांटन इकाइयों में धोने और सुखाने की सुविधांए मौजूद नहीं हैं।

रेशों के पुनरुद्धार की मिलें, फाइबर के प्रकार और रंग के आधार पर वस्त्रो को छांटती हैं। रंग की छंटाई पुनरावर्तित वस्त्रों को फिर से रंगने की आवश्यकता को कम करती है। वस्त्रों को "घटिया" फाइबर में कसकर बांध दिया जाता है और दूसरी चयनित फाइबरों के साथ एकसाथ मिला दिया जाता है पुनरावर्तित सूते के अंतिम उपयोग के इरादे पर निर्भर होकर, एकसाथ मिला हुआ यह मिश्रण धुनकर साफ़ कर दिया जाता है तथा बुनाई सिलाई के लिए काटकर तैयार कर दिया जाता, इन फाइबरों संकुचित कर गद्दे का उत्पादन भी किया जाता है। इन कपड़ों को गद्दों में भरने वाले उद्योगों के लिए कसकर दबाकर भेज दिया

जाता है जो गाड़ियों के इन्सुलेशन मे भरने वाली सामग्री के रूप में छत के फेल्ट्स, लाउडस्पीकर के कोन, पैनेल की लाइनिंग तथा फर्नीचर की पैडिंग के काम में लाया जाता है।

लकड़ी (T mber Recycling)

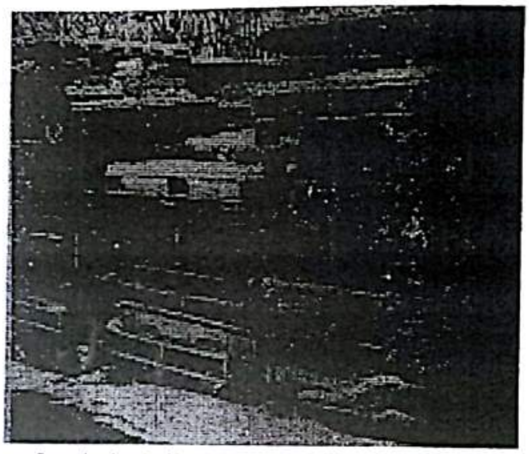

चित्र : स्टैक ऑफ वुडेन पैलेट्स पुनः प्रयोग या रिसाइकिलिंग का इंतजार कर रहा हैं

पर्यावरण की दृष्टि से उपयोगी उत्पाद होने की अपनी छवि के कारण लकड़ी का पुनरावर्तन लोकप्रिय हो गया है, उपभोक्ताओ के इस आत्मविश्वास के साथ कि पुनरावर्तित लकड़ी की खरीद से हरी लकड़ी की मांग में कमी आएगी और अंततोगत्वा पर्यावरण लाभान्वित होगा। ग्रीनपीस भी पुनरावर्तित लकड़ी को पर्यावरण के लिए मित्रवत उपयोगी उत्पाद की दृष्टि से देखता है उनकी अपनी वेबसाइट पर इसे लकड़ी के पसंदीदा बेहतर स्रोत के रूप मे हवाला देते हुए निमार्ण के उत्पाद के उत्पाद के रूप मे पुनरावर्तित लकड़ी का आगमन उभरते हुए उद्योग तथा जंगल की कटाई एवं लकड़ी मीलों को बढ़ावा देने तथा पर्यावरण के प्रति मित्रवत सहयोग के अभ्यास को अपनाने की दिशा में महत्वपूर्ण है।

लकड़ी का पुनरावर्तन एक ऐसा विषय है जिसने हाल के वर्षों मे हमारे जीवन मे सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका अपना ली है।हालांकि, समस्या यह है कि, यद्यपि कई स्थानीय अधिकारी पुनरावर्तन के विचार को पसंद तो करते हैं, लेकिन वे पूरी तरह इसका समर्थन नहीं करते है। अनगिनत उदाहरणों मे से एक जो समाचारों की सुर्खियों में बना रहा वह सचमुच लकड़ी के पुनरावर्तन की अवधारणा है जो शहरो में बढ़ती जा रही है। उदाहरण के लिए लकड़ी के पुनरावर्तन, पेड़ों एवं अन्य स्रोतों के नाम लिए ज सकते हैं।

अन्य तकनीकें

कई दूसरी सामग्रियां भी आमतौर पर पुनर्रर्तित की जा सकती हैं, अक्सर एक औद्योगिक स्तर पर, जहाज को तोड़ना एक ऐसा उदाहरण है जो पर्यावरणीय, स्वास्थ्य, तथा सुरक्षा के जोखिमों से उस अंचल के लिए जुड़ा है जहां यह ऑपरेशन (कार्य संचालन) संपादित होता है, इन सब विचारों में संतुलन एक पर्यावरणीय न्याय की समस्या है।

टायर का पुनरावर्तन भी आम बात है। इस्तेमाल में आ चुके टायरों को एसफॉल्ट के साथ मिलाकर सड़क की सतहों पर बिछाने में अथवा रबड़ के नकली घास-पात बनाने के काम में आ सकते है जो खेल के मैदानों की सुरक्षा के लिए व्यवहृत

Scanned by CamScanner

होते हैं। इनका इन्सुलेशन एवं ताप के अवशोषण निर्गमन सामग्रियों में खासकर मिट्टी के जहाज कहे जाने वाले निर्मित घरों में अक्सर इस्तेमाल भी होता है।

प्रश्नावली

1. आपदा (Disaster) क्या है? आपदा-प्रबन्धन नियोजन के प्रमुख पहलुओं को प्रस्तुत करो। (U.P. B.T.E. 2008)
2. प्राकृतिक तथा मानव-जनित आपदाओं का संक्षिप्त वर्णन करो।
3. आपदा प्रबन्धन के प्रमुख प्रकार कौन-कौन-से हैं? प्रत्येक के बारे में समझाइये।
4. आपदा प्रबन्धन के घटकों के बारे में आप क्या जानते हैं? बताइये।
5. आपदा प्रबन्धन के प्रमुख प्रभाव कौन-कौन से हैं? प्रत्येक के बारे में संक्षेप में लिखो।
6. भूकम्प क्यों आते हैं? इसे कैसे मापेंगे? इसकी विनाशकारी शक्ति के बारे में लिखो।
7. भूकम्प की विनाशकारी शक्ति को कम करने हेतु बरती जाने वाली प्रमुख सावधानियाँ कौन-कौन-सी हैं? लिखिये।
8. बाढ़ क्या होती है? बाढ़ की विनाशकारी शक्ति के बारे मे लिखो।
9. भूस्खलन से आप क्या समझते हैं? इसकी विनाशक शक्ति के बारे में लिखो।
10. भवनों को भूस्खलन से होने वाली क्षति से बचाने के उपाय क्या हैं?
11. सूखा क्या है? समझाइये।
12. चक्रवात क्या है? ये किस प्रकार आते हैं? भारत में चक्रवात प्रभावित क्षेत्रों के बारे में बताइये।
13. चक्रवातों से भवनों को क्षतिग्रस्त होने से बचाने के उपाय क्या हैं? लिखो। (B.T.E. 2002)
14. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखो—
    (i) भोपाल गैस त्रासदी (U.P. B.T.E. 2007)
    (ii) भुज का भूकम्प (U.P.B.T.E. 2007)
    (iii) हाल में हुए मुम्बई की लोकल ट्रेनों में विस्फोट (U.P. B.T.E. 2007)
15. आपदा प्रबन्धन पर राष्ट्रीय नीति के उद्देश्य तथा प्रमुख विशिष्टियाँ स्पष्ट करें। (U.P.B.T.E. 2007, 14)
16. आपदा पद स्पष्ट करें। आपदा के कारणों का वर्णन करें। (U.P.B.T.E. 2007)
17. 1999 में आए उड़ीसा के महाचक्रवात से होने वाली हानि स्पष्ट करो। (U.P.B.T.E. 2007)
18. असम में बाढ़ आने के प्रमुख कारण बताइये। (U.P.B.T.E. 2008)
19. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो—
    (i) पर्यवेक्षणीय सेटेलाइट (ii) बेतार का तार सैट
    (iii) फैक्स (iv) आपदा प्रबन्धन योजना (U.P.B.T.E. 2009)
    (v) घोर विपत्ति योजना (U.P.B.T.E. 2010) (vi) रेडियोएक्टिव घटना (U.P.B.T.E. 2010)
    (vii) ब्ल्यू बेबी बीमारी (U.P.B.T.E. 2010) (viii) स्वाइन फ्लू
    (ix) सुनामी (U.P.B.T.E. 2011, 17) (x) सूचना प्रसार (B.T.E. 2015)
20. प्राकृतिक आपदा से क्या तात्पर्य है? समझाइये। (U.P.B.T.E. 2009)
21. सुनामी आपदा पर अपने विचार लिखिये। (U.P.B.T.E. 2010, 12, 13, 15, 17)
22. राष्ट्रीय आपदा प्रबन्धन फ्रेम वर्क के प्रमुख फीचर तथा प्रकार्य लिखो। (U.P.B.T.E. 2012, 14)
23. आपदा की परिभाषा लिखो। यह कैसे सृजित होती है? उसके जोखिम व उसकी विध्वंसक शक्ति स्पष्ट करो। (U.P.B.T.E. 2012, 17)

24. मुम्बई में घटित मानव रचित आपदा की केस स्टडी लिखिए। (U.P.B.T.E. 2011, 14, 17)
25. आपदा प्रबन्धन योजना क्या है? (B.T.E. 2009)
26. आपदा प्रबन्धन नियोजन के प्रमुख पहलुओं पर चर्चा करें। (U.P.B.T.E. 2008)
27. भुज के भूकम्प से आप क्या समझते हो? (B.T.E. 2007)
28. राज्य आपदा प्राधिकरण के कर्तव्य एवं अधिकारों की विवेचना कीजिए। (B.T.E. 2013, 17)
29. Cyclones की कार्य प्रणाली (Functioning) पर टिप्पणी लिखिए। (B.T.E. 2013)
30. आपदा की उत्पत्ति, कारण तथा जोखिम पर टिप्पणी लिखिए। (B.T.E. 2014)
31. मुम्बई में आतंकवादियों द्वारा 26/11/2008 में किये गये हमले की केस स्टडी लिखें। (B.T.E. 2014, 16)
32. आपदा न्यूनीकरण एवं बचाव का महत्व स्पष्ट करें। (B.T.E. 2015)
33. भोपाल गैस ट्रेजेडी आपदा की केस स्टडी लिखें। (B.T.E. 2016)
34. भूमण्डलीय तापन से क्या अभिप्राय है? इसके प्रभाव भी लिखें। (B.T.E. 2007)
35. ओज़ोन परत के अवक्षय के क्या कारण है? दीर्घकाल में ऐसे अवक्षय के फलस्वरूप होने वाले परिणामों को स्पष्ट कीजिये। (B.T.E. 2011, 12, 13, 14)
36. ग्रीन बिल्डिंग से क्या समझते है?
37. Eco Friendly पदार्थों पर टिप्पणी लिखिए।
38. Recycling को सविस्तार समझाइए।
39. ग्रीन हाउस गैसों पर टिप्पणी लिखिए।

❑

Scanned by CamScanner

ODD SEMESTER EXAMINATION (U.P.), DECEMBER–2019

पर्यावरणीय अध्ययन

(Environmental Studies)

Code : 2100

Third Semester

Time : 2.30 Hours] **[Maximum Marks : 50**

Notes :

(i) Attempt all questions.

(ii) Students are advised to specially check the Numerical Data of question paper in both versions. If there is any difference in Hindi translation of any question, the students should answer the question according to the English version.

(iii) Use of Pager and Mobile Phone by the students is not allowed.

1. निम्नलिखित में से किन्हीं दो भागों का उत्तर दीजिए— [2 × 5 = 10]

(अ) वनों की कटाई के मुख्य कारण क्या हैं?

(ब) भारत सरकार द्वारा शुरू किए गए जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना (NAPCC) के विशिष्ट क्षेत्र क्या हैं?

(स) "पर्यावरण प्रदूषण एक लाइलाज बीमारी है।" समझाइये।

2. निम्नलिखित में से किन्हीं दो भागों का उत्तर दीजिए— [2 × 5 = 10]

(अ) वायु प्रदूषण का मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव।

(ब) क्यों भिगोना (Soiling) और संक्षारण वायु प्रदूषण की छिपी हुई लागत है? समझाइये।

(स) बी० ओ० डी० को परिभाषित कीजिए। बी० ओ० डी० जल प्रदूषण को कैसे निर्धारित करता है?

3. निम्नलिखित में से किन्हीं दो भागों का उत्तर दीजिए— [2 × 5 = 10]

(अ) व्यक्तिगत संदूषक मानव स्वास्थ्य को कैसे प्रभावित करते हैं?

(ब) ई-अपशिष्ट प्रदूषण, स्पष्ट करें।

(स) किस स्तर का शोर ध्वनि प्रदूषण माना जाता है? भारत में "ध्वनि प्रदूषण का स्तर" या "ध्वनि दाब स्तर" किस सीमा तक स्वीकार्य है?

4. निम्नलिखित में से किन्हीं दो भागों का उत्तर दीजिए— [2 × 5 = 10]

(अ) हम पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 को एक छत्र (Umbrella) अधिनियम के रूप में क्यों संदर्भित करते हैं?

(ब) राष्ट्रीय हरित आधिकरण के कार्य।

(स) ग्रीन हाऊस गैसें ग्लोबल वार्मिंग का कारण कैसे बनती हैं?

5. निम्नलिखित में से किन्हीं दो भागों का उत्तर दीजिए— [2 × 5 = 10]

(अ) ओजोन के क्रमिक ह्रास के प्रमुख कारण क्या हैं?

(ब) कौन सी गैसें अम्ल वर्षा का कारण बनती हैं? अम्लीय वर्षा एक परेशानी क्यों है?

(स) क्या रीसाइक्लिंग वास्तव में पर्यावरण के लिए फायदेमन्द है?

O

Scanned by CamScanner